मातृकाभेदतन्त्रम्

हिन्दी व्याख्यासहित

डॉ. ओमप्रकाशमिश्र शास्त्री

शिव संस्कृत संस्थान
वाराणसी

मातृकाभेदतन्त्रम्

हिन्दी व्याख्या सहित

शिव संस्कृत ग्रन्थमाला
१३

मातृकाभेदतन्त्रम्

हिन्दी व्याख्या सहित

हिन्दीटीकाकार:
रघुनाथ दूबे
एम. ए. (संचालक)
उच्च नक्षत्रीय ज्योतिष अनुसन्धान केन्द्र
फ्रेजर रोड, पटना

सम्पादक:
ओमप्रकाश मिश्र
एम. ए., बी. एड., आचार्य (साहित्य, योगतन्त्र)

शिव संस्कृत संस्थान, वाराणसी
२००५

प्रकाशक :
शिव संस्कृत संस्थान
(प्राचीन भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के प्रकाशक तथा वितरक)
कमला नगर, पाण्डेयपुर, वाराणसी (उ. प्र.)
सम्पर्क-सूत्र : ९४१५९८९०६६

अन्य प्राप्ति स्थान :
विश्वभारती संस्कृत संस्थान
(सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, पूर्वी गेट के सामने)
जगतगंज, वाराणसी-२२१ ००२
सम्पर्क-सूत्र : ९४५०५४०१३५

संस्करण सन् २००५

© प्रकाशकाधीन

मूल्य : 250/-

अक्षर संयोजन :
राज ग्राफिक्स
नाटी इमली, वाराणसी
मोबाइल : ९९३५६८५४२८

Siva Sanskrita Granthamala
13

MĀTṚKĀBHEDA-TANTRAM

With Hindi Translation

Translated by :
Raghu Nātha Dubey
Controller
Stellers-Astrological Research Institute
Fraser Road, Patna

Edited by :
Om Prakash Mishra
M. A., B. Ed., Āchārya (Sahitya, Yogatantra)

SIVA SANSKRIT SANSTHAN, VARANASI
2005

Publisher :
SIVA SANSKRIT SANSTHAN
(Oriental Publisher's & Distributors)
Kamala Nagar, Pandeypur, Varanasi
☎ : 9415989066

Also Can be Had of
VISHWABHARATI SANSKRIT SANSTHAN
(Opp. of Sampurnanand Sanskrit University, East Gate)
Jagatganj, Varanasi-221 002
☎ : 9450540135

© Publisher

Edn. 2005

Price 250/-

Photo Composing :
Raj Graphics
Nati Imli, Varanasi
Mobile : 9935685428

समर्पण

श्री विद्‌या के अनन्य उपासक
श्रीराम सरस्वती को
जिनके सान्निध्य में तन्त्र का
व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त किया
उन्हें ही स्मृति रूप से
सादर समर्पित ।

— रघुनाथ दूबे

सम्पादकीय

तन्त्र प्राचीन भारत की एक अमूल्य निधि है, जिस निधि ने पाश्चात्य जगत को सदैव प्रभावित किया है । तन्त्र वेद की तरह अति प्राचीन है ऐसा संकेत विभिन्न तन्त्र ग्रन्थों के अवलोकन से मिलता है । स्व. पूज्य महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज जी ने भी अपनी पुस्तक भारतीय संस्कृति एवं साधना के प्रथम भाग में इसका विस्तृत उल्लेख किया है । युगों के अनुसार हर शास्त्रों की अपनी एक विशेष मान्यतायें रही हैं । जहाँ सतयुग में श्रुति की मान्यता थी तो त्रेता में स्मृति की । उसी तरह द्वापर में जहाँ पुराणों की मान्यता थी तो कलिकाल में तन्त्र की मान्यता है ।

तन्त्र एक व्यवहारिक विज्ञान है जिसे साधना-उपासना के कठोर पथ पर चलकर पूर्ण समर्पित भावना की वैशाखी पर चढ़कर ही पहुँचा जा सकता है । यह जनसामान्य के मनोरंजन की वस्तु कदापि नहीं हो सकती है । तन्त्र में इसी मानव शरीर को ब्रह्माण्ड मानकर इसकी ही उपासना का उल्लेख किया गया है । बिना भावना और समर्पण के सिद्धि कदापि नहीं मिल सकती; क्योंकि भावना ही सिद्धि का एकमात्र सुलभ मार्ग है । योग की तरह तान्त्रिक साधना से भी कुण्डलिनी जागृत होती है यही तान्त्रिक साधना की नींव है, जिसके आधार पर साधकगण अपने परम लक्ष्य की प्राप्ति में अग्रसर होते हैं । तान्त्रिक साधना एक कठिन और अत्यन्त दुरुहमार्ग है जिसमें पग-पग पर खतरे की सम्भावना सदैव बनी रहती है । योग्य गुरु के अभाव में यह एक खतरनाक खेल साबित होता है जो मृत्यु तक देने में सक्षम है । इसलिए योग्य गुरु के निर्देश में ही तान्त्रिक साधना करनी चाहिये ।

बीच के काल खण्ड में तन्त्र अपने मूल लक्ष्य को छोड़कर अत्यन्त घृणित रूप ले चुका था, जिसके कारण इसे समाज में यह बहिष्कृत वस्तु समझा जाता रहा । इसके मूल साहित्य भी यत्र-तत्र बिखरे हुये थे जिसके कारण इसके सम्बन्ध में जन-सामान्य वर्ग में यह लोकप्रिय नहीं हो सका । आर्थर एवलन (सर जॉन वुड्रफ) जैसे महामनीषि ने इसके उद्धार का व्रत लेकर तमाम तान्त्रिक साहित्य को प्रकाशित कराने का प्रयास किया । आज का तान्त्रिक साहित्यिक जगत आर्थर एवलन को तन्त्र शास्त्र का आधुनिक पितामह मानने के लिए बाध्य है । इसके बाद अन्य कई प्रकाशन संस्थानों से तान्त्रिक साहित्य के प्रकाशन की अविरल धारा प्रवाहित हुयी जो आज भी प्रवाहित हो रही है ।

सदैव से ही शक्ति उपासना का मूल स्रोत तान्त्रिक उपासना ही रहा है जिसे सभी ने अक्षरश: स्वीकार किया है । आचार्य महिधर स्वयम् वैष्णव होते हुए भी मन्त्र महोदधी की रचना किये तो आचार्य अभिनव गुप्त शैव उपासक होते हुए भी श्री तन्त्रालोक की रचना की, जिसे तन्त्र का वेद माना जाता है । ऐसे कई अन्य मतों के उपासक भी तान्त्रिक साहित्य की रचना में लीन रहे ।

मातृकाभेद तन्त्र शिव तथा शक्ति दोनों की ही उपासना का सम्मिलित रूप है जिसे हम अनुवाद सहित देवनागरी लिपि में प्रथम बार प्रकाशित कर रहे हैं । पूर्व में यह बंगाक्षर में

कोलकता से प्रकाशित हो चुका है। सर जे. ए. स्काटरमैन ने भी आंग्ल भाषा में इसे प्रकाशित करने की योजना बनायी थी पर लगता है कि असमय में ही काल-कलवित हो जाने के कारण से उनका यह प्रयास मात्र कल्पना ही रह गया। इसके अतिरिक्त आज से साठ वर्ष पूर्व यह कश्मीर संस्कृत सिरीज से भी प्रकाशित हो चुका है पर इसकी प्रति अब सामान्य रूप से उपलब्ध नहीं है। इसके बाद वाराणसी से स्व. डॉ. रामकुमार राय भी सन् १९८९ ई. में इसे प्रकाशित किये, पर वह हिन्दी अनुवाद सहित न होकर मूल मात्र था जिसकी भूमिका अंग्रेजी में लिखी गयी है।

हमारी सम्पूर्ण उपासना पद्धति (वर्णाक्षरों पर) मातृकाओं पर ही आधारित है। पूर्व में अक्षर ब्रह्म या शब्द ब्रह्म की उपासना से ही परमब्रह्म या परमशक्ति की उपासना की जा सकती है। बिना अक्षरों के या बिना शब्दों के उपासना पद्धति की कल्पना ही नहीं की जा सकती। मातृका के सम्बन्ध में कहा गया है—

Words are not mere sounds as they ordinary seem to be. They have a Subtle and intellectual form within the internal sources from which they envolve is calm and serene eternal and imperishable the real for Wāk (वाक्) as opposed to enternal sounds lies for beyond. The range for ordinary preception. It requires a great deal of Sādhana (साधना) to have glimps of the purest form of speech. The Ṛka (ऋक) to which Patanjali (पतंजलि) has refered, bears strong divine to the fact. Wāk (वाक्) said to reveal her divine self only to those who are so trained as to understand the read nature (spiritual out look of Sankrit Grammer by P. C. Chakrabarty.— (journal of departmental Letter Calcutta University-1934.)

पाठकों, भक्तों एवं उपासकों के लाभार्थ मातृका स्तोत्र भी दिया गया है।

मातृकाभेदतन्त्र के हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करने का प्रथम श्रेय **शिव संस्कृत संस्थान, वाराणसी** को ही है। इस पुस्तक के अनुवाद के क्रम में डालटनगंज, झारखण्ड निवासी डॉ. डी. डी. मिश्रा, बी. ए. एम. एस., एम. डी., पी-एच. डी., साहित्याचार्य, बी. ए., सेवानिवृत्त प्राचार्य आयुर्वेद महाविद्यालय, जगन्नाथपुरी का भी आंशिक सहयोग प्राप्त हुआ है, जिसके लिये हम उनके आभारी हैं। समयाभाव और वृद्धावस्था के कारण अनुवाद के क्रम में मात्र तीसरे अध्याय तक ही उनका सहयोग मिला पर वे हमेशा हमें प्रोत्साहन एवं अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देते रहे।

मातृकाभेदतन्त्र का अनुवाद कैसा है इसका निर्णय तो स्वयं पाठकगण ही करेंगे। यदि अनुवाद में किसी भी प्रकार त्रुटियाँ हो तो सभी विज्ञ पाठकगण हमें सूचित करेंगे ताकि अगले संस्करण में इसे दूर किया जा सके।

विषय-प्रवेश

सम्पूर्ण मातृकाभेदतन्त्र चण्डिका शंकर (शिव-पार्वती) संवाद रूप में १४ पटलों में विभक्त है। इस तन्त्र में सोना-चाँदी बनाने का उपाय, सन्तानोत्पत्ति नियम और कुण्डलिनी ही सारे भोगों को भोगती है, जीव नहीं ऐसा ही विचार प्रगट किया गया है। भोग से ही योग और योग से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है ऐसा ही विचार इस तन्त्र के द्वारा प्रगट किया गया है। देह के भीतर स्थित कुण्डों के सम्बन्ध में भी इस तन्त्र में विस्तृत जानकारी दी गयी है। इस तन्त्र में भगवान् शिव के निर्माल्य में अग्राह्यता का हेतु तथा वैदिक रीति से ही शिव पूजन की प्रधानता दी गयी है। मद्यपान की प्रशंसा के साथ ही साथ मद्य के गन्ध को दूर करने की विधि और उसके शोधन के सम्बन्ध में भी इसमें पूर्ण विवरण दिया गया है। पारद से शिव लिङ्ग का निर्माण, पारद भस्म के निर्माण की प्रक्रिया एवं पारद भस्म की विशेषता आदि रसायनिक प्रक्रियाओं का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। शक्ति उपासना के क्रम में सप्तशती की पाठ-विधि, शक्तिरूपी गुरु कवच, शक्तिरूपी गुरु स्तोत, त्रिपुरा के मन्त्र, पूजन एवं आराधना विधि चामुण्डा के मन्त्र, पूजन एवं आराधना विधि के साथ ही साथ त्रिपुर सुन्दरी के मन्त्र एवं उपासना विधि पर भी इसमें विशेष बल दिया गया है तो वहीं पर नानाप्रकार से निर्मित शिवलिङ्ग पूजन और उसके माहात्म्य के साथ ही साथ वैदिक रीति से शिवपूजन की प्रधानता ही इस ग्रन्थ की अपनी एक अलग विशेषता है।

संक्षेप में प्रति पटल में प्रतिपादित विषयों का विवेचन किया जा रहा है।

प्रथम पटल में २३ श्लोक है। इस पटल में सम्बल (सिंगरफ) को शुद्ध करने की विधि के साथ पारा निर्माण की विधि का वर्णन भी किया गया है। इस अध्याय में पारा से चॉदी निर्माण की विधि का भी उल्लेख किया गया है जो मूलत: एक रासायनिक प्रक्रिया है एवं पूर्णत: आयुर्वेद का अङ्ग है एवं औषधि निर्माण की भी प्रक्रिया है। इसी पटल में मद्य (शराब) को गन्धहीन करने की प्रक्रिया के साथ ही साथ गन्धहीन करने के लिये मन्त्रों का भी वर्णन किया गया है।

दूसरे पटल में २२ श्लोक है। इस पटल में मणिपुर, नाभिपद्म और कुण्डलिनी आदि का वर्णन तथा मानव शरीर में इसके सञ्चार की प्रक्रिया के साथ

ही साथ सन्तानोत्पत्ति नियम, मानव शरीर में वीर्य की स्थिति और समागम के बाद गर्भ की वृद्धि आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है । यह मूलत: कामशास्त्र (Sexology) का विषय है जो शिव-पार्वती संवाद रूप में वर्णित है ।

तीसरे पटल में ४५ श्लोक है । तीसरे पटल में मानव जीवन में भोगों की अनिवार्यता और कुण्डलिनी ही सारे भोगों को भोगती है जीव नहीं, ऐसा ही विचार प्रकट किया गया है । भोग से ही योग और योग से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है । इस कारण से भोग मानव जीवन का एक अत्यन्त आवश्यक अंग है ऐसा विचार इस ग्रन्थ के द्वारा इस पटल में प्रकट किया गया है । इसी पटल में मद्यपान की प्रशंसा और ब्राह्मणों के लिये मद्यपान की अनिवार्यता पर विशेष रूप से जोर दिया गया है और इसकी विशेषता का वर्णन भी किया गया है । इस सम्बन्ध में चीनाचार तन्त्र के श्लोकों को उद्धरित कर मद्य-मांस और मछली आदि के शोधनविधि भी इस पटल में वर्णित है तथा इसकी प्रशंसा भी की गयी है । यह पटल मूलत: कौल तन्त्र का ही एक अङ्ग है, जिसे पूर्णत: गुप्त रखने का निर्देश इस पटल में दिया है ।

चौथे पटल में ३० श्लोक हैं । इस पटल में शिव की निर्माल्यता, जीवों का ८४ लाख योनियों में भ्रमण, मद्यपान से मुक्ति तथा महाशंख माला (मानव अँगुलियों की हड्डियों से निर्मित माला) से ही महाविद्या की उपासना का वर्णन किया गया है । महाकाल संहिता के गुह्य कालीखण्ड में भी मानव अँगुलियों के हड्डियों से निर्मित माला को ही महाशंख माला कहा गया है जिसकी विशेषता पर विशेष रूप से चर्चा की गयी है । कहा गया है कि महाशंख के माला से ही सभी महाविद्याओं की सिद्धि मिलती है । शक्ति उपासना में महाशंख की माला को ही सर्वोच्चता प्रदान की गयी है । इसी पटल में सुरा देवी की महिमा तथा उसकी तुलना गंगाजल और तुलसीदल से भी की गयी है तथा इसे सर्वश्रेष्ठ सिद्ध किया गया है । यह भी मूलत: कौल तन्त्र से ही सम्बन्धित पटल है ।

पाँचवें पटल में ४३ श्लोक हैं । इस पटल में पारद भस्म निर्माण की प्रक्रिया में शिवपूजन अर्थात् विशेष रूप से लिङ्गपूजन की अनिवार्यता पर जोर दिया गया है । कहा गया है कि बिना शिवलिङ्ग पूजन के और शिवमन्त्र जप के पारद भस्म का निर्माण कदापि नहीं किया जा सकता । इस पटल में तोडल तन्त्र में दिये गये विशेपरूप से लिङ्ग पूजन की विधि से ही पूजन करके मन्त्र जप के बाद ही पारद भस्म निर्माण का निर्देश दिया गया है । पारद भस्म निर्माण के क्रम में घृत कुमारी, काली तुलसी और स्त्रियों के मासिक धर्म वाले रक्त वस्त्र की उपयोगिता तथा

इसके द्वारा पारद शोधन की रासायनिक प्रक्रिया के साथ ही साथ स्वर्ण बनाने की विधि पर भी उपासनादि की महत्ता सिद्ध की गयी है । यह पटल मूलत: रासायनिक प्रक्रिया तथा शिवोपासना दोनों का ही सम्मिश्रण मात्र है ।

छठे पटल में ६९ श्लोक दिये गये हैं । इस पटल में समस्त रोगों से मुक्ति हेतु निर्दिष्ट उपायों का वर्णन किया गया है । इसमें सूर्य एवं चन्द्रग्रहण जैसे विषयों पर कामशास्त्र की प्रकिया में समागम पर विशेष जोर दिया गया है । शक्ति के ही बायें एवं दाहिने नेत्र में चन्द्र एवं सूर्यग्रहण निहित है ऐसा विचार इस पटल में किया गया है । इस पटल का एक भाग कामशास्त्र से सम्बन्धित है तो दूसरे भाग में चामुण्डा देवी के मन्त्र और उसकी उपासना विधि, पूजन और पंचतत्व (पाँच प्रकार से) से अर्घ्य देने का विधान बताया गया है । कहा गया है कि पञ्चतत्व से ही चामुण्डा देवी की उपासना करनी चाहिये और उसी से अर्घ्य आदि भी देना चाहिये तभी सिद्धि मिल सकेगी अन्यथा नहीं । कालिका देवी के मन्त्र पूजन एवं उपासना विधि के साथ ही साथ पञ्चतत्व से ही कालिसूक्त के द्वारा कालिका को अर्घ्य देने का निर्देश इस पटल में दिया गया है । यह भाग भी मूलत: कौल उपासना का ही अंग है । इसके तीसरे भाग में सप्तशती की विशेष पाठविधि तथा न्यास और ध्यानादि का वर्णन सांकेतिक रूप में दिया गया है और इसी की अनिवार्यता पर विशेष रूप से बल दिया गया है । इसके अतिरिक्त नवाक्षर मन्त्र जिसमें ६ वीज मन्त्र हैं इसी के जप पर विशेष रूप से बल दिया गया है । इस पटल में मूलत: शक्ति उपासना की अनिवार्यता को ही स्वीकार किया है ।

सातवें पटल में ६९ श्लोक है । इसके प्रथम भाग में साधनापथ के अग्रसर साधकों के प्रात: कृत्यादि कर्मों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है । दूसरे भाग में त्रिपुरसुन्दरी के मन्त्र, पूजन एवं उपासना पद्धति का वर्णन किया है और तीसरे भाग में साधना तर्पणादि कार्यों का पूर्णरूप से उल्लेख और इसकी अनिवार्यता पर बल दिया गया है । इस सन्दर्भ में भी शिवलिङ्ग पूजन की महत्ता को भी प्रकाश में डाला गया है । इसी पटल में शक्तिरूपी गुरु कवच और स्तोत्र भी दिये गये हैं, जो सामान्यरूप से किसी भी पुस्तकों में नहीं मिलते । कवच एवं स्तोत्र की महत्ता पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है तथा त्रिकाल सन्ध्या का अलग-अलग ध्यान भी दिया गया है । इसी अध्याय में विभिन्न प्रकार के शिवलिङ्ग निर्माण कर उसकी पूजन विधि तथा उससे प्राप्त फलों के साथ पार्थिव शिवलिङ्ग के पूजन की सर्वोच्चता पर प्रकाश डाला गया है । शिवलिङ्गों के प्रमाण के सम्बन्ध में भी

आवश्यक जानकारी दी गयी है । इसी पटल में गोबर, मिट्टी, बालू, लोहा, पीतल, ताँबा, चाँदी, सोना और अष्टधातु से निर्मित शिवलिङ्ग की उपासना एवं फल प्राप्ति को भी दर्शाया गया है तथा तोडल तन्त्रानुसार ही द्वारा षोडषोपचार लिङ्गपूजन पर बल दिया गया है । मूलत: यह पटल भी शिव-शक्ति दोनों की ही उपासना का ही अंग है ।

आठवें पटल में ३४ श्लोक है । इस पटल में शिवलिङ्ग की महत्ता विशेष रूप से पारद शिवलिङ्ग की सर्वोच्चता के साथ ही साथ पारद में त्रिदेवों की (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) उपस्थिति आदि का भी वर्णन किया गया है । इस कारण से पारद शिवलिङ्ग का निर्माण करके ही शिवलिङ्ग पूजन करने का निर्देश दिया गया है । पूजन के बाद षडक्षर शिवमन्त्र जपने का विधान भी इसी पटल में दिया गया है । इसी पटल में पार्थिवशिवलिङ्ग की उपासना तथा पूजन तोडलतन्त्र के ही निर्देशानुसार करने पर बल दिया गया है । पूजन एवं जप के बाद हवन, तर्पण और मार्जन आदि की अनिवार्यता को भी यहाँ दर्शाया गया है । राजसी पूजन के बाद ही पारद का शिवलिङ्ग निर्माण करना चाहिये ऐसा इस ग्रन्थ का निर्देश है । इस पटल में पारा से शिवलिङ्ग निर्माण एवं पारद भस्म बनाने की प्रक्रिया का विशद वर्णन है । मूलत: यह पटल रासायनिक प्रक्रिया और शिवपूजन दोनों का ही सम्मिलित रूप है ।

नवें पटल में ३१ श्लोक है । इस पटल में द्वादश पार्थिव शिवलिङ्ग बनाकर तोडल तन्त्र के निर्देशानुसार षोडषोपचार पूजन करने का निर्देश है । पूजन के बाद षडक्षर शिव मन्त्र जपने का निर्देश तथा पुन: षोडषोपचार पूजन के बाद ही पारद भस्म बनाने की प्रक्रिया पर जोर दिया गया है । इस पटल में पूजन, जप, हवन, तर्पण, मार्जन तथा बेलपत्र के द्वारा विशेष रूप से हवन करने का निर्देश भी दिया गया है और अन्त में हेलकी मन्त्र जपने का विधान कहा गया है । हेलकी मन्त्र के सम्बन्ध में कहीं कोई संकेत नहीं है और न यह मन्त्र किसी पुस्तक में ही देखने को मिलता है कि हेलकी मन्त्र क्या है? आगे की पंक्तियों में यह कहा गया है कि विश्वेश्वर ही इसकी रक्षा करते हैं । इस कारण से सम्भवत: षडक्षर शिवमन्त्र में ही ह्रीं क्रीं लगाकर सम्पुट करके ही शिवमन्त्र जपने का निर्देश हो । इसी कारण से ही यहाँ ह्रीं बीजमन्त्र से सम्पुटित षडक्षर मन्त्र जपने को कहा जा रहा है । इसी पटल में भस्म के गुणों पर भी प्रकाश डाला गया है । यह पटल भी रासायनिक प्रक्रिया का ही एक भाग है, जिसमें शिवोपासना भी सन्निहित हो गया है ।

दसवें पटल में २४ श्लोक है। इस पटल में गुरु की महत्ता एवं साधनासिद्धि के क्षेत्र में गुरु की भूमिका और उसकी अनिवार्यता पर विशेष रूप से बल दिया गया है। कहा गया है कि गुरु के द्वारा प्राप्त मन्त्रों की उपासना से ही साधना-सिद्धि क्षेत्र में पूर्णरूप से सफलता प्राप्त होती है। गुरु-कृपा के बिना सिद्धि नहीं मिलती ऐसा निर्देश इस पटल में किया गया है। गुरु ही भावना है और भावना ही सिद्धि का मूल आधार स्तम्भ है। इसी कारण से गुरु साधना क्षेत्र का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग है। सम्पूर्ण तन्त्रशास्त्र की तरह इस अध्याय में भी गुरु की श्रेष्ठता का विशद वर्णन किया गया है। इस अध्याय में भी तोडल तन्त्र के माध्यम से उपासना और पूजा पर बल दिया गया है। गुरु ही शक्ति उपासना का मूल स्रोत है। इस कारण गुरु ही सर्वस्व है। मन्त्रों को साक्षात् ब्रह्मस्वरूप मानकर गुरु आज्ञा से ही मन्त्र जाप करना चाहिये उससे ही सिद्धि मिलेगी ऐसा ध्रुव मत इस पटल में प्रकट किया गया है। गुरु एवं मन्त्र की महत्ता ही इस पटल का मुख्य विषय है। इस अध्याय के दूसरे भाग में बलि पर जोर दिया गया है। कहा गया है कि निर्धन को भी प्रत्येक वर्ष अवश्य ही बलि करना चाहिये; क्योंकि बलि भी शक्ति उपासना का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग है और बलि प्रदान किये बिना सिद्धि कदापि नहीं मिल सकती ऐसा मत इस पटल में व्यक्त किया है। बलि करने के बाद बलि के मांसों का सेवन पर भी इस पटल में जोर दिया गया है। यह भी कहा गया है कि यज्ञ के बचे शेष भाग को यज्ञकर्त्ता को अवश्य ही सेवन करना चाहिये। यदि यज्ञकर्त्ता उसका सेवन नहीं करता तो उसे यज्ञ का सम्पूर्ण फल कभी भी नहीं प्राप्त होगा। यह भी कहा गया है कि कलिकाल में अश्वमेधादि यज्ञ नहीं किया जा सकता। इस कारण से शक्ति उपासना के क्रम में अवश्य ही बलि प्रदान करना चाहिये। इस पटल में तन्त्र को ब्रह्मस्वरूप मानकर इसकी श्रेष्ठता की तुलना वेद एवं शास्त्रों से की गयी है तथा तन्त्र की सर्वोच्चता का वर्णन किया गया है।

ग्यारहवें पटल में ४४ श्लोक है। इस पटल में निर्जन वन प्रदेश, तालाब, नदी या कुएँ के पास विशाल मण्डप निर्माण कर उसे पूरी तरह सजाकर के ही अपने इष्ट देवी के पूजन का निर्देश दिया गया है। विभिन्न शक्ति-उपासक ग्रन्थों में दिये गये ६४ प्रकार के राजसी पूजन से ही अपने इष्ट देवी का पूजन करना चाहिये और पूजन के क्रम में समस्त शृङ्गार की वस्तुयें भी चढ़ानी चाहिये फिर उसके बाद अपने गुरु को अपने सामर्थ्य के अनुसार ही दक्षिणा देना चाहिये। पूर्णाहुति के बाद मन्त्र जप का विधान बताया गया है। कहा गया है कि ऐसी पूजा से साधक अपने सात पीढ़ी

तक के पूर्वजों को मुक्ति दिलाता है और स्वयं मेरे निवास (कैलास) पर निवास करता है। यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद यज्ञसूत्र धारण करने का विधान एवं उसकी उपयोगिता पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है तथा उसका प्रमाण भी दिया गया है कि किस प्रकार से यज्ञसूत्र धारण करना चाहिये। इस पटल में शक्ति विषयक अपने इष्ट देवी का विशुद्ध वैदिक रीति से ही पूजन करने का निर्देश दिया गया है। कुल मिलाकर यह पटल राजसीपूजन का विशेष अंग है। यहाँ विस्तार से पूजा एवं उपासना पर बल दिया गया है तथा तन्त्रसार और धृत यामल नामक ग्रन्थों में दिये गये विधियों के अनुसार ही पूजन करने को कहा गया है। इसके अतिरिक्त अन्य मार्गी उपासकों के लिये भी यज्ञ सूत्र धारण करने की विधि इस पटल में वर्णित है।

बारहवें पटल में ७० श्लोक है। इसके प्रथम भाग में शालिग्राम, कलश, चित्र, जल, पुष्प और पुस्तिका पर पूजन करने का निर्देश दिया गया है। यह भी कहा गया है कि शिवलिङ्ग की उपासना पूजा में पार्थिव शिवलिङ्ग की ही पूजा करनी चाहिये। यहाँ यह भी कहा गया है कि शालिग्राम और मणि आदि पर यन्त्र का निर्माण नहीं करना चाहिये। प्रतिमा के साथ ही साथ या मन्त्र के साथ ही साथ पूरक के रूप में घट (कलश) स्थापना भी अवश्य करनी चाहिये; क्योंकि ऐसा किये बिना साधक की पूजा-उपासना निष्फल चली जायेगी। कलश में सभी देवी-देवता अपने-अपने रूप में निवास करते हैं। इस कारण से अवश्य ही कलश स्थापना करनी चाहिये ऐसा निर्देश इस पटल में दिया गया है। यहाँ मन्त्र के साथ ही कलश की अनिवार्यता पर बल दिया गया है। यन्त्र के साथ ही चित्र भी होना चाहिये ऐसा मत इस पटल में प्रकट किया गया है। इसके बाद इस पटल में शिवलिङ्ग पूजन की महत्ता को भी दर्शाया गया है। इसी पटल में सभी प्रकार के निर्मित शिवलिङ्ग पूजन से प्राप्त फलों का भी वर्णन किया गया है एवं विल्वपत्र (वेलपत्र) की महत्ता पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। कहा गया है कि एक विल्व-पत्र चढ़ाने से हजारों स्वर्णपुष्प के बराबर फल प्राप्त होता है। शिव-पूजन से ही सभी देवताओं का पूजन होता है। इस कारण अवश्य ही शिवपूजन करना चाहिये। इसीलिए लिङ्ग पूजन से ही सारे देवी देवता प्रसन्न होते हैं ऐसा विचार इस पटल में प्रकट किया गया है। इसके दूसरे भाग में त्रिपुरसुन्दरी की उपासना के सम्बन्ध में निर्देश दिया गया है। यह भी विचार प्रकट किया गया है कि सारी महाविद्यायें एक ही हैं। इन्हें वर्णभेद और उपासना भेद के कारण ही अलग-

अलग नामों से जाना जाता है । इसमें मूलत: किसी भी प्रकार का कोई भी तात्त्विक भेद नहीं है । इसी कारण से एक ही महाविद्या की उपासना से सारी महाविद्याओं की उपासना सम्भव है । साधक के द्वारा मन्त्रों के गलत उच्चारण से साधक के जीवन में क्रिया-प्रतिक्रिया होती है तथा उसका क्या प्रभाव किस प्रकार की आने वाले दिन में पड़ता है इसका भी साङ्गोपाङ्ग वर्णन इस पटल में किया गया है । कहा गया है कि मन्त्रों के सम्बन्ध में उठ रहे भ्रान्तियों से गुरु के द्वारा ही मुक्ति मिलती है और अन्त में गुरु महिमा पर इस अध्याय में विशेष रूप से जोर दिया गया है ।

तेरहवें पटल में २४ श्लोक हैं । इस पटल में शक्ति उपासना के सन्दर्भ में माला विषयक विशेषताओं का पूर्णरूप में विवरण दिया गया है । देवी-देवता की उपासना किस-किस माला से करनी चाहिये इसके सम्बन्ध में यहाँ पूर्ण निर्देश दिया गया है । यहाँ पर महाशंख माल की सर्वोच्चता बतायी गयी है तथा यह भी कहा गया है कि शक्ति उपासना में बिना महाशंख के माला के सिद्धि कदापि नहीं मिल सकती । इस कारण से साधक को शक्ति की उपासना शंख की माला से ही करनी चाहिये । तथा इसी के द्वारा उपासना करने से साधक को तत्काल सिद्धि मिलती है । काली, तारा, धूमावती और त्रिपुरसुन्दरी की उपासना किस माला के करनी चाहिये यही निर्देश इस पटल में दिया गया है । इसके अतिरिक्त गणापत्यों के लिये हाथी दाँत की माला तथा वैष्णवों के लिये तुलसी माला से उपासना करने पर बल दिया गया हैं । इस अध्याय में माला की महत्ता पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है । माला में दिये गये गाँठों का भी विस्तार से वर्णन इसी पटल में है । जप के नियम एवं प्रभावों का भी यहाँ विस्तार से वर्णन किया गया है । कुल मिलाकर यह माला निर्णय अध्याय ही है ।

चौदहवें पटल में ४२ श्लोक हैं । इस पटल में दिव्य भोग, बीर भोग और पशु भोग के सम्बन्ध में विचार प्रकट किया गया है और साधक को सपत्नीक पूजा-उपासना करने पर ही बल दिया गया है । कुण्डलिनी ही सारे भोगों को भोगती है जीव नहीं, ऐसा विचार इस पटल में प्रगट किया गया है । इस पटल में वीरभाव की उपासना पर विशेष रूप से ही बल दिया गया है और मद्यपान की प्रशंसा की गयी है । कहा गया है कि वीरभाव की उपासना के बिना मद्यपान से सिद्धि नहीं मिल सकती । यहाँ पर साधना के क्रम में गुरुपूजन पर विशेष बल दिया गया है और कहा गया है कि बिना गुरुपूजन के सिद्धि नहीं मिलती । इस कारण से सिद्धि एवं उपासना के पूर्व गुरुपूजन आवश्यक है । यहाँ पर गुरु का सपत्नीक पूजन करने

का विधान बताया गया है । गुरुपत्नी की महत्ता पर भी यहाँ विशेपरूप से निर्देश दिया गया है तथा यह भी कहा गया है कि गुरुपत्नी साक्षात् गुरु है इस कारण से गुरु पत्नी का पूजन साधक को अवश्य ही करना चाहिये । साधना के क्षेत्र में गुरु साधक का पग-पग पर रक्षा करता है । इस कारण से सब कुछ करके भी गुरु पूजन करने और गुरु को यथेष्ठ दक्षिणा देने का विधान भी बताया गया है । गुरु की न तो निन्दा करनी चाहिये और न गुरु की निन्दा सुननी चाहिये । इससे साधना क्षेत्र में हानि होती है ऐसा ही निर्देश इस पटल में दिया गया है । इस पटल में यह विचार प्रकट किया गया है कि यदि शिष्य गुरु के सम्पूर्ण तेज को धारण कर ले तो उसे काशी आदि सभी तीर्थ का फल प्राप्त होता है । कुल मिलाकर इस पटल में गुरु महिमा पर विशेष रूप से बल दिया गया है । पटल के अन्त में गुरुपुत्र की महिमा और गुरुपुत्र पूजन पर भी बल दिया गया है ।

मूलतः मातृकाभेदतन्त्र कौल तान्त्रिक, वैदिक उपासना और रसायन प्रक्रिया का ही सम्मिलित रूप है ।

— रघुनाथ दूबे

विषयसूची

प्रथमः पटलः

पृष्ठाङ्काः

ग्रन्थारम्भः
रत्नादिनिर्माणप्रश्नः ३
रौप्यनिर्माणप्रकारकथनम् ४
कारणस्य दुग्धरूपताविषये प्रश्नः, कथनञ्च ६
मद्यस्य गन्धहीनताविषये प्रश्नः ७
मद्यस्य गन्धहीनताकरणम् ७

द्वितीयः पटलः

पुत्रोत्पत्तिविषये जिज्ञासा ८
महादेवस्य गर्भोत्पत्तिप्रकारकथनम् ८
पुत्र-कन्यादिजन्मकथनम् १०
पुष्पमाहात्म्यकथनम् ११

तृतीयः पटलः

भोगस्य मोक्षकारणतायां देव्याः प्रश्नः १३
भोगस्य मोक्षकारणत्वकथनम् १३
होमकुण्डविषयकजिज्ञासा १५
चतुर्विधहोमकुण्डकथनम् १६
चतुर्विधाहुतिकथनम्, मुक्तिकथनञ्च १६
बाह्यकुण्ड-होमज्ञान, होमविमर्शः १७
मद्यपानविषये जिज्ञासा, मद्यपानव्यवस्था च १८
सशक्तिचतुर्वर्णानां मद्यपानप्रशंसा १९
मद्यपानस्य ब्रह्मज्ञानकारणत्वम् १९
सुरायाः शापमोचनस्य कर्त्तव्यता २०
प्रसङ्गतो मुक्तिमार्गनिर्णयः पशुसन्निधौ तन्निर्णये निन्दाकथनञ्च २१

चतुर्थः पटलः

शिवनिर्माल्यस्य कारणस्य च अग्राह्यत्वविषये देव्या जिज्ञासा २२
काणोपन्यासेन सुरानिर्माल्ययोः प्रशंसाकथनम् २३
निर्वाणस्य महामोक्षस्य मद्यपानमेव कारणम् २४
गङ्गाम्भसोऽपि कारणस्योत्कर्षनिरूपणम् २४
प्रसङ्गतो महाशङ्खमालाप्रशंसा, महाशङ्खस्य शालग्रमादौ स्पर्शनिषेधः २५
कारणस्पर्शेन मालाया उत्कर्षः, गङ्गास्पर्शेन च तदभाव इत्यत्र हेतुप्रश्नः २६
भगवत उत्तरदानम् २६
महाशङ्खमालाप्रशंसा २७

पञ्चमः पटलः

पारदभस्मनिर्माणप्रश्नः २९
महादेवस्य तदर्थे शान्तेः कर्त्तव्यताकथनम् २९
शान्तिप्राकारकथनम् २९
गुरवे दक्षिणादानस्याऽऽवश्यकता ३२
भस्मनिर्माणविधानप्रश्नः, भस्मनिर्माणप्रकारकथनञ्च ३२
देव्याः स्वयम्भूकुसुमादिविषये जिज्ञासा ३४
महादेवस्य तत्रोत्तरम् ३४
पारदभस्मपरीक्षानिर्माणप्रसङ्गेन स्वर्णनिर्माणकथनम्, पारदभस्मप्रशंसा च ३५

षष्ठः पटलः

महारोगादिदुःखमुक्त्युपायप्रश्नः ३८
महादेवस्योत्तरम् ३८
ग्रहणविषये देव्या जिज्ञासा ३८
ग्रहशब्दस्यार्थकथनम्, तत्प्रकारकथनञ्च ३९
ग्रहणप्रशंसा, ग्रहणतत्त्वप्रकाशनिषेधः च ४०
चामुण्डामंत्रपूजाविषये प्रश्नः, चामुण्डामन्त्रपूजादिकथनञ्च ४१
चण्डीपाठप्रकारकथनम् ४२
चण्डीपाठप्रशंसनम् ४६
चण्डिकाया ध्यानमन्त्रादिकथनम् ४७
चण्डीपाठात् सर्वसिद्धिकथनम् ४८

सप्तमः पटलः

त्रिपुरामन्त्रज्ञानप्रशंसा ५०
त्रिपुरायास्त्रैविध्यकथनम् ५०

प्रात:कृत्यादिप्रश्न: ५०
तद्विषयकशिववाक्यानि ५०
स्त्रीगुरुस्तवकवचविषये देव्या: प्रश्न: ५२
स्त्रीगुरुस्तोत्रम् ५२
स्त्रीगुरुकवचनम् ५४
स्त्रीगुरुकवचप्रशंसा ५६
महादेवस्य वक्तव्यविषये जिज्ञासा ५७
श्रीविद्याविषये सन्ध्याध्यानादिप्रश्न: ५८
श्रीविद्याया: प्रातरादिभेदेन रूपत्रैविध्यकथनम् ५८
श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीपूजाग्रे शम्भुपूजाया अवश्यकर्त्तव्यत्वकथनम् ५९
शम्भुपूजायामाधारभेदप्रश्न:, तत्राऽऽधारभेदकथनञ्च ६०
शिवसंस्कारकथनम् ६१
लिङ्गप्रमाणप्रश्न:, लिङ्गप्रमाणकथनञ्च ६२

अष्टम: पटल:

देव्या: पारदमाहात्म्यविषये लिङ्गरूपविषये च जिज्ञासा ६४
महादेवस्य तत्रोत्तरम् ६४
सर्वलिङ्गत: पारदनिर्मितलिङ्गस्य प्राधान्यकथनम् ६५
लिङ्गनिर्माणविषये देव्या जिज्ञासा ६५
पारदताडननिषेध:, विघ्नादिशमनप्रश्न: च ६६
पारदशिवनिर्माणे शान्त्यादेरावश्यकता ६६
शान्तिप्रणालीकथनम् ६६
पारददृढीकरणप्रणाली ६९

नवम: पटल:

पारदभस्मनिर्माणप्रणाली: ७१
पूजादिप्रकार: ७२
होमकुण्डप्रमाणादिकम् ७२
दक्षिणादानस्याऽऽवश्यकता ७३
प्रयोग: ७४
पारदभस्मव्यवहारप्रशंसा ७५
पुत्रवतो गृहिण एतत्प्रयोगनिषेध: ७५

दशमः पटलः

गुरुमन्त्रयोरेकत्वविषये देव्याः प्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च ७७
अचाक्षुषस्य ध्यानविषये प्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च ७८
देव्याः पशुप्रदानवाक्यप्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च ७८
दिव्यवीरमते पशुदानस्याऽऽवश्यकता ७९
बलिदानप्रशंसा ८०
यज्ञावशेषभोजनस्याऽऽवश्यकता ८०
पटलश्रवणप्रशंसा ८१
तन्त्रश्रवणप्रशंसा ८१

एकादशः पटलः

देव्याः प्रासाद-मण्डप-कूपादिनिवेदनविधानप्रश्नः, तन्माहात्म्यप्रश्नश्च ८३
प्रासादोत्सर्गाविधानकथनम् ८३
कूपोत्सर्गे विशेषः ८७
कूपाद्युत्सर्गप्रशंसाकथनम् ८८
देव्या यज्ञसूत्रविधानप्रंश्नः ८९
महादेवस्य यज्ञसूत्रविधानकथनम् ८९
अज्ञातसङ्केतस्य यज्ञसूत्रधारणनिन्दा ९१

द्वादशः पटलः

पूजाधारकथनम्, पार्थिवलिङ्गस्य निषेधश्च ९२
शालग्रामादौ यन्त्रलिखननिषेधः ९३
प्रतिमापूजायां विशेषः ९३
यन्त्रे कृते मूर्त्तेरकर्त्तव्यवा ९४
प्रतिमायां पूजायां यन्त्रलिखननिषेधः, दैवाद् यन्त्रलिखने कर्त्तव्यव्यवस्था च ९४
तदकरणे दोष ९४
शिवलिङ्गलक्षणकथनम्, पार्थिवादिशिवलिङ्गाधिकरणकशिवपूजासु विशेषः च ९५
शम्भुपूजाप्रशंसा ९६
विल्वपत्रेण पूजायां फलाधिक्यकथनम्, शिवपूजाप्रशंसा च ९७
लिङ्गोपरि पुष्पगन्धादिदानप्रशंसा ९८
लिङ्गोपरि जलदानफलम् ९८
लिङ्गोपरि पुष्पदानफलम् ९८

लिङ्गोपरि दूर्वादानफलम् ९९
शिवस्नपनफलम् ९९
देव्या ब्रह्मशक्तिविष्णुशक्तिविषये जिज्ञासा ९९
महादेवस्योत्तरम् ९९
मन्त्रधारिणो वातुलत्वरोगित्वविषये देव्या: प्रश्न: १००
मन्त्रवच्छन्नादिदोषेण बातुलत्वादिकथनम् १००
मन्त्रहरणदोषकथनम्, साधकस्यावस्थाविशेषकथनमञ्च १०१
अष्टविधमन्त्रच्छन्नदोषनाशोपाये देव्या जिज्ञासा १०२
महादेवस्योपायकथनम् १०२
श्मशानसाधनकथनम् १०४

त्रयोदश: पटल:

मालाविषये देव्या जिज्ञासा, देवताविशेषे मालाविशेषकथनञ्च १०७
मालाग्रन्थिकथनम् १०८
मालाजपे कम्पनादौ दोषकथनम् ११०
दोषे जाते शान्तिकथनम् १११
दरिद्रस्य विशेष: ११२

चतुर्दश: पटल:

देव्या भोगविषये प्रश्न: ११४
त्रिविधभोगकथनम् ११४
दिव्यभोगकथनम् ११४
वीरभोगकथनम् ११५
पशुभोगकथनम् ११५
दिव्य-वीरभावगतिश्च ११५
सायुज्यादिमोक्षाधिकारिण:, पशुभावगतिश्च ११५
देव्या दिव्यवीरलक्षणजिज्ञासा ११६
महादेवस्य वारुणीप्रशंसा, तन्मुखेन दिव्यवीरलक्षणकथनञ्च ११६
साधिकालक्षणम्, प्रकारभेद:, गुरुपूजाप्रकार: गुरुपूजाऽकरणे दोषश्च ११८
विशेषविधिनिषेधा: ११८
देव्या गुरुपूजाप्रकारे प्रश्न:, तत्र महादेवस्योत्तरञ्च १२०
गुरुपुत्रपूजनप्रशंसा, एकाधिकगुरुपुत्रपूजननिषेधश्च १२०
गुरुपुत्रपूजनस्यावश्यकर्त्तव्यता, पूजने दोषश्च १२०

मातृका स्तोत्र

गणेश-ग्रह-नक्षत्र योगिनी राशि रुपिणीम् ।
देवीं मन्त्रमयीं नौमि मातृकां पीठरुपिणीम् ।।१।।
प्रणमामि महादेवीं मातृकां परमेश्वरीम् ।
काल-हल्लोहलोल्लोलक तना नाशं करिणीम् ।।२।।
यदक्षरैक मात्रेऽपि संसिद्धे स्पद्धते नरः ।
रवितार्क्ष्येन्द्र कन्दर्प-शङ्करानल-विष्णुभिः ।।३।।
यदक्षर शशि ज्योत्सना मण्डितं भुवनत्रयम् ।
वन्दे सर्वेश्वरी देवीं महाश्रीसिद्धमातृकाम् ।।४।।
यदक्षर महासूत्र प्रोतमेतज्जगत् त्रयम् ।
ब्रह्माण्डादि कटाहान्तं तां वन्दे सिद्धमातृकाम् ।।५।।
यदेकादशमाधारं बीजं कोण त्रयोद्भवम् ।
ब्रह्माण्डादि कटाहान्तं जगदद्यापि दृष्यते ।।६।।
अकचादि तटोन्नद्ध पयसासर वर्गिणीम् ।
ज्येष्ठाङ्गबाहुहृत् पृष्ठकटिपाद निवासिनीम् ।।७।।
तामीकाक्षरोद्धारां सारोत्सारा परात्पराम् ।
प्रणमामि महादेवीं परमानन्दरुपिणीम् ।।८।।
अद्यापि यस्या जानन्ति न मनागपि देवताः ।
केयं कस्मात् केनेतिसरुपारुप भावनाम् ।।९।।
वन्दे तामहमक्षय्य मातृकाक्षर रुपिणीम् ।
देवीं कुल कलोल्लोल प्रोल्लसन्तीं परां शिवाम् ।।१०।।
वर्णानुक्रम योगेन यस्या मात्राष्टकं स्थितम् ।
वन्दे तामष्टवर्गोत्थ महासिंहाष्टकेश्वरीम् ।।११।।
कामपूर्णज काराद्य श्रीपीठान्तर्निवासिनीम् ।
चतुराज्ञां कोशभूतां नौमि श्रीत्रिपुरामहम् ।।१२।।

फल श्रुति

इति द्वादशभिः श्लोकैः स्तवनं सर्वसिद्धिकृत् ।
देव्यास्त्वं खण्डरुपायाः स्तवनं तव सद्यतः ।।१३।।
तोयं तत्त्वमयीं व्याप्तिरिति सम्यक् प्रदर्शिता ।
अस्यानिः फलनाङ्क्षिते तत्तत्वं स्वात्मसात्कृता ।।१४।।

इति मातृकास्तोत्रम् ।

ॐ मां क्रीं

।। श्रीगणेशाय नमः ।।

मातृकाभेदतन्त्रम्

प्रथमः पटलः

ॐ नमो देव्यै

कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नोपशोभिते ।
पप्रच्छ परया भक्त्या भैरवं परमेश्वरम् ।।१।।

कैलाशपर्वत पर आसीन अनेक रत्नों से सुशोभित, भक्तों के परम कल्याण कारक परमेश्वर भैरवनाथ (भगवान् शिव) से देवि ने भक्तिपूर्वक कहा ।।१।।

रत्नादिनिर्माणप्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

त्रिपुरापूजनं नाथ स्वर्णरत्नैर्विशेषतः ।
कलिकाले स्वर्णरूप्यं गुप्तभावं तथा मणिम् ।।२।।

श्रीचण्डिका बोली– हे कृपानिधान ! श्रीत्रिपुरसुन्दरी का पूजन सोने-चाँदी जैसे अनेक प्रकार के रत्नों से किया जाता है । कलिकाल में सोने- चाँदी और मणियों की प्राप्ति का क्या रहस्य है बताने की कृपा करें ।।२।।

केनोपायेन देवेश स्वर्णरूप्यादि लभ्यते ।
तद्वदस्व विशेषेण यथा रत्नादिकं भवेत् ।।३।।
यन्नोक्तं सर्वतन्त्रेषु तद्वदस्व दयानिधे ।।४।।

हे देवाधिदेव ! किस प्रकार के प्रयत्न से सोने-चाँदी और मणियों जैसे रत्न की प्राप्ति हो सकती है इस सम्बन्ध में आप विस्तार से कहने की कृपा करें, जो किसी भी तन्त्र में नहीं है उसे ही आप कहने की कृपा करें ।।३-४।।

रौप्यनिर्माणप्रकारकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यथा रत्नादिकं भवेत् ।
मत्तेजसा पारदेन किं रत्नं न हि लभ्यते ।।५।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि सुनो ! जिस प्रकार के प्रयत्न से सोने-चाँदी की प्राप्ति होती है उसे ही कह रहा हूँ। पारद (पारा) में ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा सभी रत्नों की प्राप्ति हो सकती है ।।५।।

तथा सामुद्रकेणैव सुशुभ्रलवणेन च ।
सम्बलस्य प्रकारं हि शृणु देवि प्रयत्नतः ।।६।।

शुभ लक्षणयुक्त शुद्ध सामुद्रिक नमक और सम्बल अर्थात् शुद्ध सिंगरफ यत्नपूर्वक लायें ।।६।।

चीनतन्त्रानुसारेण पूजयेत्सिद्धकालिकाम् ।
अथवा पूजयेद्देवीं दक्षिणां कालिकां पराम् ।
कालीतन्त्रोक्तविधिना सप्ताहं जपपूजनम्[१] ।।७।।

चीनाचार (एक प्रकार की उपासना पद्धति) क्रम से सिद्धिकाली की विधिवत पूजन करें या फिर दक्षिणकाली की तन्त्रोक्त रीति से पूजनकर एक सप्ताह तक नियमित रूप से मन्त्र का जाप करें ।।७।।

---

[१] कालीतन्त्रेति । अत्र संक्षेपतः कालीतन्त्रोक्ता पूजा निरूप्यते— अथार्चनविधिं वक्ष्ये देव्याः सर्वसमृद्धिदम् । येनानुष्ठितमात्रेण स्वयं भैरवरूपवान् । ... ...आदौ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमरतां व्रजेत् ।। आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोण तद्बहिर्न्यसेत् । ततो विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ।। वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सुलक्षणम् । वै ततो वृत्तं विलिख्यैव लिखेद् भूपुरमेककम् ।। चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् । पीठपूजां ततः कृत्वा स्ववामेऽर्घ्यं न्यसेत् प्रिये ।। मूलविद्यां पडङ्गेन मूलमन्त्रेण चार्चयेत् । ततो हृदयपद्मान्तः स्फुरन्तीं परमां कलाम् ।। यन्त्रमध्ये समावाह्य न्यासजालं प्रविन्यसेत् । ततो ध्यात्वा महादेवीमुपचारान् प्रकल्पयेत् । नमस्कृत्य महादेवीं तत आवरणं यजेत् । कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीम् ।। विप्रचित्तान्तु सम्पूज्य बहिः षट्कोणके ततः । उग्रामुग्रप्रभां दीप्तांतथा मध्यत्रिकोणके ।। नीलां घनां बलाकाञ्च तथैवान्यत्रिकोणके । मात्रां मुद्रां मिताञ्चैव तथैवान्तस्त्रिकोणके ।। सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषिताः । तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यः शुचिस्मिताः ।। ततो वै मातरः पूज्या ब्राह्मी नारायणी तथा । माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ।। वाराही च तथा पूज्या नारसिंही तथैव च ।। सर्वासामपि देवीनां बलिः पूजा तथैव च । अनुलेपनकं गन्धो धूपदीपौ तथैव च । त्रिस्त्रिः पूजा प्रकर्त्तव्या सर्वासामपि साधकैः ।। गुरुपंक्तिं पडङ्गञ्च दिक्पालांश्च ततोऽर्चयेत् ।। एवं पूजां पुरा कृत्वा मूलेनैव यथाविधिः । नैवेद्यादीन्यथाशक्त्या दद्याद् देव्य पुनः पुनः ।। ततो वै दश वरांस्तु दीपं दद्यात् तु साधकः । पुष्पादिकं पुनर्दद्यान्मूलेनैव यथाविधिः ।। ततः सावहितो मन्त्रो गुरुं नत्वा शिरःस्थितम् । देवीं ध्यात्वा चाष्टोत्तरसहस्रं प्रजपेन्मनुम् ।। तेजोमयं जपफलं देव्या हस्ते समर्पयेत् । गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वमिति मन्त्रेण मन्त्रवित् ।। ततः शिरसि वै पुष्पं दत्त्वाष्टाङ्गं प्रणम्य च । विसृज्य परया भक्त्या संहारेणैव भक्तितः ।। उद्वास्य हृदये देवीं तन्मयो भवतिं ध्रुवम् ।।

सत्ये चैकन्तु त्रेतायां द्विगुणं द्वापरे त्रयम् ।
एवं सर्वत्र जानीयाच्चतुर्गुणजपः कलौ ।।८।।

मन्त्र जप के सम्बन्ध में जैसा कि तन्त्रशास्त्र में कहा गया है सतयुग में एकगुणा, त्रेता में द्विगुणा, द्वापर में त्रिगुणा और कलियुग में चतुर्गुणा जप करना चाहिये ।।८।।

आनीय बहुयत्नेन सम्बलं तोलकद्वयम् ।
वसुराद्यं शिवं चाद्यं मायाबिन्दुविभूषितम् ।
बीजत्रयं चाष्टशतं प्रजपेत् सम्बलोपरि ।।९।।

यत्नपूर्वक दो तोला शुद्ध सिंगरफ लावें और उसे तीन बीजों वाले मन्त्र (क्लीं ह्रीं क्लीं) के द्वारा अभिमन्त्रित करें। अर्थात् सिंगरफ पर एक हाथ रखकर १०८ बार जप करना चाहिये ।।९।।

अशीतितोलकं मानं कृष्णाधेनुसमुद्भवम् ।
दुग्धमानीय यत्नेन चाष्टोत्तरशतं जपेत् ।।१०।।

अस्सी तोला (एक सेर) काली गाय का दूध इकट्ठा कर, उस दूध को भी उसी त्र्यक्षर मन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिये। अर्थात् दूध में एक हाथ डालकर तीन बीजों वाले मन्त्र का जप एक माला करना चाहिये ।।१०।।

वस्त्रयुक्तेन सूत्रेण दुग्धमध्ये विनिक्षिपेत् ।
उत्तापं जनयेद्धीमान् मन्दमन्देन वह्निना ।।११।।

लाल कपड़े में सिंगरफ को बाँधकर उसी दूध में डालना चाहिये तथा उसे मन्द आग पर धीरे-धीरे गरम करना चाहिये ।।११।।

बिन्दु वेदान्तपर्यन्तमर्द्धशोषं भवेद् यदा ।
तदैवोत्तोल्य तद्द्रव्यं तोयमध्ये विनिक्षिपेत् ।।१२।।

गरम करने के बाद जब एक चौथाई हिस्सा दूध बचे तो उसे आग पर से उतारकर उसमें से सिंगरफ को बाहर निकाल देना चाहिये ।।१२।।

ततः परीक्षा कर्त्तव्या प्रदद्यात् पावकोपरि ।
निर्धूमं पावके द्रव्यं दृष्ट्वा उत्थाप्य यत्नतः ।।१३।।

तत्पश्चात् सिंगरफ की परीक्षा करनी चाहिये, परीक्षा के लिये उसमें से थोड़ा-सा सिंगरफ लेकर आग पर डालें। डालने के बाद यदि अग्नि में धुआँ न उठे तो समझें कि सिंगरफ का शोधन हो गया है ।।१३।।

तत्रैव प्रजपेन्मन्त्रं सर्ववन्द्यनवात्मकम् ।
आनीय बहुयत्नेन शुद्धं ताम्रं मनोहरम् ।।१४।।

तदुपरान्त सिंगरफ को लेकर नवाक्षरमन्त्र का एक माला जप करें और यत्नपूर्वक शुद्ध ताँबा लाकर उसे भी एक माला नवाक्षरमन्त्र से अभिमन्त्रित करें ॥१४॥

सार्द्धेन तोलकं ताम्रं वह्निमध्ये विनिक्षिपेत् ।
यथा वह्निस्तथा ताम्रं दृष्ट्वा उत्थाप्य यत्नतः ।।१५।।

पश्चात् आधा तोला ताँबा एक मिट्टी के कटोरे में रख कर आग पर गरम करें और तब तक गरम करें जब तक कि ताँबा पिघल कर द्रव रुप में न हो जाये ॥१५॥

गुञ्जाप्रमाणं तद्द्रव्यं तत्क्षणाद् यदि योजयेत् ।
सत्यं सत्यं हि गिरिजे रौप्यं भवति निश्चितम् ।।१६।।

हे गिरजे ! उस ताँबे में यदि एक रत्ती सिंगरफ मिला दिया जाय तो निश्चित रूप से वह चाँदी बन जायेगा। यह सत्य कह रहा हूँ ॥१६॥

कारणस्य दुग्धरूपताविषये प्रश्नः, कथनञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

कारणं दुग्धरूपं वा केन रूपेण शङ्करः ।
तत्प्रकारं महादेव कृपया वद शङ्कर ।।१७।।

श्रीचण्डिका बोली– हे महादेव ! किस कारण से शङ्कर दुग्ध रूप में हो जाते हैं अथवा दुग्ध शङ्कर रूप में हो जाते हैं। हे शङ्कर ! हमें यह बताने की कृपा करें ॥१७॥

श्रीशङ्कर उवाच

टङ्कनम् आनयेद्धीमान् तोलकन्तु चतुष्टयम् ।
वह्नियोगेन गिरिजे लाजरूपञ्चकारह ।।१८।।

श्री शङ्कर जी बोले– गिरिजे ! चार तोला सुहागा लायें और उसे मिट्टी के बर्तन में आग पर गरम करके लावा के तरह बना लें ॥१८॥

आम्रपुष्पं तद्द्विगुणं पिष्ट्वा मिलनमाचरेत् ।
तस्योपरि जपेन्मन्त्रं महामायां हि चण्डिके ।।१९।।

इसके बाद आठ तोला आम का मञ्जर लायें और उसे पीसकर सुहागा में इस प्रकार मिला दें जिससे कि सुहागा और मञ्जर दोनों एक में मिल जायें। इसके बाद महामाया मन्त्र का एक माला जप करें ॥१९॥

एतत्तु गुटिकां कृत्वा मेलनं कारयेद्यदि ।
तदैव दुग्धरूपं स्यात्सत्यं सत्यं हि शैलजे ।।२०।।

हे शैजले ! फिर दोनों को मिलाकर गुटिका (गोली) बना लें तब वह दुग्ध रुप (श्वेत) हो जायेगा। यह सत्य ही नहीं यह पूर्णसत्य है ॥२०॥

मद्यस्य गन्धहीनताविषये प्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

गन्धहीनं भवेन्मद्यं केनोपायेन शङ्करः।
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ।।२१।।

श्रीचण्डिका बोली– हे शिव ! यदि हम पर आपका स्नेह हो तो हमें यह सुनने की इच्छा हो रही है कि किस प्रकार के यत्न से मद्य (शराब) गन्धहीन हो जाता है ॥२१॥

मद्यस्य गन्धहीनताकरणम्

श्रीशङ्कर उवाच

शिवं वह्निसमारूढं वामनेत्रविभूषितम्।
बिन्दुनादसमायुक्तं गन्धमादाय संलिखेत्।।२२।।
उह्यतां पदमुच्चार्यं चाष्टोत्तरशतं यदि।
प्रजपेत् साधकश्रेष्ठो दुर्गन्धादिविनाशनम्।।२३।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे प्रथमः पटलः ।।१।।

श्रीशङ्कर जी बोले– अग्नि को शिव का बायाँ नेत्र कहा गया है; इसलिए शराब को आग पर चढ़ाकर उसमें ह्रीं गन्धं उह्यताम् मन्त्र को १०८ बार लिखें और गरम करते रहें। इसी मन्त्र का १०८ बार जाप भी करें तो निश्चित रूप से शराब दुर्गन्धहीन हो जायेगा। साधकश्रेष्ठ इसी प्रकार दुर्गन्ध की समाप्ति करते हैं ॥२२-२३॥

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
प्रथम पटल समाप्त ।।१।।

द्वितीयः पटलः

पुत्रोत्पत्तिविषये जिज्ञासा

श्रीदेव्युवाच

वद ईशान सर्वज्ञ सर्वतत्त्वविदां वर ।
यत् त्वया कथितं नाथ मम सङ्गे विहारतः ।।१।।

श्रीदेवी बोली– हे सम्पूर्ण दिशाओं के स्वामी ! सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता ! मेरे साथ विहार करते हुये इसे आप मुझसे पूर्व में ही कह चुके हैं ।।१।।

कथं वा जायते पुत्रः शुक्रस्य कुत्र संस्थितिः ।
वर्द्धमानं सदा लिङ्गं प्रवेशो वा कथं भवेत् ।।२।।
भीतियुक्ता ह्यहं नाथ त्राहि मां दुःखसङ्कटात् ।।३।।

पुत्र की उत्पत्ति किस प्रकार होती है और वीर्य किस स्थान पर अवस्थित है, जिसके कारण समागम के समय लिङ्ग की वृद्धि होती है, कहने की कृपा करें । हे स्वामी ! मैं भययुक्त होकर सङ्कट के निवारण हेतु आपसे यह प्रश्न कर रही हूँ ।।२-३।।

महादेवस्य गर्भोत्पत्तिप्रकारकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

मणिपूरं महापद्मं सुषुम्णामध्य-संस्थितम् ।
तस्य नालेन देवेशि नाभिपद्मं मनोहरम् ।।४।।

श्री शङ्कर जी बोले– सुषुम्णा के मध्य में मणिपुर के पास महापद्म नामक नाड़ी स्थित है और वही नाल नाभीपद्म के नाम से अत्यन्त मनोहर अर्थात् सुन्दर है ।।४।।

वक्रत्रयसमायुक्तं सदा शुक्रविभूषितम् ।
ऊर्ध्वं नालं सहस्रारे अतः शुक्रविभूषितम् ।।५।।
तस्मादेव स्तनद्वन्द्वं वर्द्धमानं दिने दिने ।।६।।

वह नाड़ी तीन तरह से टेढ़े मेढ़े होकर सर्वदा शुक्र से विभूषित है । जिसमें से एक नाड़ी ऊपर उठकर सहस्रार की ओर चली गयी है और उसी में शुक्र स्थित है । इसी के कारण से दोनों स्तनों की भी दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती रहती है ।।५-६।।

मध्यनालं सुषुम्णान्तं वृत्ताकारं सुशीतलम् ।
आयोन्यग्रमधोनालं सदानन्दमयि शिवे ।।७।।

हे शिवे ! सुषुम्णा के अन्त में एक मध्य नाड़ी है जो शीतल है और यही नाड़ी नीचे की ओर चली गयी है। वही सम्पूर्ण आनन्द को देने वाली है ।।७।।

शृणु चार्वङ्गि सुभगे तन्मध्ये लिङ्गताडनात् ।
यद्रूपं परमानन्दं तन्नास्ति भुवनत्रये ।।८।।

हे सुन्दरी ! वहीं पर लिङ्ग अवस्थित है वही समस्त त्रिभुवन में परम आनन्द को देनेवाला है और उसी से आनन्द की भी प्राप्ति होती है ।।८।।

नाभिपद्मन्तु यद्रूपं तच्छृणुष्व समाहितता: ।
बिन्दुस्थानं मध्यदेशे सदा पद्मविराजितम् ।।९।।

वह नाभि पद्म तक फैला हुआ है और उसी स्थान पर एक विन्दु है, जिसके मध्य में सदा ही पद्मनाड़ी विराजमान है ।।९।।

बाह्यदेशे चाष्टपत्रं चतुरस्रं तु तद्बहिः ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं सुवर्णाभं सवृत्तकम् ।।१०।।

बाहर से वह अष्टदल कमल की तरह चारो तरफ से लिपटा हुआ है और वह चार द्वारों से युक्त होकर सोने की आभा लिये गोलाकार रूप में फैला हुआ है ।।१०।।

तत्पत्रेण भवेत्पुष्पं वृत्तयुक्तं त्रिपत्रकम् ।
प्रफुल्ले तु त्रिपत्रारे बाह्ये रुधिरदर्शनम् ।।११।।

उसी अष्टदल कमलपत्र में वीर्य होता है, जो गोलाकार रूप में त्रिपत्रक अर्थात् तीन भागों में हो गया है और उसी के विकसित होने से मासिक धर्म का दर्शन होता है ।।११।।

एतन्मध्ये महेशानि यदि स्याल्लिङ्गताडनम् ।
पद्ममध्ये गते शुक्रे सन्ततिस्तेन जायते[1] ।।१२।।

---

[1] एतन्मध्ये इत्यादि । तत्रापि कालादिनियममाह— शाक्तानन्दतरङ्गिणीप्रथमपरिच्छेदधृतज्ञान-भाष्ये— रजस्वला च या नारी विशुद्धा पञ्चमे दिने । पीडिता कामवाणेन ततः पुरुष-मीहते ।। भगलिङ्गसमायोगान्मैथुनं स्यात् तदा तयोः । अन्योऽन्यस्पर्शनादेव जायते च महासुखम् । क्षरते च यदा रेतः प्राणापानविसंश्रितम् । क्षितिरापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।। सर्वेषां तत्र तत्वं स्याद्देहस्थरक्तबीजयोः ।। इति ।

पद्ममध्ये इत्यादि । पद्ममध्ये शुक्रगमनप्रकारस्तु प्रपञ्चसारे— स्वस्थानतश्च्युताच्छुक्राद् बिन्दुमादाय मारुतः । गर्भाशयं प्रविशति यदा तुल्यं तदापरः ।। आर्त्तवात् परमं बीजमादायास्याश्च मूलतः । यदा गर्भाशयं नेष्यत्यथ संमिश्रयेनन्मरुत् ।। संक्षोभ्य संवर्द्धयति तन्मलं शोणिताधिकम् । स्त्री स्याच्छुक्राधिकं ना स्यात् समेन च नपुंसकम् ।। वायुवह्न्यम्भसां योगे गर्भ-

......क्रमशः

उसी के मध्य में जब लिङ्ग का प्रवेश एवम् पूर्ण घर्षण होता है और उसी के संयोग से जब शुक्राणु पद्मनाड़ी में प्रवेश करता है तभी सन्तानोत्पत्ति होती है ।।१२।।

पुत्र-कन्यादिजन्मकथनम्

पुरुषस्य तु यच्छुक्रं शक्तेरक्ताधिको भवेत् ।
तदा कन्या भवेद्देवि विपरीतः पुमान् भवेत्[1] ।।१३।।
उभयोस्तुल्यशुक्रेण क्लीवं भवति निश्चितम्[2] ।।१४।।

यदि पुरुष के शुक्र (वीर्य के कीटाणु) स्त्री के रज (रक्त के कीटाणु) से अधिक होते हैं तो पुत्र और स्त्री के रज (रक्त के कीटाणु) पुरुष के शुक्र (वीर्य के कीटाणु) से अधिक होते हैं तो कन्या सन्तान की उत्पत्ति होती है। यदि दोनों कीटाणु समान मात्रा में होते हैं, तो नपुंसक सन्तान की उत्पत्ति होती है ।।१३-१४।।

शृणु चार्वङ्गि सुभगे पुष्पमाहात्म्यमुत्तमम् ।
मध्ये तच्छुक्रसंयोगे वर्द्धते तद्दिने दिने ।
एवंदिङ्मासस्म्प्राप्ते तत्पुष्पं वृत्तसंयुतम् ।।१५।।
गलिते परमेशानि व्यक्तो भवति सन्ततिः ।।१६।।

हे सन्दरी सुनो ! यही पुरुषशुक्र की पूर्ण विशेषता है। इसी के मध्य में शुक्र दिन-प्रतिदिन बढ़ते रहते हैं और एक मास के बाद में गोलाकार रूप में हो जाते हैं। हे परमेश्वरी ! सन्तान किस प्रकार होता है हमने इसे ही व्यक्त किया है ।।१५-१६।।

वृद्धिः प्रजायते । तथा ज्ञानभाष्ये— नाभिपद्मे महादेवि भ्राम्यते च समीरणैः । कुम्भकारो यथा चक्रे घटते च घटादिकम् ।। तथा समीरणो गर्भे घटते प्राणिनां तनुम् ।

वीर्यवद्गर्भकारणमुक्तं राघवभट्टधृताध्यात्मविवेके— पूर्णषोडशवर्षा स्त्री पूर्णविंशेन सङ्गता । शुद्धगर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिले हृदि ।। वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनाब्दयोः पुनः । रोगाल्पायुरधन्यो वा गर्भो भवति नैव वा ।। इति ।

[1] पुरुषस्येत्यादि । शारदातिलकेऽप्युक्तम्— रक्ताधिका भवेन्नारी भवेद्रेतोऽधिकः पुमान् । उभयोः समतायान्तु नपुंसकमिति स्थितिः ।

[2] उभयोरित्यादि । तत्राधिकतुल्यतादिकं प्रमाणीकृतं राघवभट्टेन— द्वाविंशती रजोभागाः शुक्रमात्राश्चतुर्दश । गर्भसञ्जनने काले पुंस्त्रियोः सम्भवन्ति हि ।। नारी । रजोऽधिकांशे स्यान्नरः शुक्राधिकांशके । उभयोरुक्तसंख्यायां स्यान्नपुंसकसम्भवः ।। इति ।

श्रीदेव्युवाच

किञ्चिद्रोगादिसम्भूते कृमिकीटादिसम्भवे ।
तस्मज्जीवं प्रणश्यन्ति सा नारी जीव्यते कथम् ।।१७।।

श्रीदेवी बोली– हे स्वामी ! किस प्रकार के रोगादि होते हैं, जिससे कि कीटाणु पैदा होते हैं और वह गर्भ नष्ट हो जाता है तथा नारी कैसे जीवित रह जाती है, यह भी बताने की कृपा करें ।।१७।।

पुष्पमाहात्म्यकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

अस्य पुष्पस्य माहात्म्यं किं वक्तुं शक्यते मया ।
बिन्दुस्थानं सहस्रन्तु पुष्पमध्ये प्रियंवदे ।।१८।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे प्रिये ! इस ऋतुकाल (पुष्प) का मैं वर्णन कैसे कर सकता हूँ, जबकि उस बिन्दु स्थान में हजारों पुष्प के मध्य में वह रहता है ।।१८।।

बुद्बुदा यत्र तिष्ठन्ति तत्रैव सन्ततिर्भवेत् ।
एवं क्रमेण देवेशि सहस्रं सन्ततिर्यदि ।
वर्द्धमानं महापुष्पं पीडा किञ्चिन्न जायते ।।१९।।

जब बुदबुदा होकर शुक्राणु स्थित हो जाता है तभी सन्तानोत्पत्ति होती है इसी क्रम से हजारों हजार सन्तान उत्पन्न हो सकते हैं। वह गर्भपुष्प धीरे धीरे बढ़ता है, पर वह लेशमात्र भी पीड़ा नहीं देता ।।१९।।

मया सार्द्धं महेशानि विहारं कुरु यत्नतः ।
विहारे यो भवेत्पुत्रो गणेशः स च कीर्त्तितः ।।२०।।

हे देवि ! यह जानकर तुम मुझसे विहार अर्थात् समागम करने का प्रयत्न करो जिससे कि गणेश जैसा पुत्र उत्पन्न होकर सर्वत्र कीर्तिमान स्थापित करे ।।२०।।

अपरे परेशानि तव पुत्र प्रसादतः ।
पृथिव्यां जायते सृष्टिर्निर्विघ्नेन यथोचितम् ।।२१।।

हे गिरिजे ! यह जानकर तुम मुझसे पुत्र की इच्छा से प्रेरित होकर समागम किया करो और इसी क्रम से ही पृथ्वी पर निर्विघ्न रूप से सृष्टिक्रम प्रारम्भ है ।।२१।।

एतच्छ्रुत्वा ततो देवि मदनानलविह्वला।
शिवेनालिङ्गिता देवी शिवाकारेण वै तदा।।२२।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे द्वितीयः पटलः ।।२।।

यह सुनकर गिरिजा काम विह्वल होकर शिव से आलिङ्गनवद्ध होकर शिव के लिङ्ग को अपने गुप्ताङ्गों में समाहित कर लिया और शिवाकार हो गयीं ।।२२।।

इस प्रकार शिव-पार्वती संवाद रूप में मातृकाभेदतन्त्र का
द्वितीय पटल समाप्त ।।२।।

तृतीयः पटलः

भोगस्य मोक्षकारणतायां देव्याः प्रश्नः

श्रीदेव्युवाच

सर्वत्राहं श्रुता नाथ भोगं चेन्द्रियपुष्टिदम् ।
भोगेन मोक्षमाप्नोति कथं वदसि योगभृत् ।।१।।

श्रीदेवी बोली– हे स्वामी ! सर्वत्र यह सुनती आयी हूँ कि भोग से इन्द्रिय पुष्ट होता है । योगाचार्यों का मत है कि भोग से ही योग की प्राप्ति होती है तथा योग से मोक्ष की प्राप्ति होती है ।।१।।

भोगस्य मोक्षकारणत्वकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

भोगेन लभते योगं भोगेन कुलसाधनम् ।
भोगेन सिद्धिमाप्नोति भोगेन मोक्षमाप्नुयात् ।।२।।

श्रीशङ्कर जी बोले– भोग से ही योग की प्राप्ति होती है, भोग के ही द्वारा ही वंश परम्परा चलती है । भोग के द्वारा कौलमार्ग (कुलमार्ग) की भी उपासना होती है और कुलोपासना के द्वारा भी सिद्धि मिलती है ।।२।।

तस्माद्भोगं सदा कार्यं बाह्यपूजा यथेच्छया ।
भोजनस्य विधानं यत्तच्छृणुष्व प्रियंवदे ।।३।।

इसलिये नियमित रूप से भोग करना चाहिये और भोग के साथ बाह्य पूजा भी करनी चाहिये । भोजन विधान की तरह भोग और उपासना दोनों ही अति आवश्यक है ।।३।।

मूलाधारे तु या शक्तिर्भुजगाकाररूपिणी ।
जीवात्मा परमेशानि तन्मध्ये वर्त्तते सदा ।।४।।

हे देवि ! मूलाधार में जो कुण्डलिनि शक्ति है, वह सर्प की तरह लिपटी हुयी है, उसी के मध्य में जीवात्मा (प्राणशक्ति) का निवास स्थान है । यहीं उसका स्थायी निवास भी है ।।४।।

भोजनेच्छा भवेत्तस्मान्निर्ल्लिप्तो जीवसंज्ञकः ।
सैव साक्षाद् गुणमयी निर्गुणो जीव उच्यते ।।५।।

निर्लिप्त जीव संज्ञक अर्थात् शरीर को भोजन की इच्छा होती है । यही साक्षात् गुणामय भी है, जिसमें निर्गुण जीवात्मा भी निवास करता है ।।५।।

जीवस्य भोजनं देवि भ्रान्तिरेव न संशयः ।
गुणयुक्ता कुण्डलिनी चन्द्र-सूर्याग्निरूपिणी ।।६।।

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि जीव अर्थात् शरीर को भोजन की आवश्यकता है और उसी में गुणयुक्त कुण्डलिनी शक्ति जो कि सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि के समान है, स्थित है ।।६।।

मूलाधाराच्च तां देवीमाजिह्वान्तां विभावयेत् ।
शोधितान् मत्स्यमांसादीन्सम्मुखे स्थापयेद् बुधः[1] ।।७।।

यह मूलाधार से जिह्वा पर्यन्त स्थित है; इसीलिये साधकवर्ग मांस-मछली आदि को मन्त्रों से शोधित करके ही सेवन करते हैं ।।७।।

मूलमन्त्रं समुच्चार्य जुहोमि कुण्डलीमुखे ।
अनेन मनुना देवि प्रतिग्रासं समाहरेत् ।।८।।

इसीकारण मूलमन्त्रों के द्वारा शोधित करके ही इसे कुण्डलिनि के मुख में ग्रास-प्रतिग्रास उक्त वस्तुओं का सेवन किया जाता है ।।८।।

प्रतिग्रासे परेशानि एवं कुर्याद्विचक्षणः ।
तदैव ब्रह्मरूपोऽसौ सत्यं सत्यं सुरेश्वरि ।।९।।

हे परमेश्वरी ! ग्रास-प्रतिग्रास रूप में इसके सेवन करने से ये ब्रह्मस्वरूप में स्थित हो जाते हैं । यही सत्य है, सत्य ही नहीं यही परम सत्य है ।।९।।

भुज्यते कुण्डली देवी इति चिन्तापरो हि यः ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य ज्ञानसिद्धिर्न चान्यथा ।।१०।।

जिसे कुण्डलिनि शक्ति निर्लिप्त भाव से सेवन करती है उससे भी मन्त्रों की सिद्धि होती है और इसके उपरान्त ही ज्ञान की प्राप्ति होती है, यह अन्यथा नहीं है ।।१०।।

एवं कृते ब्रह्मरूपः शिवरूपः स्वयं हरिः ।
योगसिद्धिर्भवेत्तस्य चाष्टसिद्धिर्भविष्यति ।।११।।

---

[1] शोधितानित्यादि । मत्स्यमांसादिशोधनमाह महानिर्वाणतन्त्रे पञ्चमोल्लासे— मांसमानीय पुरतस्त्रिकोणमण्डलोपरि । फटाभ्युक्ष्य वायुवह्निबीजाभ्यां मन्त्रयेत्त्रिधा ।। कवचेनावगुण्ठयाथ संरक्षेच्चास्त्रमन्त्रतः । धेन्वा वममृतीकृत्य मन्त्रमेतदुदीरयेत् ।। विष्णोवक्षसि या देवी या देवी शङ्करस्य च । मांसं मे पवित्रीकुरु कुरु तद्विष्णोः परमं पदम् ।। इत्थं मीनं समानीय प्रोक्तमन्त्रेण संस्कृतम् । मन्त्रेणानेन मतिमांस्तं मीनमभिमन्त्रयेत् ।। "ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । *अथवा* सर्वतत्वानि मूलेनैव विशोधयेत् । केवलं मूलमन्त्रेण यद्द्रव्यं शोधितं भवेत् ।। तदेव देवताप्रीत्यै सुप्रशस्तं मयोच्यते ।। इति ।

इस प्रकार की क्रिया से साधकवर्ग ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त करता है तथा वह ब्रह्म स्वरूप होकर शिव रूप और विष्णु रूप को भी प्राप्त करता है ॥११॥

शत्रुभिर्दीयते यत्तु कृत्रिमं दारुणं विषम् ।
भक्षणात्तत्क्षणे देवि ह्यमृतं नात्र संशय ।।१२।।

यदि शत्रु भी कष्ट पहुँचाने के लिये विष (जहर) देते हैं तो वह भी सेवन करने पर वह तुरन्त ही अमृत तुल्य हो जाता है, इसमें भी कोई संशय नहीं है ॥१२॥

मन्त्रेण शोधितं द्रव्यं भक्षणादमृतं भवेत् ।
यदैव कालकूटन्तु समुद्रमथने प्रिये ।।१३।।
तदा चानेन मनुना तत्क्षणात् खादितं मया ।।१४।।

हे प्रिये ! समुद्र मन्थन से प्राप्त कालकूट (अत्यधिक तेज जहर) नामक भयङ्कर विष भी मन्त्रों द्वारा शोधन करके, सेवन करने से वह भी अमृत तुल्य हो जाता है। अन्य कोई भी पदार्थ यदि शोधन करके प्रयोग किया जाय तो वह भी अमृत तुल्य हो जाता है ॥१३-१४॥

सर्पाकारा कुण्डलिनी या देवी परमा कला ।
भुज्यते सर्परूपेण तत्रैव दारुणं विषम् ।।१५।।

हे देवि ! सर्पाकार रूप में स्थित कुण्डलिनी शक्ति, जो कि सम्पूर्ण कलाओं से पूर्ण है; वह सर्प रूप में सारे विष का सेवन कर लेती है ॥१५॥

इति ते कथितं कान्ते भोजनस्य विधानकम् ।
एतत्सर्वं महेशानि गोप्तव्यं पशुसङ्कटे ।।१६।।

हे महेशानी ! इस प्रकार से मैंने भोजन विधान का वर्णन किया। इसे अत्यन्त गोपनीय रखना चाहिये। यहाँ तक कि इसे पाश्विक प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों द्वारा सङ्कट उपस्थित होने पर नहीं कहना चाहिये ॥१६॥

होमकुण्डविषयकजिज्ञासा

श्रीदेव्युवाच

शृणु नाथ परानन्द परापरकुलात्मक ।
वद मे परमेशान होमकुण्डन्तु कीदृशम् ।।१७।।

श्रीदेवी बोलीं– हे नाथ ! सुनिये, कौलिक उपासना में परमानन्ददायक होमकुण्ड किस प्रकार का होता है। हे महेश ! हमें बताने की कृपा करें ॥१७॥

चतुर्विधहोमकुण्डकथनम्

श्रीशिव उवाच

मणिपूरस्य बाह्ये तु नाभिपद्मं मनोहरम् ।
अष्टपत्रं तथा वृत्तं तन्मध्ये कुण्ड दुर्लभम् ।।१८।।

श्री शङ्कर जी बोले– मणिपुरचक्र के ऊपर नाभिपद्म है जो अत्यन्त सुन्दर है और अष्टदल कमल के भीतर गोलाकार रूप में ही यह दुर्लभ कुण्डलिनी शक्ति स्थित है ।।१८।।

चतुरस्रादिकं देवि तत्कुण्डं कामरूपकम् ।
सर्वकुण्डस्य देवेशि विप्रः कर्त्ता विधीयते[१] ।।१९।।
वर्त्तुलं बाहुजातस्य वैश्यस्य चार्द्धचन्द्रकम् ।।२०।।

चार कोणों वाला कुण्ड सभी प्रकार के कामनाओं को पूर्ण करने वाला तथा परमानन्द को देने वाला है । सभी प्रकार के कुण्डों के कर्त्ता को ब्राह्मण कहा गया है । गोलाकार वाला कुण्ड सभी जातियों के लिये तथा वैश्यों के लिये अर्द्धचन्द्राकार कुण्ड होना चाहिये ।।१९-२०।।

त्रिकोणं पादजातस्य होमकुण्डं सुरेश्वरिं ।
एवं कुण्डं महेशानि नालत्रयविभूषितम् ।।२१।।

तीन कोणों वाला कुण्ड शूद्रों के लिये कहा गया है और यह कुण्ड तीन नाड़ियों से सुशोभित होता है, यही हवनकुण्ड है ।।२१।।

ऊर्ध्वनालं सहस्रारे परामृतविभूषितम् ।
मध्यनालं नाभिपद्मे मूलाधारे च सुन्दरि ।।२२।।

हे सुन्दरी ! ऊपर की ओर जो नाल है, वही सहस्रार है जो सदा अमृत से विभूषित है । मध्यनाल मूलाधार से ऊपर है और यही नाभिपद्म कहलाता है।।२२।।

आलिङ्गाग्रमधोनालं सदानन्दमयं शिवे ।
होमकुण्डमिदं देवि सर्वतन्त्रे परिष्कृतम् ।।२३।।

हे देवि ! नीचे की ओर का नाल आलिङ्गन करने पर वह सदा आनन्द देने वाला है । यही होमकुण्ड है, जो सभी प्रकार के तन्त्रों से वर्णित है।। २३।।

चतुर्विधाहुतिकथनम्, मुक्तिकथनञ्च

येन होमप्रसादेन साक्षाद् ब्रह्ममयो भवेत् ।
विप्रस्य चाहुतिर्होमें विज्ञातव्यं चतुष्टयम् ।।२४।।

---

[१] चतुरस्र इत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं तन्त्रान्तरतन्त्रेऽपि— विप्राणां चतुरस्रं स्याद् राज्ञां वर्त्तुलमिष्यते । वैश्यानामर्द्धचन्द्राभं शूद्राणां त्र्यस्त्रमीरितम् ।। इति ।

इसमें हवन करने पर साक्षात् ब्रह्ममय स्वरूप की प्राप्ति होती है, जिसमें ब्राह्मण वर्ग आहुति देते हैं वह चार कोणों वाला हवनकुण्ड है ॥ २४॥

क्षत्रियस्य त्रयं देवि वैश्यस्य चाहुतिद्वयम् ।
शूद्रस्यैकाहुतिर्देवि मुक्तिश्चापि चतुर्विधा ।।२५।।

हे देवि ! क्षत्रियों के लिये तीन कोणों वाले कुण्ड में तीन बार, वैश्यों के लिये अर्द्धचन्द्राकार कुण्ड में दो बार आहुति देने को कहा गया है। शूद्रों को एक आहुति देना चाहिये इसी से धर्म-अर्थ-काम एवं मोक्ष की भी प्राप्ति होती है ॥२५॥

महामोक्षं ब्राह्मणस्य सायुज्यं क्षत्रियस्य च ।
सारूप्यञ्चोरुजातस्य सालोक्यं शूद्रजातिषु[१] ।।२६।।

इसी से ब्राह्मणों को महामोक्ष, क्षत्रियों को सानिध्य, वैश्यों को स्वरूप और शूद्रों को दर्शन लाभ की प्राप्ति होती है ॥२६॥

बाह्यकुण्ड-होमज्ञान, होमविमर्शः

बाह्यकुण्डं बाह्यहोमे एवं हि सुरवन्दिते ।
जातिभेदे कुण्डभेदं कुर्यात् साधकसत्तमः ।।२७।।

जो बाहरी हवनकुण्ड है वह बाहर से हवन करने के लिये है जैसा कि यह देवताओं के द्वारा वर्णित किया गया है। उपासक वर्ग जातिभेद के अनुसार भी कुण्ड का निर्माण करते हैं ॥ २७॥

बाह्यहोमे काम्यसिद्धिर्भविष्यति न संशयः ।
ज्ञानहोमे मोक्षसिद्धिर्लभते नात्र संशयः ।।२८।।

बाहरी हवन कुण्ड में हवन करने से कार्यसिद्धि होती है इसमें संशय नहीं है। ज्ञान कुण्ड में हवन करने से मोक्ष एवम् सिद्धि की प्राप्ति होती है इसमें भी किसी प्रकार का संशय नहीं है ॥२८॥

इति ते कथितं कान्ते तन्त्राणां सारमुत्तमम् ।
न वक्तव्यं पशोरग्रे शपथो मे त्वयि प्रिये ।।२९।।

हे देवि ! मैंने सारे तन्त्रग्रन्थों का सारतत्त्व तुम्हें समझा दिया है। हे प्रिये ! तुम्हें मेरा सौगन्ध है कि इसे किसी के सामने कभी भी व्यक्त मत करना। यहाँ तक कि पाश्विक प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों के समक्ष भी इसके रहस्य को कभी भी व्यक्त नहीं कहना चाहिये ॥ २९॥

---

[१] महामोक्षमित्यादि। अत्र संवादि प्रमाणन्तु निर्वाणतन्त्रे द्वितीपटले:—ब्राह्मणस्य महामोक्षं सायुज्यं क्षत्रियस्य च। सारूप्यञ्चोरुजातस्य शूद्रस्य सहलोकताम् ॥ इति।

मद्यपानविषये जिज्ञासा, मद्यपानव्यवस्था च

श्रीदेव्युवाच

मद्यपाने महापुण्यं सर्वतन्त्रे श्रुतं मया ।
जातिभेदं न कथितमिदानीं तत्प्रकाशय ।।३०।।

श्रीदेवी बोलीं– हे नाथ ! सर्वत्र सुना गया है कि मद्यपान[1] (सूरा) का सेवन अत्यन्त पुण्यकार्य है, इसमें किसी भी प्रकार का जातिभेद भी नहीं है, इसपर भी प्रकाश डालने की कृपा करें ।।३०।।

श्रीशङ्कर उवाच

सर्वयज्ञाधिपो विप्रः संशयो नास्ति पार्वति ।
सौत्रामण्यां कुलाचारे चत्वारो ब्राह्मणादयः ।।३१।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे पार्वती ! इसमें कोई सन्देह नहीं कि सभी यज्ञों का कर्त्ता ब्राह्मण होता है पर कौल (कुल) मार्ग की उपासना में चारो वर्ण के लोग स्वतः ही ब्राह्मण हो जाते हैं ।।३१।।

ब्राह्मणस्य महामोक्षं मद्यपाने प्रियंवदे ।
ब्राह्मणः परमेशानि यदि पानादिकञ्चरेत्[2] ।।३२।।
तत्क्षणाच्छिवरूपोऽसौ सत्यं सत्यं हि शैलजे ।।३३।।

हे प्रिये ! मद्यपान से ब्राह्मणों को महामोक्ष की प्राप्ति होती है। हे परमेश्वरी ! यदि ब्राह्मण अधिक मद्यपान करे तो वह निश्चित रूप से साक्षात् शिव स्वरूप हो जाता है । हे शैलपुत्री ! इसे सत्य ही नहीं पूर्ण सत्य जानो कि वह तत्काल ही शिवस्वरूप हो जाता है ।।३२-३३।।

तोये तोयं यथा लीनं यथा तेजसि तेजसम् ।
घटे भग्ने यथाऽऽकाशं वायौ वायुर्यथा प्रिये ।।३४।।

---

[1] सहस्रार से टपकने वाले अमृत को ही तन्त्र के साङ्केतिक भाषा में मद्य कहा गया है ।

[2] ब्राह्मणस्येत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं गुप्तसाधनतन्त्रे सप्तमपटले— यदि विप्रो भवेद्देवि पञ्चतत्वपरायणः । सत्यं सत्यं महेशानि परतत्वे प्रलीयते । यथा जलं तोयमध्ये लीयते परमेश्वरि । तथैव तत्त्वसेवायां लीयते परमात्मनि ।। क्षत्रियः परमेशानि सहयोगे वसेद् ध्रुवम् । वैश्यस्तु लभते देवि स्वरूपं नात्र संशयः । शूद्रस्तु परमेशानि सहलोके सदा वसेत् । एतदन्यो महेशानि यदि तत्वपरायणः ।। सत्यं सत्यं महेशानि मुक्तिफलमखण्डितम् । सेनानीः परमेशानि देवीदेहे प्रलीयते । शोधनञ्च मया प्रोक्तं नीलतन्त्रादियामले । न कस्मैचित् प्रवक्तव्यं प्रकाशाच्छिवहा भवेत् ।। इति ।

हे प्रिये ! जिस तरह जल में जल विलीन हो जाता है उसी प्रकार तेज भी तेज में विलीन हो जाता है, जिस तरह घड़ा (यह शरीर) फुटकर आकाश में विलीन हो जाता है और वायु अपने आप वायु में ही विलीन हो जाता है ।।३४।।

सशक्तिचतुर्वर्णानां मद्यपानप्रशंसा

तथैव मद्यपानेन ब्राह्मणो ब्रह्मणि प्रिये ।
लीयते नाऽत्र सन्देहः परमात्मनि शैलजे ।।३५।।

हे प्रिय ! ब्राह्मणों एवम् ब्राह्मणियों के लिये मद्यपान आवश्यक है। हे शैलपुत्री ! ये निश्चित रूप से शिवस्वरूप अर्थात् परमात्मा में लीन हो जाते हैं इसमें किसी भी प्रकार का संदेह नहीं ।।३५।।

सायुज्यादि महामोक्षं नियुक्तं क्षत्रियादिषु ।
सा नारी मानवी मद्यपाने देवि न संशयः ।।३६।।

हे देवि ! क्षत्रियों को यह समीपता लाकर महामोक्ष देता है । नारी यदि इसका सेवन करती हैं तो वह निश्चित रूप से देवी स्वरूप हो जाती हैं इसमें भी कोई संशय नहीं है ।।३६।।

मद्यपानस्य ब्रह्मज्ञानकारणत्वम्

सूक्ष्मसूत्रे यथा वह्निर्दहमध्ये तथा शिवा ।
तपोरूपं बृहत्सूत्रं पूजारूपं तथा हरिः ।।३७।।

जिस प्रकार एक पतले धागे में अग्निरूपी शक्ति निवास करती है, उसी प्रकार से तपस्या, उपासना और पूजा सूत्र भगवत्प्राप्ति का आधार है ।।३७।।

संयुक्तं कुरुते यत्र वर्द्धमानो महांकुशः ।
मद्यपानं विना देवि तज्ज्ञानं न हि लभ्यते ।
अत एव हि विप्रेण मद्यपानं सदा चरेत् ।।३८।।

हे देवि ! जो अष्टपाश रूपी महाकुंश है, उस महाकुंश से मद्यपान साधक को मुक्त करता है और विना मद्यपान के ज्ञान की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती है । इसलिये ब्राह्मणों को मद्यपान अवश्य ही करना चाहिये ।।३८।।

वेदमाता जपेनैव ब्राह्मणो न हि शैलजे ।
ब्रह्मज्ञानं यदा देवि तदा ब्राह्मण उच्यते[1] ।।३९।।

---

[1] वेदमातेति । प्रकरणेऽस्मिन् "ब्राह्मणस्य मद्यपानविधायकवचनम्... अभिषिक्तब्राह्मणपरमिति ज्ञातव्यम् । नन्वभिपेके— स्वस्ववर्ण परित्यज्य शिवत्वं लभते ध्रुवमिति वचनादभिपिक्तस्य जातिविचाराभावात् कथमभिपिक्तपरमिति चेत्, सत्यं स्वजातिचिह्न रक्षकस्य

.....क्रमशः

हे शैलपुत्री ! वेद माता (गायत्रीमन्त्र) के जाप से ब्राह्मणों को ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है। हे देवि ! इसीलिए ब्राह्मण लोग इसका उच्चारण करते हैं ॥३९॥

देवानाममृतं ब्रह्म तदियं लौकिकी सुरा ।
सुरत्वं भोगमात्रेण सुरा तेन प्रकीर्तिता ॥४०॥

देवताओं के लिये देवलोक में जो अमृत है, वही अमृत लौकिक जगत् में सुरा है। जिस प्रकार देवता सुरापान कर सुरत्व की प्राप्ति करते हैं और यही इसकी प्रकृति अर्थात् गुण है ॥४०॥

सुरायाः शापमोचनस्य कर्त्तव्यता

मन्त्रत्रयं सदा पाठ्यं ब्रह्मशापादि मोचनम् ।
प्रकुर्यात्तु द्विजेनैव तदा ब्रह्ममयी सुरा[1] ॥४१॥

ज्ञानदुर्वलस्य पानार्थमेतद्वचनमित्यवेहि । अथवाऽभिशप्तसुरापाननिषेधार्थं सुरापाननिषेधकवचनम् । सुरा तु चतुर्युग एव पवित्रकारिणी केवलमभिशापेनैवापेया, अतः शापमोचनपूर्वरूपतया पेयैवे''ति *प्राणतोषिणी । तन्त्रसारकारास्तु तत्वशोधनप्रकारमुक्त्वा* ''एतद्द्रव्यदानन्तु शूद्रस्यैव...। एतद् द्रव्यन्तु शूद्रस्य नान्येषान्तु कदाचन ॥... तद्भावेऽनुकल्पविधानम् । तथा च गोक्षीरं ब्राह्मणो दद्याद् गव्यमाज्यञ्च वाहुजः । ...तेनक्षत्रियादीनां मुख्यस्य दानेऽधिकारो न पाने । यत्तु पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा पतित्वा च महीतले । उत्थाय च पुनः पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥ *भैरवीतन्त्रे*— पाने भ्रान्तिर्भवेद्यस्य घृणा स्याद्रक्तरेतसोः । शुचौ चाशुद्धताभ्रान्तिः पापाशङ्का च मैथुने ॥ स भ्रष्टः पूजयेद्देवीं चण्डीमन्त्रं कथं जपेत् । तथा मदिरायां मैथुने च जातिबृत्तिं न चाचरेत् । एतत्तु चतुर्थाश्रमिपरम्'' इत्युक्तवन्तः । अनयोः पर्यालोचनया ''ब्राह्मणैः पीयते मद्यं न मद्यं द्विजपुङ्गवैः'' इति निरुत्तरतन्त्रपञ्चमपटलीयप्रमाणैकवाक्यतया च एवमेव प्रतीयते यद् एतादृशस्यैव ब्राह्मणस्य मद्यादावधिकारिता न तु केवलं जात्या ब्राह्मणस्य । एवञ्च मद्यपानविधायकवचनेषु ब्राह्मणशब्दस्य विशेषार्थपरत्वे न काचिदनुपपत्तिः स्यादिति सुधीभिश्चिन्त्यम् । कारणस्याग्राह्यत्वविषयकवचनानि तु चतुर्थपटले द्वितीयश्लोकटिप्पण्याम् निवेदयिष्यन्ते ।

[1] मन्त्रत्रयमित्यादि । संक्षेपतो यत्सुराशोधनमुक्तं तन्त्रसारे तदेवोपस्थाप्यते— यथा सुरभाण्डं धृत्वा पठेत्— एकमेव परं ब्रह्म स्थूलसूक्ष्ममयं ध्रुवम् । कचोद्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम ॥ सूर्यमण्डलसम्भूते वरुणालयसम्भवे । अमीबीजमये देविं शुक्राशापाद्विमुच्यताम् ॥ वेदानां प्रणवो बीजं ब्रह्मानन्दमयं यदि । तेन सत्येन ते देवि ब्रह्महत्यां न्यपोहतु ॥ ततः ॐ वां वीं वूं वैं वौं वः ब्रह्मशापविमोचितायै सुरादेव्यै नमः । तदुपरि दशधा जपेत् । ततः ॐ शां शी शूं शैं शौं शः शुक्रशापविमोचितायै सुधादेव्यै नमः । इति तदुपरि दशधा जपेत् । एवं ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं कः कृष्णशापं विमोचयामृतं स्रावय स्वाहेति दशधा जपेत् । ततो मूलमन्त्रं तदुपरि अष्टधा जप्त्वा देवता मयं विभावयेदिति द्रव्यशुद्धिः ।

ब्रह्मादिशाप विमोचन के लिये तीन बार ॐ वां वीं वूं वें वौं वः ब्रह्म शाप विमो चितायै सुरा देव्यै नमः मन्त्र जाप करने के बाद ॐ शां शीं शूं शैं शौं शः शुक्र शाप विमोचिततायै सुधा देव्यै नमः का १० बार जाप करें। फिर ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः कृष्णशापं विमोचयामृतं स्रावये स्वाहा का भी १० बार जाप करें तब सुरा ब्रह्ममय स्वरूप हो जाता है ।।४१।।

हविरारोपमात्रेण वह्निर्दीप्तो यथा भवेत्।
शापमोचनमात्रेण सुरा मुक्तिप्रदायिनी ।।४२।।

जिसप्रकार जलते हुए अग्निकुण्ड में हवन करने से अग्निप्रज्वलित होती है उसीप्रकार सुरा भी शापविमोचन करने के बाद मुक्तिदायक हो जाता है ।।४२।।

अत एव हि देवेशि ब्राह्मणः पानमाचरेत्।
स ब्राह्मणः स वेदज्ञः सोऽग्निहोत्री स दीक्षितः ।।४३।।

हे देवि ! इसकारण ब्राह्मण को इसका पान अवश्य करना चाहिये और इसके बाद ही ब्राह्मण दीक्षित, वेदज्ञ और अग्निहोत्री[1] हो जाता है ।।४३।।

प्रसङ्गतो मुक्तिमार्गनिर्णयः पशुसन्निधौ तन्निर्णये निन्दाकथनञ्च

बहु किं कथ्यते देवि स एव त्रिगुणात्मकः ।।४४।।

हे देवि ! इससे अधिक क्या कहा जाये यह त्रिगुणात्मक है अर्थात् सृष्टि, स्थिति एवम् संहार तीनों का कारक है ।।४४।।

मुक्तिमार्गमिदं देवि गोप्तव्यं पशुसङ्कटे।
प्रकाशात् कार्यहानिः स्यान्निन्दनीयो न चान्यथा ।।४५।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे तृतीयः पटलः ।।३।।

हे देवि ! इस मुक्तिमार्ग को सदैव गोपनीय रखना चाहिये तथा पाश्विक प्रवृत्ति वालों के समक्ष कभी भी नहीं कहना चाहिये। इसकी गोपनीयता नष्ट होने पर हानि होती है एवम् सभी जगह इसकी निन्दा भी होती है ।।४५।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
तीसरा पटल समाप्त ।।३।।

⁂

---

[1] १. अग्निहोत्री अर्थात् ब्राह्मणों का एक वर्ग विशेष जिसका कार्य नित्यप्रति हवन करना है तथा जिनके यहाँ अग्नि सदैव जलती रहती है।

चतुर्थः पटलः

शिवनिर्माल्यस्य कारणस्य च अग्राह्यत्वविषये देव्या जिज्ञासा

श्रीचण्डिकोवाच

कारणेन महामोक्षं निर्माल्येन शिवस्य च।
श्रुतं वेदे पुराणे च तव वक्त्रे सुरेश्वर[1] ।।१।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे देवाधिदेव ! वेद, शास्त्र एवं पुराणों में शिव को देवताओं का भी देवता कहा गया है। क्या कारण है कि शिव अतिपवित्र और स्वच्छ हैं तथा महामोक्ष के भी कारण है? ।।१।।

अग्राह्यं तव निर्माल्यमग्राह्यं कारणं विभो।
मृषा वाक्यं महादेव कथं वदसि योगभृत्[2] ।।२।।

---

१. निर्माल्येनेत्यादि। अत्र संवादि प्रमाणम्— शिवदत्तं विष्णुदत्तं गिरिजादत्तमेव च। नैवेद्यमुदरे कृत्वा नरः सायुज्यमाप्नुयात्।। इति। तथा— रोगं हरति निर्माल्यं शोकन्तु चरणोदकम्। नैवेद्यं सर्वपापानि शम्भोर्दहति निश्चितम्। इति हरतत्वदीधितिधृततन्त्रकौमुदीवचनद्वयम्।

२. अग्राह्यमित्यादि। शिवनिर्माल्यस्याग्राह्यतोक्ता कालिकापुराणे— अग्राह्यं शिवनिर्माल्यं पत्रं पुष्पं फलं जलमिति। पद्मपुराणे च— द्रव्यमन्नं फलं तोयं शिवस्य न स्पृशेत् क्वचित्। न नयेच्छिवनिर्माल्यं कूपे सर्वं विनिक्षिपेत्।। मक्षिकापादमात्रं यः शिवस्वमुपजीवति। लोभान्मोहात्पतत्येव कल्पान्तं नरके नरः।। इति। पुराणसंग्रहेऽपि— शिव उवाच। अनर्हं मम नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम्। शालग्रामशिलालग्नं सर्वं याति पवित्रमात्। नैवेद्यञ्च नरो भुक्त्वा शुद्ध्यै चान्द्रायणञ्चरेदिति एतदेव देव्याः प्रश्ने बीजम्।

अत्र देव्याः प्रश्ने बीजरूपेण वचनान्युच्यन्ते— तथा च रुद्रयामले— वेदत्यागान्मद्यपाना च शूद्रदारनिषेवणात्। तत्क्षणाज्जायते विप्रश्चण्डालादपि गर्हितः। इति। काली कुलार्णवे— सुरा वै मलमन्नानां पुरीषं मलमुच्यते। तस्माद् ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबेत्।। सुरादर्शनमात्रेण कुर्यात्सूर्यावलोकनम्। तत्समाघ्राणमात्रेण प्राणायामत्रयञ्चरेदिति।। कुब्जिकातन्त्रे च— भुक्त्वा मत्स्यञ्च मांसञ्च स्पृष्ट्वा हेतुञ्च भैरवि। त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यतीति।। कालीकुलामृते चतुर्थपटले च— ब्राह्मणस्तु सुरां दत्वा ब्राह्मण्यादेव हीयते। ब्राह्मणः पशुराख्यातः पाशवं कल्पमाचरेत्।। इति। वाराहीतन्त्रे नवमपटले च— मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मैथुनं परमेश्वरि। मानुषेण वलिं पञ्च ब्राह्मणो न स्मरेत्क्वचित्।। इति। श्रीक्रमे च— न दद्याद् ब्राह्मणो मद्यं महादेव्यै कथञ्चन। वामकामो ब्राह्मणोऽपि मद्यं मांसं न भक्षयेत्।। इति। कुलचूडामणौ च— यत्रासवमवश्यन्तु ब्राह्मणस्तु विशेषतः। गुडार्द्रकं तदा दद्यात्ताम्रेवा विसृजेन्मधु।। इति। मेरुतन्त्रे प्रथमपटले: वामामर्गेण तच्चाद्यवर्णं हित्वा प्रशस्यते। ब्राह्मणस्तु सुरां पीत्वा रौरवं नरकं व्रजेत्। वाममार्गी ब्राह्मणोऽपि मद्यं मांसं न भक्षयेत्।। इति।

हे विश्व के कल्याणकारक ! पवित्रता में ग्रहण नहीं करने योग्य वस्तुओं का ग्रहण क्यों नहीं करते हैं। हे महादेव ! योग योगादि के सम्बन्ध में आप प्रकाश डालने की कृपा करें ।।२।।

काणोपन्यासेन सुरानिर्माल्ययोः प्रशंसाकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
तत्तत्सर्वं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।।३।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि ! तुम मुझसे जो सुनना जानना चाहती हो उसे ध्यानपूर्वक सुनने का प्रयास करो और उसे धारण भी करो। इस सम्बन्ध में मैं विस्तार से कह रहा हूँ ।।३।।

चतुरशीतिलक्षेषु योनिगर्त्ते तथैव हि ।
भ्रमणं कुरुते जीवस्ततो मोक्षस्य भाजनम् ।।४।।

चौरासी लाख योनियों में भटकता हुआ हर जीव मोक्ष की कामना करता है। उसे मोक्ष की चाह ही कई योनियों में भटकाती रहती है ।।४।।

एतन्मध्ये महाज्ञानं यदि स्याद्वीरवन्दिते ।
तदा मोक्षमवाप्नोति भ्रमणं केन वा भवेत् ।।५।।

इसी क्रम में यदि मोक्ष और ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है तो वह मोक्ष प्राप्त होने पर योनियों के भटकाव के बीच में ही मुक्त हो जाता है ।।५।।

अत एव महेशानि गुप्तभावमयाकृतम् ।
यस्य जन्म न पूर्णत्वं स कथं मोक्षभाजनम् ।
यस्य पापाधिकं देवि स कथं स्वर्गभाजनम् ।।६।।

हे महेशानी ! यह अत्यन्त ही गुप्त भाव है; क्योंकि जन्म-जन्मान्तर की पूर्णता मोक्ष के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जिसके पापकर्म पुण्य से अधिक होते हैं उसे स्वर्ग की प्राप्ति कैसे हो सकती है? ।।६।।

अत एव महेशानि गुप्तभावं मया कृतम् ।
निर्माल्येन भवेत्स्वर्गं निर्वाणं सुरया भवेत् ।।७।।

हे महेशानि ! यह अत्यन्त ही गोपनीय है। पवित्रता एवं निष्ठा से ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है; मोक्ष के बाद ही जीव देवस्वरूप हो जाता है ।।७।।

पापयुक्तो हि चाण्डालो निर्माल्यं गृह्यते यदा ।
तदा मोक्षमवाप्नोति शिवरूपी न चान्यथा ।।८।।

पापकर्मयुक्त चाण्डाल भी यदि निर्विकार भाव से कर्म करता है उसे भी मोक्ष की प्राप्ति होती है तथा वह भी शिवस्वरूप हो जाता है यह सत्य है ॥८॥

महापातकयुक्तोऽपि कारणं प्रपिबेद्यदि ।
ज्ञानान्मुक्तिर्भवेत्सत्यं जातिभेदादिकं न हि ।।९।।

अधिकाधिक पापकर्म में रत व्यक्ति भी ज्ञान को प्राप्त करता है तो उसको भी ज्ञानमुक्ति की प्राप्ति होती है इसमें किसी प्रकार का कोई भी जातिभेद नही है ॥९॥

निर्वाणस्य महामोक्षस्य मद्यपानमेव कारणम्

सर्वजातिषु निर्वाणं ज्ञानेन परमेश्वरि ।
अत एव महेशानि गुप्तभावं मया कृतम् ।।१०।।

हे देवि ! किसी भी जाति का व्यक्ति ज्ञानप्राप्ति के बाद मोक्ष को प्राप्त करता है । हे महादेवि ! यही मेरा गुप्तभाव अर्थात् गोपनीय कार्य है ॥१०॥

गुप्तभावार्थयद्वाक्यं परिहासार्थमेव च ।
तदर्थमेव तद्वाक्यं न मिथ्या परमेश्वरि ।।११।।

हे देवि ! इस गोपनीयता को मेरे बातचीत का क्रम मत समझो । यह कभी भी असत्य नहीं हो सकता है अर्थात् यही परम सत्य है ॥११॥

निर्वाणविषये देवि मद्यं परमकारणम् ।
मद्यपानं विना देवि महामोक्षो न लभ्यते ।।१२।।

हे देवि ! मोक्ष प्राप्ति का मूल कारण मद्यपान है । विना मद्यपान के महामोक्ष यानि कि मुक्ति लाभ हो ही नहीं सकता ॥१२॥

गङ्गाम्भसोऽपि कारणस्योत्कर्षनिरूपणम्

श्रीचण्डिकोवाच

गङ्गायां ज्ञानतो मोक्षं तथैव म्रियते यदि ।
गङ्गायाश्चाधिकं नाथ कारणं परदुर्लभम् ।।१३।।

श्रीचण्डिका बोली:– गङ्गा ज्ञानदायिनी और मोक्षदायिनी हैं । यदि गङ्गा स्नान और गङ्गाजल पान किया जाये तो मोक्ष और ज्ञान दोनों की प्राप्ति होती है । हे नाथ ! गङ्गा से और अधिक दुर्लभ क्या है? ॥१३॥

श्रीशङ्कर उवाच

पूर्णब्रह्ममयी देवि सुरादेवि न चान्यथा ।
तस्याश्च षोडशांशैका या गङ्गा सुरपूजिता ।।१४।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि ! सुरा पूर्ण ब्रह्म की प्राप्ति का कारक है यह अन्यथा नहीं है। देवताओं द्वारा पूजित गङ्गा सुरादेवी का मात्र सोलहवां भाग ही है ॥१४॥

तथैव तुलसी देवी शतांशैका सुरेश्वरी ।
विमोक्षार्थी च यो मत्त्यस्तीर्थसेवां न चाचरेत् ॥१५॥

हे पराम्बा ! देवी तुलसी की उपासना के द्वारा मात्र सौवां भाग ही फल प्राप्त होता है। तीर्थयात्रा और तीर्थयात्रियों की सेवा की जो चर्या की गयी है उसका भी अवश्य आचरण करना चाहिये ॥१५॥

प्रसङ्गतो महाशङ्खमालाप्रशंसा, महाशङ्खस्य शालग्रमादौ स्पर्शनिषेधः

यथैव मालिकामध्ये [1]महाशङ्खं विमोक्षदम् ।
तथैव कारणं देवि सदा मोक्षप्रदायकम् ॥१६॥

हे देवि ! सभी मालाओं में महाशङ्ख की माला ही मोक्षदात्री है। इसी कारण से महाशङ्ख की माला से उपासना करने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है ॥१६॥

कारणेन विना देवि मोक्षज्ञानादिकं न हि ।
महाशङ्खं विना देवि न मन्त्रः सिद्धिदायकः ॥१७॥

हे देवि ! क्रिया के विना ज्ञान और मोक्ष की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती। उसी प्रकार महाशङ्ख माला से जप किये विना मन्त्र की सिद्धि नहीं हो सकती ॥१७॥

---

[1] महाशंखमित्यादि। महाशंखमाला वैशिष्ट्यं तत्कारणस्यास्थानः पञ्चाशद्वर्णबीजात्मकत्वकथनेनाह प्राणतोषणीधृतनित्यातन्त्रे द्वितीयपटले—भगरूपा महामाया शुक्रतर्पणतत्परा। जगदाकर्षिणी विद्या जगद् गुह्या वरानने ॥ तत्रैव गृह्यते सारं जगतां बीजरूपकम्। तद्बीजं परमेशानि पञ्चाशद्वर्णरूपकम्। गर्भं प्राप्य भवेदस्थि शिशोर्मज्जासमन्वितम्। तदस्थि त्वर्द्धमप्यस्ति पञ्चाशद्वर्णरूपकम् ॥

महाशंखस्वरूपमाह ताराकल्पे— नृललाटास्थिखण्डेन रचिता जपमालिका। महाशंखमयी माला। इति कर्णनेत्रान्तरस्थास्थिमहाशंखः प्रकीर्तितः। इति च। बृहन्नीलतन्त्रे चतुर्थपटलेऽपि: युद्धे मृतस्य देवेशि चण्डालस्यास्थिकेन च। मस्तकस्य विशेषेण महाशंखः प्रकीर्त्तितः ॥ इति। मुण्डमालातन्त्रे द्वितीयपटलेऽपि— नरांगुल्यस्थिभिर्माला ग्रथिता पर्वभेदतः। सर्वसिद्धिप्रदा मोक्षदायिनी वरवर्णिनि ॥ नाड्या संग्रथिता माला कार्या रक्तेन वाससा। नाडीभिर्ग्रथिता माला महासिद्धिप्रदा प्रिये ॥ इति। महाशंखविशेषस्य वर्जनीयत्वमाह नित्यातन्त्रे— स्वेच्छामृतं स्त्रियं विप्रं तिर्यगयोनिगतं तथा। रोगिणं यवनं वृद्धं दीक्षितञ्चापि वर्जयेत् ॥ ग्राह्यत्वमप्याह तत्रैव— वज्राहतं सर्पदष्टं पतित्वा वा जले मृतम्। व्याघ्रादिनिहतं वापि सम्मुखे वा रणे मृतम् ॥ चण्डालाद्याः प्रधानास्ते अधमाः शूद्रजातयः। इति।

साक्षाद् ब्रह्ममयी माला महाशङ्खाख्यया पुनः ।
शिलायन्त्रे[१] च वृन्दायां गङ्गायां सुरपूजिते ।
नैव स्पृशेन्महाशङ्खं स्पर्शनात्काष्ठवद्भवेत् ।।१८।।

महाशङ्ख की माला साक्षात् ब्रह्म स्वरूप है । इसका स्पर्श सभी को नहीं कराना चाहिये; क्योंकि सभी के स्पर्श मात्र से यह काष्ठवत् हो जायेगा । जिस प्रकार से स्फटिक पर बना यन्त्र, तुलसी और गङ्गा देवताओं के द्वारा पूजित होता है उसी प्रकार महाशङ्ख की माला भी साक्षात् ब्रह्मस्वरूप है ।।१८।।

कारणस्पर्शेन मालाया उत्कर्षः, गङ्गास्पर्शेन च तदभाव इत्यत्र हेतुप्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

गङ्गा तु कारणं वारि मद्यं परमकारणम् ।
कारणस्पर्शमात्रेण मालाः शुद्धा भवन्ति हि ।।१९।।

श्रीचण्डिका बोली– गङ्गा जल का कारण है तो मद्य उससे भी अधिक परमकारण है । इसी से इसके स्पर्शमात्र से माला पूर्णरूप से शुद्ध हो जाता है ।।१९।।

गङ्गास्पर्शेन देवेश काष्ठवन्मालिका कथम् ।
वद मे परमेशान इति मे संशयो हृदि ।।२०।।

हे देवेश ! हे देवताओं के देवता ! लकड़ी (काष्ठ) की बनी माला को गङ्गाजल से स्पर्श क्यों नहीं कराया जाता है । हे परमपूज्य ! मेरे हृदय में नाना प्रकार के प्रश्न उठ रहे हैं ।।२०।।

भगवत उत्तरदानम्

श्रीशङ्कर उवाच

कारणं देवदेवेशि मोक्षदं सर्वजातिषु ।
तथा स्वर्गादिजनकं गङ्गातोयं न संशयः ।।२१।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवताओं की देवी ! इसमें कोई सन्देह नहीं कि गङ्गाजल देवताओं के लिये स्वर्ग का जनक है और इसी से सभी जातियों के लिये भी मोक्ष का कारण भी है ।।२१।।

---

[१] शिलायन्त्रे इत्यादि । उक्तमेतत्स्वतन्त्रतन्त्रेऽपि— आनीयच्छिन्नशीर्षस्य नरस्य पतितस्य च । तुलसीगोमयास्पृष्टं तथा गङ्गोदकेन च ।। यवनब्राह्मणस्यस्य तत्कार्यं साधकैर्जनैः अस्पृश्यं तच्च जानीयाच्छालग्रामशिलादिभिः ।। इति ।

कारणे निवसेद्देवि महाकाली परा कला।
महाविद्या वसेन्नित्यं सुरायां परमेश्वरि ।।२२।।

हे देवि ! इसी क्रिया के योग से महाकाली सभी कलाओं से पूर्ण होकर उसमें निवास करती हैं। हे परामि्बका ! मद्य (सुरा) में दशों महाविद्याओं का स्थायी रूप से नित्य निवास है ॥२२॥

महाशङ्खे वसेन्नित्यं पञ्चाशद्वर्णरूपिणी।
महाविद्या वसेन्नित्यं महाशङ्खे च सर्वदा ।।२३।।

महाशङ्ख में पचासों वर्ण का स्थायी रूप से निवास है और दशों महाविद्यायें भी स्थायी रूप से महाशङ्ख में ही निवास करती है ॥२३॥

गङ्गास्पर्शन मात्रेण गङ्गायां लीयते प्रिये।
काष्ठस्पर्शन मात्रेण काष्ठे वह्निस्तृणे यथा ।।२४।।

हे प्रिये ! गङ्गा के स्पर्शमात्र से गङ्गा उसे अपने में ही ले लती हैं और लकड़ी के स्पर्शमात्र से वह लकड़ी भी अग्नि का एक कण हो जाता है ॥२४॥

गङ्गास्पर्शे तथा देवि गङ्गायां लीयते प्रिये।
तत्क्षणे च महाशङ्खः काष्ठवन्नात्र संशयः ।।२५।।
शिलायन्त्रे तुलस्यादौ तथैव परमेश्वरि ।।२६।।

हे देवि ! जिस प्रकार गङ्गा के स्पर्शमात्र से गङ्गा उसे अपने में धारण कर लेती हैं। हे प्रिये। उसी प्रकार महाशङ्ख की माला गङ्गा स्पर्श से तुरन्त ही लकड़ी के समान हो जाता है। हे परमेश्वरी ! यही स्थिति तुलसी की और शिलायन्त्र की भी होती है ॥२५-२६॥

महाशङ्खमालाप्रशंसा

महाशङ्खाख्यमालायां यो जपेत् साधकोत्तः।
अष्टसिद्धिः करे तस्य स एव शम्भुरव्ययः।
मौलौ गङ्गा स्थिता यस्य गङ्गास्नानेन तस्य किम् ।।२७।।

हे देवि ! श्रेष्ठ साधक महाशङ्ख की माला से ही मन्त्रजाप करते हैं जिसके कारण उन्हें तुरन्त ही आठों प्रकार की सिद्धियों की प्राप्ति होती है और वे साक्षात् शिव स्वरूप हो जाते हैं। मूल रूप से गङ्गा तो उसी में स्थित हैं तो फिर उसे गङ्गा स्नान क्यों कराया जाय ॥२७॥

वाराणसी कामरूपं हरिद्वारं प्रयागकम्।
गण्डकीं बदरिकां देवि गङ्गासागरसङ्गमम् ।।२८।।

यस्य भक्तिर्महाशङ्खे तस्य दर्शनमात्रतः ।
तीर्थस्नानफलं सर्वं लभते नात्र संशयः ।।२९।।

हे देवि ! काशी, कामाख्या, हरिद्वार, प्रयाग इलाहाबाद (त्रिवेणी) गण्डक, बद्रिकाश्रम और गङ्गासागर जैसे तीर्थस्थल हैं । उसी प्रकार महाशङ्ख की माला के स्पर्श व दर्शन मात्र से ही समस्त तीर्थस्नान का फल प्राप्त होता है इसमें भी किसी तरह का सन्देह नहीं है ।।२८-२९।।

इति ते कथितं कान्ते सर्वं परमदुर्लभम् ।
न वक्तव्यं पशोरग्रे प्राणान्ते परमेश्वरि ।।३०।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे चतुर्थः पटलः ।।४।।

हे परमेश्वरी ! इस परम दुर्लभ रहस्य को तुम्हारे समक्ष कह दिया है इसे सदा गोपनीय रखना और मूर्खों के समक्ष कभी नहीं कहना ।।३०।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
चौथा पटल समाप्त ।।४।।

पञ्चमः पटलः

पारदभस्मनिर्माणप्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

पारदं भस्मनिर्माणं केनोपायेन शङ्कर ।
तदहं श्रोतुमिच्छामि यदि तेऽस्ति कृपा मयि ।।१।।

श्रीचण्डिका बोली– हे शिव ! पारदभस्म का निर्माण किस प्रकार होता है, जानने की मेरी प्रबल इच्छा है। यदि आपका स्नेह मुझ पर हो तो इसे बताने की कृपा करें ।।१।।

महादेवस्य तदर्थे शान्तेः कर्त्तव्यताकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

पारदे भस्मनिर्माणे नानाविघ्नानि पार्वति ।
अत एव हि तत्रादौ शान्तिं कुर्याद् द्विजोत्तमः ।।२।।

श्रीशङ्कर जी बोले– पारदभस्म के निर्माण में कई प्रकार के विघ्न उपस्थित होते हैं। अतः उत्तम (शास्त्रीय) ज्ञान से युक्त सभी श्रेष्ठजन इसकी शान्ति हेतु शोधन करते हैं ।।२।।

शान्तिप्राकारकथनम्

वरयेत् कर्मकर्त्तारं वक्ष्यमाणविधानतः ।
पूजयेत् षोडशं लिङ्गं पार्थिवं पार्वतात्मजे ।।३।।

हे हिमालय पुत्री ! इसके सम्बन्ध में सभी कार्यों को अर्थात् शोधन के नियमों का पालन करना चाहिये और मिट्टी के द्वारा निर्मित शिवलिङ्ग का षोडषोपचार पूजन भी विधिपूर्वक करना चाहिये ।।३।।

षोडशेनोपचारेण[1] तोडलोक्तविधानतः ।
भोगयोग्यं प्रदातव्यं मधुपर्कं सुरेश्वरि ।।४।।

---

[1] षोडशेनेत्यादि । षोडशोपचारा उक्ताः शिवार्चनचन्द्रिकायाम्— आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् । मधुपर्काचमस्नानवसनाभरणानि च ।। गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं वन्दनं तथा । प्रयोजयेदर्च्चनायामुपाचरांस्तु षोडश ।। इति । प्रकारान्तरं यथा कृष्णार्चनचन्द्रिकाधृत-मन्त्ररत्नावल्याम्— पाद्यार्घ्याचमनीयञ्च स्नानं वसनभूषणे । गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्याचमनं ततः ।। ताम्बूलमर्चना स्तोत्रं तर्पणञ्च नमस्क्रियाम् । प्रयोजयेदर्चनायामुपचारांस्तु षोडश ।। इति । तोडलतन्त्रोक्तशिवपूजा तु निरूपयिष्यते सप्तमपटले ।

हे सुरेश्वरी ! तोडल तन्त्र में दिये गये विधान के ही अनुसार ही शिवलिङ्ग षोडषोपचार पूजन करना चाहिये और भोग्य योग्य वस्तुओं के साथ मधुपर्क अर्पण भी करना चाहिये ।।४।।

पञ्चामृतेन देवेशं स्नापयेच्छुद्धवारिणा ।
पुरुषस्य यथायोग्यं युग्मवस्त्रं निवेदयेत् ।।५।।

भगवान् शिव को पञ्चामृत स्नान के बाद शुद्ध गङ्गाजल से भी स्नान कराना चाहिये तथा पुरुषों के पहनने योग्य एक जोड़ा वस्त्र भी अर्पण करना चाहिये ।।५।।

चतुरङ्गुलिविस्तारं रौप्यनिर्माणपीठकम् ।
अलङ्कारं यथायोग्यं पुरुषस्य निवेदयेत् ।।६।।

चार-चार अङ्गुल लम्बा-चौड़ा चाँदी का पीठ बनावें और पुरुषों की आवश्यक साम्रगी तथा नाना प्रकार के अलङ्कार जितना सम्भव हो उसे भी अर्पण करें ।।६।।

अलक्तकयुतं वापि दद्यान्मलयजं शिवे ।
षडङ्गधूपं[१] देवेशि प्रदद्याच्च पुनः पुनः ।।७।।

कुआं के चबूतरे को या मण्डप को लाल रंग से रंग कर उसमें भगवान् शिव अर्थात् शिवलिङ्ग स्थापित करके उस पर मलयागिरी चन्दन का लेपन करें और ६ वस्तुओं से मिश्रित (गुगुल, अगर, खस, मधु, शर्करा यानि गुड़ तथा चन्दन से मिश्रित) सुगन्धित धूप भी बार-बार दिखलायें ।।७।।

घृतयुक्तं तथा दीपं दद्यात् कल्याणहेतवे ।
नैवेद्यं विविधं रम्यं नानाफलसमन्वितम् ।।८।।

अपने कल्याण के लिये भगवान् शिव के समक्ष शुद्ध घी का दीपक जलायें तथा प्रसाद के रूप में विविध प्रकार का फल एवम् शुद्ध नैवेद्य अर्पण करें ।।८।।

शर्करासंयुतं कृत्वा पायसं विनिवेदयेत् ।
दद्यात्तोयं महेशानि विजयासंयुतं प्रिये ।।९।।

हे प्रिये ! गुड़ से बना हुआ खीर प्रसाद के रूप में अवश्य ही अर्पण करें इसके बाद भगवान् शिव को जल भी अर्पण करें । इससे विजय की प्राप्ति होती है ।।९।।

---

[१] पडङ्ग इत्यादि । पडङ्गधूपो यथा शारदायाम्— गुग्गुलु अगुरूशीरशर्करामधु, चन्दनैः । धूप- येदाज्यसंमिश्रैर्नीचैर्देवस्य देशिकः ।। पडङ्गधूपमेतत्तु सर्वदेवप्रियं सदा ।।

षडक्षरं[1] महामन्त्रं गजान्तकसहस्रकम् ।
प्रजपेत् साधकश्रेष्ठस्ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम् ।।१०।।

इसके बाद षडक्षरमहामन्त्र का १००८ बार जाप करना चाहिये। इस मन्त्र के जाप से श्रेष्ठ साधक सिद्धि को प्राप्त करता है यह ध्रुव सत्य है ।।१०।।

अथवा परमेशानि धनदां[2] धनदायिनीम् ।
पूजयेद् बहुयत्नेन षोडशेनोपचारतः ।।११।।

हे परमेश्वरी ! षोडषोपचार पूजन करने से धन की प्राप्ति होती है, बार-बार षोडषोपचार पूजन करने से धन की वृद्धि भी होती है ।।११।।

द्वादशाहं यजेद्धीमान्दिक्सहस्रं ततो जपेत् ।
तद्दशांशं महेशानि होमं कुर्याद्विचक्षणः ।।१२।।

---

[1] षडक्षरमित्यादि । "ॐ नमः शिवाय" इति । अत्र तांडलतन्त्रोक्तप्रमाणन्तु निवेदयिष्यतेऽष्टमपटले । गजान्तकेति— अष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः ।

[2] धनदामित्यादि । धनदाप्रयोगस्तु गुप्तसाधनतन्त्रे नवमपटले— श्रीशिव उवाच । अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धनदां सर्वसिद्धिदाम् । यामाराध्य महादेवि कुबेरो धननायकः ।। दान्तं बिन्दुसमारूढं महामायां हरिप्रियाम् । रतिप्रिये ततः पश्चाद्वह्निजायां ततः प्रिये ।। नवाक्षरा महामन्त्रो द्रुतं सिद्धिप्रदायकः । कुबेरोऽस्य ऋषिः प्रोक्तः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम् । देवता धनदा देवि सर्वसिद्धिप्रदायिनी । धर्मार्थकाममोक्षाख्यचतुर्वर्गफलप्रदा । षड्दीर्घमायया चैव षडङ्गन्यासमाचरेत् । ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि येन सिद्धो भवेन्नरः ।। ॐ देवीं काञ्चनकान्तिविमलां रक्तांशुकाच्छादितां हेमाम्भोजयुगाभयांकुशकरीं रत्नोल्लसत्कुण्डलाम् । सर्वाभीष्टफलप्रदां त्रिनयनां नागेन्द्रहारोज्ज्वलां वन्दे सर्वभयापहां त्रिजगतां पापापहारीं पराम् ।। स्वकीयात्मस्वरूपां तां भावयेच्चित्स्वरूपिणीम् । एवं ध्यात्वा महेशानि मानसैः पूजनञ्चरेत् ।। अर्घ्यपात्रं स्थापयित्वा धेनुयोनिं प्रदर्शयेत् । पीठपूजां ततः कृत्वा ततः पीठमनुं जपेत् ।। आधारशक्तिमारभ्य यजेत्पद्मासनं प्रिये । प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्साधकाग्रणीः ।। पुनर्ध्यात्वा महेशानि मूलेनावाहनञ्चरेत् । षडंगेन च सम्पूज्य जीवन्यासं समाचरेत् ।। मूलमन्त्रं समुच्चार्य ततो द्रव्यं समुच्चरेत् । देवायै च ततः पश्चाद्योगात्मकमनुं स्मरेत् ।। पाद्याद्यैः पूजयेद्देवीं यथाविभवविस्तरैः । यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि तज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ।। नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत्कर्णिकोपरि । द्विदलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं ततो बहिः ।। कोणेषु वज्रं संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत् । इदं यन्त्रं महेशानि साक्षाद्देवीस्वरूपकम् ।। लक्ष्मीं पद्मां पद्मालयां श्रियञ्चैव हरिप्रियाम् । शवाञ्च कमलाञ्चैव अब्जाञ्च चञ्चलान्तथा ।। लोलाञ्च प्रणवाद्येता नमोऽन्तेन प्रपूजयेत् । पुनर्मध्ये ततो देवीं पूजयेत्साधकोत्तमः ।। प्राणायामं ततः कृत्वा यथाशक्ति जपञ्चरेत् गुह्यातीति जपफलं देव्या हस्ते समर्पयेत् ।। प्राणायामं ततः कृत्वा प्रणामाष्टाङ्गमाचरेत् । अथोत्थाय महेशानि विशेषार्घ्यं निवेदयेत् ।। आत्मसमर्पणं कृत्वा विहरेच्च निजेच्छया । इति ।

हे परमेश्वरी ! ज्ञानी साधक को १२ दिनों तक १००० प्रति दिन मन्त्र का जाप करना चाहिये। तथा जाप का दशांश हवन भी करना चाहिये इससे विलक्षणता प्राप्त होती है ॥१२॥

होमकर्माद्यशक्तश्चेद् द्विगुणं जपमाचरेत् ।
यदि प्रीता भवेत्सा हि तदा किं वा न सिध्यति ।।१३।।

जो साधक हवन करने में सक्षम नहीं है तो उसे द्विगुणा (यानि कि दशांश का दुगुणा यानि कि २४०० बार) मन्त्र का अतिरिक्त जाप करना चाहिये। यदि समभाव से या प्रीतिभाव से जप किया गया तो उसका कौन-सा ऐसा कार्य है जो सिद्ध नहीं होगा ॥१३॥

प्रत्यहं परमेशानि कुबेरो दीयते वसु ।
भस्मनिर्माणकं देवि विचित्रं तस्य किं शिवे ।।१४।।

हे परमेश्वरी ! वह प्रत्यक्ष रूप से वह आठ वसुओं और कुबेर के समान सम्पन्न हो जाता है। हे देवि ! भस्म निर्माण की विचित्रता भी शिव के ही समान है ॥१४॥

गुरवे दक्षिणादानस्याऽऽवश्यकता

गुरवे दक्षिणां दद्याद्यथाविभवविस्तरैः ।
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्री नात्र कार्या विचारणा ।।१५।।

गुरु को यथाशक्ति अपने सामर्थ्यानुसार भरपूर दक्षिणा देना चाहिये तथा सिद्धि के बाद किसी से इसकी चर्चा नहीं करनी चाहिये और न इस पर किसी प्रकार का कोई विचार करना चाहिये ॥१५॥

भस्मनिर्माणविधानप्रश्नः, भस्मनिर्माणप्रकारकथनञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

विधानं देवदेवेश भस्मनिर्माणकर्मणि ।
सकृत्कृते येन रूपे भस्मसाज्जायते विभो ।।१६।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे देवादिदेव ! भस्म निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कर हमें कृत-कृत्य करने की कृपा करें कि इसका निर्माण कैसे होता है? ॥१६॥

श्रीशङ्कर उवाच

आनीय पारदं देवि स्थापयेत्प्रस्तरोपरि ।
तस्योपरि जपेन्मन्त्रं सर्ववन्द्यनवात्मकम्[1] ।।१७।।

---

[1] सर्ववन्द्येत्यादि : "ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्लीं ह्रीं क्लीं नमः इति नवाक्षरमन्त्रः ।

श्री शङ्कर जी बोले– पारा को लाकर पत्थर पर (पत्थर के कटोरी में) स्थापित करें। इसके बाद सर्वश्रेष्ठ नवाक्षरमन्त्र (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं क्लीं नमः) का जप करें ।।१७।।

साष्टसहस्रं देवेशि प्रजपेत् साधकाग्रणीः ।
स्वयम्भु पुष्पसंयुक्ते वस्त्रे चारुणसन्निभे ।।१८।।

हे देवि ! श्रेष्ठ साधक को ६० हजार नवाक्षरमन्त्र का जाप करना चाहिये और स्वयम्भु पुष्प वाले वस्त्र को सामने रखकर खुले आसमान में जहाँ सूर्य की किरण पड़ती हो वहीं पर बैठकर जाप करना चाहिये ।।१८।।

संस्थाप्य पारदं देवि मृत्पात्रयुगले शिवे ।
पुष्पयुक्तेन सूत्रेण बध्नीयाद् बहुयत्नतः ।।१९।।

हे देवि पार्वती ! पारे को मिट्टी के पात्र में रखकर उस पात्र को स्वयम्भु-पुष्प वाले वस्त्र में पूरी तरह लपेटकर अच्छी तरह से बाँध देना चाहिये ।।१९।।

मुक्तिधाराजलेनैव धान्यस्य परमेश्वरि ।
लेपयेद् बहुयत्नेन रौद्रे शुष्कञ्च कारयेत् ।।२०।।

हे परमेश्वरी ! जिस प्रकार धान आदि फसल पर वारिस का जल पड़ता है, उसी प्रकार उस पर जल छिड़कना चाहिये । फिर उस पर चारों ओर से मिट्टी लपेटकर सुखा देना चाहिये ।।२०।।

पुनश्च लेपयेद्धीमान् ततो वह्नौ विनिक्षिपेत् ।
अष्टमीनवमीरात्रौ क्षिपेन्नैव सुरेश्वरि ।।२१।।

हे परमेश्वरी ! पुनः दूसरी बार भी मिट्टी लेपकर ही उसको आग पर चढ़ाना चाहिये । यह क्रिया अष्टमी या नवमी के रात्रि में ही करना चाहिये ।।२१।।

अथवा परमेशानि मृत्पात्रे स्थापयेद्रसम् ।
वल्लीरसेन तद्द्रव्यं शोधयेद् बहुयत्नतः ।।२२।।

हे परमेशानी ! अथवा आँवले के रस को मिट्टी के पात्र में रखकर पारे का शोधन करना चाहिये । इसे अत्यन्त सावधानी के साथ ही से करना चाहिये ।।२२।।

घृतनारीरसेनैव तथैव शोधनञ्चरेत् ।
एवं कृते तु गुटिकां यदि स्याद् दृढबन्धनम् ।।२३।।

हे देवि ! इसे घृतकुमारी के रस में पुनः शोधन करना चाहिये तथा शोधन के बाद यदि यह ठोस हो जाये तो इसकी गोली बनाना चाहिये ।।२३।।

धुस्तूरञ्च समानीय मध्ये शून्यञ्च कारयेत् ।
कृष्णाख्यतुलसीयोगे तथा घृतकुमारिका ।।२४।।

हे देवि ! इसमें समान मात्रा में धतुर मिलाकर तब तक घोटना चाहिये जब तक कि धतुर उसमें पूर्ण रूप से मिल न जाये । पश्चात् काली तुलसी के रस और घृत कुमारी के रस को भी मिलाना चाहिये ॥२४॥

एवं कृते वह्नियोगे भस्मसाज्जायते किल ।
भस्मयोगे भवेत्स्वर्णं धनदायाः प्रसादतः ।।२५।।
विवर्णं जायते द्रव्यं यदि पूजां न चाचरेत् ।।२६।।

तदुपरान्त इसको आग पर गर्म करना चाहिये ताकि यह भस्म के रूप में हो जाये । भस्म तैयार होने के बाद इससे सोना वनाकर धनवान् बना जा सकता है । यदि पूजा एवं मन्त्र का जाप विधिवत् रूप से नहीं किया गया तो यह द्रव्य दूसरी जाति का हो जायेगा अर्थात् इससे स्वर्ण निर्माण नहीं हो सकेगा ॥२६॥

देव्याः स्वयम्भूकुसुमादिविषये जिज्ञासा

श्रीचण्डिकोवाच

स्वयम्भु कीदृशं नाथ कुण्डगोलन्तु कीदृशम् ।
स्वपुष्पं कीदृशं नाथ वज्रपुष्पन्तु कीदृशम् ।
सर्वकालोद्भवं नाथ कीदृशं वद शङ्कर ।।२७।।

श्री चण्डिका बोली– हे स्वामी ! स्वयम्भू-पुष्प, कुण्ड-पुष्प और गोल-पुष्प किस प्रकार से दृष्टिगत होता है तथा स्वपुष्प, सर्वकालोद्भवपुष्प और वज्रपुष्प क्या है? हे स्वामी ! हे शङ्कर ! इसे बताने की कृपा करें ॥२७॥

महादेवस्य तत्रोत्तरम्

श्रीशङ्कर उवाच

विवाहरहिता कन्या प्रथमं पुष्पसंयुता ।
तच्छोणितं महेशानि स्वयम्भु नात्र संशयः ।।२८।।

श्री शङ्कर जी बोले– हे महेशानि ! विवाह के पूर्व कन्या जब प्रथम बार ऋतुमति होती है वही रक्त स्वयम्भु–पुष्प कहा जाता है इसमें सन्देह नहीं करना चाहिये ॥२८॥

भर्त्तरि विद्यमाने तु या कन्या चान्यजा शिवे ।
तदुद्भवं कुण्डपुष्पं सर्वकार्यार्थसाधकम् ।।२९।।

यदि कन्या का पति है चाहे क्या कन्या किसी भी जाति की हो तो उस का मासिक धर्म ही कुण्डपुष्प कहा जाता है जो सभी प्रकार के कार्यों और मनोरथों को पूर्ण करनेवाला होता है ॥२९॥

मृते भर्त्तरि देवेशि या कन्या अन्यजा शिवे ।
तदुद्भवं गोलपुष्पं देववश्यकरं परम् ।।३०।।

यदि कन्या का पति जीवित नहीं है तो उसका मासिक धर्म गोलपुष्प कहा जाता है चाहे वह किसी भी जाति की हो । यह देवताओं को भी वश में करने वाला होता है ।।३०।।

विवाहितायाः कन्यायाः प्रथमे ऋतुसम्भवे ।
तच्छोणितं महेशानि स्वपुष्पं सर्वमोहनम् ।।३१।।

हे महादेवी ! विवाहोपरान्त कन्या का जो प्रथम मासिक धर्म होता है उसे ही स्वपुष्प कहा जाता है । वह सर्वजन सम्मोहन कार्य के लिये श्रेष्ठ है ।।३१।।

विवाहितायाः कन्यायाः पुरुषस्य च ताडनात् ।
यदि पुष्पं समुद्भूतं वज्रं तत् परिकीर्तितम् ।।३२।।

यदि विवाहिता कन्या पुरुष (पति से) सम्भोग कराती है और उसके बाद का जो प्रथम बार मासिक धर्म होता है वह वज्रपुष्प कहा जाता है ।।३२।।

विवाहितायाः कन्यायाः प्रतिमासे च यद्भवेत् ।
सर्वकालोद्भवं पुष्पं कथितं वीरवन्दिते ।।३३।।

विवाह के बाद कन्या का जो नियमित रूप से मासिक धर्म होता है उसे ही वीराचार की उपासना करने वाले साधकगण सर्वकालोद्भव-पुष्प कहते हैं ।।३३।।

पारदभस्मपरीक्षानिर्माणप्रसङ्गेन स्वर्णनिर्माणकथनम्, पारदभस्मप्रशंसा च

सप्तक्रोशं[१] वह्निमध्ये स्थापयेद् बहुयत्नतः ।
तत उत्थाय तद् द्रव्यं स्वर्णपात्रे निधाय च ।।३४।।

एक पहर तक इसे (पारद को) अग्नि पर गर्म करते रहना चाहिये। इसके बाद यह स्वर्ण निर्माण के योग्य हो जाय तो अग्नि से निकाल लेना चाहिये ।।३४।।

प्रजपेत्परमेशानि प्रासादाख्यं[२] महामनुम् ।
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्री नान्यथा मम भाषितम् ।।३५।।

हे महेशानी ! इसके बाद प्रासाद वीजमन्त्र का भी जाप करना चाहिये । इसे किसी से कहना नहीं चाहिये अर्थात् गोपनीय रखना चाहिये ।।३५।।

---

१. सप्तक्रोशमिति— 'क्रोशं प्रहरम्' इति ।

२. प्रासादाख्यमित्यादि— 'सान्तमौकारसंयुक्तं बिन्दुभूषितमस्तकम् । प्रासादाख्यो मनुः प्रोक्तो भजतां कामदो मणिः ।।" तेन "हौं" इति मन्त्रकोशः ।

एतन्मन्त्रं महेशानि गजान्तकसहस्रकम्[1] ।
जपित्वा पूजयेत् पश्चात्पार्थिवं शिवलिङ्गकम् ।।३६।।

हे देवि ! एक हजार जप करने के बाद विधिवत् रूप से पार्थिव शिवलिङ्ग का पूजन कर पुनः १००८ बार मन्त्र जाप करना चाहिये ।।३६।।

ततः परीक्षा कर्त्तव्या श्रृणु मत्प्राणवल्लभे ।
शुद्धताम्रं वह्निमध्ये मृत्पात्रे तोलकं मितम् ।।३७।।

हे प्राण वल्लभे ! सुनो, इसके बाद इसकी परीक्षा करनी चाहिये । मात्र एक तोला शुद्ध ताँबें को मिट्टी के बर्तन में गरम करना चाहिये ।।३७।।

द्रवीभूते च ताम्रे च गुञ्जामानं क्षिपेद्यदि ।
तत्क्षणे परमेशानि स्वर्णं भवति निश्चितम् ।।३८।।

हे परमेश्वरी ! जब ताँबा पिघलकर एक लाल हो जाये तथा द्रव में परिणत हो जाये तो इसमें १ रत्ती उस द्रव्य को (पारद को) मिलाना चाहिये । इसमें यह निश्चित रूप से स्वर्ण वन जायेगा ।।३८।।

गुञ्जाप्रमाणं तद् द्रव्यं भोजनं कुरुते यदि ।
सर्वरोगपरित्यक्तो जायते मदनोपमः ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य जायते चिरजीविता ।।३९।।

यदि एक रत्ती इसका प्रतिदिन सेवक किया जाय तो सभी प्रकार के रोग से छुटकारा मिलता है एवम् कामशक्ति की बढ़ोत्तरी होती है । इससे मन्त्र की भी सिद्धि होती है और साधक चिरंजीवी भी हो जाता है ।।३९।।

प्रत्यहं परमेशानि शतनारीं रमेद्यदि ।
वीर्यादिरहितं न स्यात्तेजोवृद्धिकरं परम् ।।४०।।

प्रत्यक्ष रूप से यदि सौ नारियों के साथ भी भोग किया जाये तो भी उसके शरीर में वीर्य वर्तमान रहता है और कान्ति बढ़ती है ।।४०।।

मरणं नैव पश्यामि यदि ध्यानयुतो भवेत् ।
तस्य वित्तं विलोक्यैव कुबेरोऽपि तिरस्कृतः ।।४१।।

यदि साधक सदैव ध्यानयुक्त रहे वह दीर्घजीवी होता है । उसकी स्थिति कुबेर जैसी होती है यानि कि धनवान होता है ।।४१।।

गानेन तुम्बुरुः साक्षाद्दानेन वासवो यथा ।
महेश इव योगीन्द्रो निर्ऋतिरिव दुर्धरः ।।४२।।

---

[1] गजान्तकसहस्रकम् : अष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः ।

हे देवि ! वह सिद्धगायक, वसुओं जैसा महादानी, साक्षात् शिव के समान महायोगी और सभी दिशाओं का स्वामी होता है अर्थात् वह सभी दिशाओं में गमन करने की क्षमता रखने वाला शक्तिमान् होता है ।।४२।।

महाबलो महावीर्यो महासाहसिकः शुचिः ।
महास्वच्छो दयावांश्च सर्वप्राणिहिते रतः ।
बहु किं कथ्यते देवि स एव गणनायकः ।।४३।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे पञ्चमः पटलः ।।५।।

हे देवि ! वह सभी प्राणियों का हित चाहने वाला अत्यन्त बलवान् एवं पुण्यवान होता है एवम् सभी के कल्याण में सदैव रत होता है । बहुत क्या कहा जाये वह गणनायक अर्थात् समुदायों का प्रतिनिधित्व करने वाला भी होता है ।।४३।।

इस प्रकार मातृकाभेदतन्त्र का पाँचवाँ पटल शिवपार्वती
संवादरूप में समाप्त ।।५।।

◆

षष्ठः पटलः

महारोगादिदुःखमुक्त्युपायप्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

वद ईशान सर्वज्ञ सर्वतत्त्वविदां वर ।
महारोगे महादुःखे महादारिद्र्यसङ्कटे ।।१।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे सर्वशास्त्र विशारद एवम् चतुर्विद् स्वामी ! महारोग, घोर कष्ट, महादुःख, सङ्कट तथा दारिद्र्य के हरणकर्ता कृपया हमें बताये ।।१।।

नाना व्याधिगते वापि नानापीडादिसङ्कटे ।
राज्यनाशे राजभये कारागारगते पुनः ।।२।।
राजदण्डे च देवेश तथा च ग्रहपीडिते ।
केनोपायेन देवेश मुच्यते वद शङ्कर ।।३।।

हे देवेश ! नाना प्रकार के रोग, व्याधि, पीड़ा, सम्पत्ति नाश, राजकीय भय, कारागार (जेल) आदि सङ्कट उपस्थित होता हो तो उस सङ्कट से मुक्ति के लिये कौन-सा उपाय करना चाहिये । हे शङ्कर ! बार-बार इसे कहने की कृपा करें ।।२-३।।

महादेवस्योत्तरम्

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु चार्वङ्गि सुभगे यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
तत्तत्सर्वं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।।४।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे चतुरानने ! हे सुन्दरी ! इस सम्बन्ध में मैं विस्तार से प्रकाश डालने जा रहा हूँ उसे ध्यानपूर्वक सुनो ।।४।।

या चाद्या परमा विद्या चामुण्डा कालिका परा ।
तस्याः प्रयोगमात्रेण किं न सिध्यति भूतले ।।५।।

आद्यशक्ति कालिका की परम विद्या चामुण्डा है, जिसके प्रयोग मात्र से ऐसा कोई भी कार्य नहीं है जो इस पृथ्वी पर सिद्ध न हो सके ।।५।।

ग्रहणविषये देव्या जिज्ञासा

श्रीचण्डिकोवाच

राहुश्चाण्डालो विख्यातः सर्वत्र परमेश्वर ।
पुण्यकालः कथं देव तस्य स्पर्शे दिवाकरे ।।६।।

श्री चण्डिका बोलीं– राहु चाण्डाल होते हुये भी परमेश्वर रूप में सर्वत्र विख्यात है । देवतागण कहते हैं कि सूर्य के स्पर्श से ही पुण्यकाल होता है ।।६।।

निशाकरे तथा नाथ इति मे संशयो हृदि ।
कथयस्व परानन्द पश्चादन्यत्प्रकाशय ।।७।।

चन्द्रमा को मस्तकर पर धारण करने वाले स्वामी ! अगर आपके हृदय में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है तो परम आनन्द देने वाले इस ज्ञान के सम्बन्ध में प्रकाश डालें ।।७।।

ग्रहशशब्दस्यार्थकथनम्, तत्प्रकारकथनञ्च

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु चार्वङ्गि सुभगे ग्रहणञ्चोत्तमोत्तमम् ।
ग्रहणं त्रिविधं देवि चन्द्रसूर्याग्निसंयुतम् ।।८।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे चतुरानने ! हे सुन्दरी ! उत्तम से उत्तम ग्रहण की महता को सुनो । हे देवि ! सूर्य, चन्द्रमा तथा अग्नि के संयोग से तीन प्रकार का ग्रहण होता है ।।८।

शक्तेः ललाटके नेत्रे वह्निस्तिष्ठति सर्वदा ।
वामनेत्रे तथा चन्द्रो दक्षे सूर्यः प्रतिष्ठितः ।।९।।

शक्ति के नेत्र और ललाट में ही सदैव अग्नि निवास करती है । शक्ति के ही वायें नेत्र में चन्द्र तथा दाहिने नेत्र में सूर्य स्थित है ।।९।।

शम्भुनाथेन देवेशि रमणं क्रियते यदा ।
तदैव ग्रहणं देवि शक्तियुक्तो यदा शिवः ।।१०।।

जब शम्भु देवी के साथ रमण करते हैं और जब शिव-शक्ति एक-दूसरे में समाहित होते हैं तभी ग्रहण लगता है ।।१०।।

वामनेत्रे चुम्बने तु शशाङ्कग्रहणं तदा ।
दक्षनेत्रे चुम्बने च भास्करग्रहणं तदा ।।११।।

हे देवि ! वायें नेत्र के चुम्बन से चन्द्रगहण और दाहिने नेत्र के चुम्बन से सूर्यग्रहण होता है ।।११।।

ललाटे चुम्बने चाग्निग्रहणं परमेश्वरि ।
शिववीर्यं यतो वह्निरतोऽदृश्यः सुरेश्वरि ।।१२।।

हे परमेश्वरी ! ललाट के चुम्वन से अग्नि ग्रहण होता है और उसमें शिव वीर्य अग्निरत होकर अदृश्य हो जाता है । हे सुरेश्वरी तब दोनों के वीच यह वीर्य समाहित हो जाता है ।।१२।।

राहुः शिवः समाख्यातस्त्रिगुणा शक्तिरीरिता[1] ।
शिवशक्त्योः समायोगो ग्रहणं परमेश्वरि ।।१३।।

राहु शिव के समान होता है तथा शक्ति त्रिगुणात्मिका हो जाती है । हे परमेश्वरी ! शिव एवम् शक्ति के ही समागम से ग्रहण लगता है ।।१३।।

शिवशक्तिसमायोगः कालं ब्रह्ममयं प्रिये ।
अत एव महेशानि राश्यादीन् न विचारयेत् ।।१४।।

हे प्रिये ! शिव-शक्ति के समागम से समय भी ब्रह्ममय हो जाता है अतएव हे परमेश्वरी ! इसमें ग्रह, नक्षत्र और राशि आदि का विचार नहीं करना चाहिये ।।१४।।

ग्रहणप्रशंसा, ग्रहणतत्त्वप्रकाशनिषेधः च

तिथिनक्षत्र योगेन यद्योगं परमेश्वरि ।
तदैव परमेशानि राश्यादिगणनञ्चरेत् ।।१५।।

हे परमेश्वरी ! तिथि, नक्षत्र, ग्रहस्थिति एवम् योग आदि की चर्या सामान्य रूप से चलती है उसका गणना केवल राशि आदि में वर्णन किया जाता है । हे परमेश्वरी ! अतः यह गणना से परे है ।।१५।।

शिवशक्तिसमायोगात्सर्वं ब्रह्ममयं जगत् ।
मासपक्षतिथीनाञ्च नोच्चार्यं परमेश्वरि ।।१६।।

शिव और शक्ति के एकीकृत या मिलन होने से सभी कुछ ब्रह्ममय हो जाता है । इस कारण से इसके गणना की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती । हे परमेश्वरी ! इसके गणना की आवश्यकता ही नहीं होती ।।१६।।

दृष्टिमात्रेण जप्तव्यं तदा सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
तत्कालं परमं कालं विज्ञेयं वीरवन्दिते ।।१७।।

केवल देखने मात्र से और जप करने से ही सिद्धि प्राप्त होती है। साधकगण तत्काल ही काल गणना से परे हो जाते हैं ऐसा ही कहा जाता है ।।१७।।

तत्र यद्यत्कृतं[2] सर्वमनन्तफलमीरितम् ।
पुरैव कथितं सर्वं बहु किं कथ्यतेऽधुना ।।१८।।

---

[1] त्रिगुणा शक्तिरिति— चन्द्र-सूर्या-ऽग्निरूपिणीत्यर्थः ।

[2] तत्र यद्यदित्यादि । "अत्रानन्तफलकीर्तनाद् जपदशांशहोमादिकमपि न कर्तव्यम् । तदुक्तं गायत्रीतन्त्रे प्रथमपटले— चन्द्रसूर्योपरागे च जप्त्वा ब्रह्ममयो भवेत् । मन्त्रस्य परमेशानि न च होमादिकञ्चरेत् ।। कृते होमादिके भद्रे तज्जपं विफलं भवेत् । जपमात्रे महेशानि अनन्त-स्तन्मनुर्यथा ।। अनन्तस्य महेशानि दशांशं केन जायते । इति ।" एतत्कल्पस्तु ज्ञानिनाम् इति । प्राणतोषणी ।

इस प्रकार के कार्य करने से सभी प्रकार के ही कामनाओं की भी पूर्ति होती है। इस सम्बन्ध में अधिक क्या कहा जा सकता है ?॥१८॥

एतत्सुगुप्तभेदं हि तव स्नेहात्प्रकाशितम् ।
न वक्तव्यं पशोरग्रे न वक्तव्यं सुरेश्वरि ॥१९॥

हे परमेश्वरी ! तुम्हारे अत्याधिक स्नेह के कारण ही मैं इसे व्यक्त कर रहा हूँ, इसे मूर्खों के समक्ष कभी व्यक्त नहीं करना। सदा गोपनीय रखना ॥१९॥

एतत्तत्वं प्रयत्नेन ब्रह्मा जानाति माधवः ।
प्रगोप्तव्यं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव शैलजे ॥२०॥

हे शैलपुत्री ! इस गोपनीय रहस्य को केवल विष्णु और ब्रह्मा ही जानते हैं। इसे अपनी योनि की तरह यत्नपूर्वक गोपनीय रखना ॥२०॥

चामुण्डामंत्रपूजाविषये प्रश्नः, चामुण्डामन्त्रपूजादिकथनञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

चामुण्डाया महामन्त्रं कीदृशं परमेश्वर ।
आराधनं कीदृशं वा तद्वदस्व दयानिधे ॥२१॥

श्रीचण्डिका बोली– हे स्वामी ! हे नाथ ! चामुण्डा देवी का महामन्त्र क्या है और यह किस प्रकार दृष्ट होता है। हे दयानिधे ! इसके उपासना के सम्बन्ध में विस्तार से बताने की कृपा करें ॥२१॥

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु चार्वङ्गि सुभगे चामुण्डामन्त्रमुत्तमम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते ॥२२॥

श्रीशङ्कर जी बोले– हे सुन्दरी ! हे कमलनेत्री ! चामुण्डा के उत्तम मन्त्र के ज्ञान एवम् उपासना से पुनर्जन्म से मुक्ति मिल जाती है। उसे जन्म जन्मान्तर के बन्धन से भी छुटकारा मिल जाता है ॥२२॥

कालीबीजयुगं[१] देवि कूर्चबीजं ततः परम् ।
त्र्यक्षरी परमा विद्या चामुण्डा कालिका स्वयम् ॥२३॥

हे देवि ! कालीबीज[२] दो बार और इसके बाद कूर्चबीज[३] अर्थात् क्रीं क्रीं हूं यही परमाशक्ति चामुण्डा का त्र्यक्षरी बीजमन्त्र है यही साक्षात् कालिका है ॥२३॥

---

[१] कालीबीजयुगमित्यादि— तेन 'क्रीं क्रीं हूं' इति मन्त्रो भवति ।

[२] कालीबीज— क्रीं ।

[३] कूर्चबीच—हूं ।

सप्ताहं पूजयेद्देवीमुपाचरैश्च षोडशैः ।
पूजान्ते प्रजपेन्मन्त्रं त्रिसहस्रं वरानने ।।२४।।

हे वरानने ! इसी कालिका चामुण्डा का प्रतिदिन नियमित रूप से एक सप्ताह तक षोडशोपचार पूजन करने के बाद तीन हजार मन्त्र जप करना चाहिये ।।२४।।

चण्डीपाठप्रकारकथनम्

रात्रौ तु पञ्चतत्त्वेन[1] पुजयेत् परमेश्वरीम् ।
तथा रात्रौ जपेन्मन्त्रं कुलशक्तिसमन्वितम् ।।२५।।

रात्रि में कालिका देवी की पञ्चतत्त्व अर्थात् पञ्चप्रकार से पूजन करना चाहिये और रात्रि में ही कुलशक्ति के साथ कालिका चामुण्डा के मन्त्र का भी जप करना चाहिये ।।२५।।

यन्त्रनिर्माणयोग्यं हि पीठं दद्यात् सुविस्तरम् ।
भोगयोग्यं प्रदातव्यं मधुपर्कं यथोचितम् ।।२६।।

यन्त्र के निर्माण योग पीठ पर विस्तार से यन्त्र बनाना चाहिये और उसका विधिवत् रूप से पूजन करना चाहिये तथा नैवेद्य आदि प्रदान करना चाहिये और इसके बाद मधुपर्क भी कराना चाहिये ।।२६।।

शक्तेर्यथा विधेयं स्याद् युवत्याः परमेश्वरि ।
तथा वस्त्रं प्रदातव्यं सर्वकल्याणहेतवे ।।२७।।

हे परमेश्वरी ! शक्ति को यथायोग्य युवती ही होनी चाहिये और अपने सभी प्रकार के कल्याण के उसे वस्त्र आदि भी प्रदान करना चाहिये ।।२७।।

अलङ्कारं यथायोग्यं तत्र तत्र नियोजयेत् ।
नैवेद्यं विविधं रम्यं नानाद्रव्यसमन्वितम् ।।२८।।

---

[1] रात्रौ तु पञ्चतत्वेनेति । पञ्चतत्वमुक्तं गुप्तसाधनतन्त्रे सप्तमपटले— श्रीशिव उवाच । शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तत्वं परमदुर्लभम् । मन्त्रोद्धारक्रमेणैव तत्सर्वं कथयामि ते भान्तमकारसंयुक्तं थान्तं वायुयुतं कुरु । विन्दुयुक्तं पुनर्भान्तमाकारं विन्दुसंयुतम् । चन्द्रबीजं समुच्चार्य अंकारं तदनन्तरम् । पुनर्भान्तं तकारञ्च चन्द्रवायुयुतं शिवे ।। पुनर्भान्तं महेशानि पञ्चमस्वरसंयुतम् । थान्तं वह्निसमारूढमाकारसंयुतं कुरु ।। पुनर्भान्तं महेशानि सूर्यस्वरविभूषितम् । तान्तमुकारसंयुक्तं धान्तमविन्दुसंयुतम् ।। पञ्चतत्वमिदं देवि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।। इति । कालीकुलार्णवे च— मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रा मैथुनमेव च । पञ्चमात्तु परं नास्ति शाक्तानां भोगमोक्षयोः । इति ।

विविध प्रकार के शृङ्गार योग्य वस्तु भी अर्पण करना चाहिये और नाना प्रकार के या कई प्रकार प्रासादादि जो सभी दृष्टि से उत्तम हो उसे ही प्रदान करना चाहिये ।।२८।।

सामिषान्नं प्रदातव्यं परमान्नं सशर्करम् ।
पूजयेत् परया भक्त्या बलिदानं ततः परम् ।।२९।।

मांस-मछली अन्न और साथ में मीठा भोजन अर्पण करना चाहिये पश्चात् भक्तिपूर्वक पूजनकर बलि आदि प्रदान करना चाहिये ।।२९।।

प्रत्यहं परमेशानि चाद्यन्ते वा बलिं हरेत् ।
साङ्गे जाते महेशानि चाथवा बलिमाहरेत् ।।३०।।

हे परमेश्वरी ! सबसे अन्त में बलि प्रदान करना चाहिये और हे महेश्वरी ! इसके बाद बलि को आहार के रूप में ही अर्पण करना चाहिये ।।३०।।

एवं कृते महासिद्धिं लभते नात्र संशयः ।
धनार्थी धनमाप्नोति पुत्रार्थी पुत्रवान् भवेत् ।।३१।।

इस प्रकार ऐसा करने से महासिद्धि प्राप्त होती है । पुत्र की कामना करने वाले को पुत्र की प्राप्ति और धन की कामना करने वाले को धन की भी प्राप्ति होती है । इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है ।।३१।।

विवादे जयमाप्नोति राजद्वारे जयी भवेत् ।
सर्वत्र विजयी भूत्वा देवीपुत्र इव क्षितौ ।।३२।।

सभी प्रकार के वाद-विवाद में जय की प्राप्ति होती है, राजकीय कार्यों में पूर्णरूप से सफलता मिलती है । सम्पूर्ण जगत में विजयी होकर वह देवीपुत्र के समान इस जगत में भ्रमण करता है ।।३२।।

रोगेभ्यो घोररूपेभ्यः पूजयित्वा प्रमुच्यते ।
इच्छासिद्धिः भवेत्तस्य सर्वसिद्धिः न चान्यथा ।।३३।।

विभिन्न प्रकार के रोग, दुःख, कष्ट का हरण भी पूजन से होता है तथा उससे सभी प्रकार की सिद्धि और इच्छा सिद्धि मिलती है यह अन्यथा नहीं है ।।३३।।

कारागारगते देवि मुच्यते नात्र संशयः ।
प्रयोगं परमेशानि सारं परमदुर्लभम् ।।३४।।

हे देवि ! उसे कारागार से भी मुक्ति मिलती है, इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं । हे परमेश्वरी ! इसका प्रयोग अत्यन्त दुर्लभ और गोपनीय है ।।३४।।

अतिस्नेहेन देवेशि तव स्थाने प्रकाशितम् ।
अथवा परमेशानि पठेच्चण्डीं सनातनीम् ।।३५।।

हे देवि ! तुम्हारे अत्यधिक प्रेम के कारण से ही इसे प्रकाशित कर रहा हूँ। हे परमेश्वरी ! परम्परागत रूप से चण्डी पाठ यानि कि दुर्गा सप्तशती का पाठ भी करना चाहिये ।।३५।।

पूजयेच्चण्डिकां देवीं सुगन्धिपुष्पसंयुतैः ।
धूपदीपेन गन्धेन नैवेद्येन सुरेश्वरि ।।३६।।
अवश्यं पञ्चतत्वेन[1] पूजयेच्चण्डिकां पराम् ।।३७।।

हे सुरेश्वरी ! चण्डिका देवी की पूजा नाना प्रकार के पुष्प, इत्र, धूप, दीप और नैवेद्य आदि से करना चाहिये और कालिका चामुण्डा देवी की षोडषोपचार पूजन करनी चाहिये। चण्डिका देवी की पूजा पञ्चतत्त्व से ही (पञ्चमकार से) करनी चाहिये ।।३७।।

आदावृष्यादिसूक्तेन चार्घ्यान्ते परमेश्वरि ।
पञ्चतत्वं समानीय शोधयेच्छास्त्रवित्तमः ।।३८।।

धाराप्रवाह रूप में कालिसूक्त से देवी की स्तुति करना चाहिये और इसके बाद अर्घ्य भी देना चाहिये। हे परमेश्वरी ! शास्त्रों के ज्ञाता को पञ्चतत्त्व का शोधन करके उससे भी अर्घ्य देना चाहिये ।।३८।।

तर्पणञ्च ततः कृत्वा चार्घ्यपात्रे विनिक्षिपेत् ।
अर्घ्योदकेन सम्प्रोक्ष्य पूजयेत् पीठदेवताम् ।।३९।।

इसके बाद अर्घ्य देने वाले पात्र में जल रख करके तर्पण भी करना चाहिये और इसके बाद अर्घ्य पात्र को जल से साफ करके पीठ देवता की पूजा करनी चाहिये ।।३९।।

---

[1] पञ्चत्तत्त्वेनेत्यादि। तत्त्वशोधनमुक्तं महानिर्वाणतन्त्रे अष्टमोल्लासे— आसादयेत् तु तत्वानि स्थापयेदग्रतः शिवे। तारादिप्राणबीजान्तं शतावृत्या जपन् मनुम् ।। सर्वतत्वेषु चक्रेश इमं मन्त्रमुदीरयेत्। "ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्मग्नी ब्रह्मणा हुतम् ।। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना। सप्तधा वा त्रिधा जप्त्वा तानि सर्वाणि शोधयेत् ।। ततो ब्राह्मेण मनुना समर्प्य परमात्मने। ब्रह्मज्ञैः साधकैः सार्द्ध विदध्यात्पानभोजनम्। इति। तत्रैव पञ्चमपटले— मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रा मैथुनमेव च। शक्तिपूजाविधावाद्ये पञ्चतत्वं प्रकीर्त्तितम् ।। पञ्चतत्वं विना पूजा अभिचाराय कल्पते। नेष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य विघ्नस्तस्य पदे पदे ।। शिलायां शस्यवापे च यथा नैवांकुरो भवेत्। पञ्चतत्वविहीनायां पूजायां न फलोद्भवः ।। इति पञ्चतत्वैः पूजायाः प्राशस्त्यमुक्तम्।

प्रणवञ्च समुद्धृत्य मायाबीजं ततः परम् ।
प्रभां मायां जयां सूक्ष्मां विशुद्धां नन्दिनीं तथा ।।४०।।
सुप्रभां विजयां सर्वसिद्धिदां परिपूजयेत् ।
वज्रनखदंष्ट्रायुधाय हूं फडित्यन्ततस्ततः ।।४१।।

प्रणवयुक्त माया बीजमन्त्र अर्थात् ॐ ह्रीं से प्रभा, माया, जया, सूक्ष्मा, विशुद्धा, नन्दिनी, सुप्रभा, विजया, सर्वसिद्धिदा आदि नौ देवियों की पूजा करनी चाहिये, इसके बाद वज्र, नख, द्रंष्ट तथा आयुधों की पूजा हूं फट् मन्त्र से पूजा करनी चाहिये ॥४०-४१॥

नमोऽन्तेन तु देवेशि आसनञ्च समर्च्चयेत् ।
गुरुपङ्क्तिं पूजयित्वा पुनर्ध्यानं समाचरेत् ।।४२।।

हे देवि ! अन्त में ॐ नमो से आसनादि अर्पित कर, ध्यान कर गुरु की पूजा करनी चाहिये । इसके बाद पुनः ध्यान करना चाहिये ॥४२॥

आवाहनं ततोमुद्रां जीवन्यासं प्रपूजनम् ।
षडङ्गेन तु सम्पूज्य परिवारान् प्रपूजयेत् ।।४३।।

आवाहन मुद्रा से आवाहन कर, जीव न्यास करने के बाद पूजन करना चाहिये और ६वों अङ्गों की पूजा कर आवरण पूजा भी करनी चाहिये ॥४३॥

शङ्खनिधिं पद्मनिधिं तथा ब्रह्मादिकं यजेत् ।
इन्द्रादींश्चैव वज्रादीन् पूजयेत् साधकोत्तमः ।।४४।।

शङ्ख, पद्म आदि की पूजा तथा ब्रह्मा आदि की पूजा करनी चाहिये । इसके साथ इन्द्रादि देवताओं का तथा वज्र आदि आयुधों का भी उक्त साधक को पूजा करना चाहिये ॥४४॥

प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत् साधकोत्तमः ।
पुनर्देवीं महेशानि पञ्चतत्वेन पूजयेत् ।।४५।।

हे पार्वती ! साधक श्रेष्ठ को प्रारम्भ में प्रणव तथा अन्त में नमः लगाकर पूजन करना चाहिये । देवी की पूजा पञ्चतत्त्व से अवश्य करनी चाहिये ॥४५॥

प्राणायामं ततः कृत्वा गुरुमन्त्रेष्टदेवताम् ।
ऐक्यं विभाव्य देवेशि मूलमन्त्रं जपेच्छतम् ।।४६।।
प्राणायामं ततः कृत्वा कारणादीन् समाहरेत् ।
तस्यै दत्वा स्वयं पीत्वा पठेच्चण्डीं सुरेश्वरि ।।४७।।

हे देवि ! इसके बाद ऐक्य भाव से देवी की पूजा करनी चाहिये और मन्त्र का जप करना चाहिये । हे देवि ! इसके बाद प्राणायाम करके कारण (सुरा

आदि) को अर्पित करना चाहिये । पश्चात् देवी को समर्पण कर स्वयम् को भी उसका पान करना चाहिये ॥४६-४७॥

साङ्गे जाते तु माहात्म्ये पुनः पानं समाचरेत् ।
ततस्तु प्रपठेद्धीमान् क्रमेण पानमाचरेत् ।।४८।।

साथ ही साथ इसके महात्म्य को जानकर एवम् साथ समझकर दुबारा भी इसे पान करना चाहिये । इसके बाद बुद्धिमान् लोग या साधक लोग पाठ के क्रम में एवम् पाठ की समाप्ति पर भी क्रमानुसारेण इसे पान करते हैं ॥४८॥

समाप्ते तु विलोमेन पुनर्मन्त्रं शतं जपेत् ।
यदि भाग्यवशाद्देवि शक्तियोगं लभेन्नरः ।।४९।।

पाठ की समाप्ति के बाद विलोम रीति से मन्त्र का जप करना चाहिये (एक माला) । हे देवि ! यदि शक्ति भी उस समय साथ में हो तो उसके लाभ का क्या कहना ॥४९॥

चण्डीपाठप्रशंसनम्

तत्क्षणे हि विजानीयात्सर्वसिद्धिः करे स्थिता ।
एवं कृत्वा महेशानि यदि पाठं समाचरेत् ।।५०।।

तब उसे तत्काल ही सिद्धि की प्राप्ति होती है । हे महेशानि ! यदि पाठ ही किया जाय तो पाठ के ही क्रम से ही उसे सिद्धि प्राप्त होती है ॥५०॥

माहात्म्यं तस्य पाठस्य किं वक्तुं शक्यते मया ।
शतवक्त्रं यदि भवेत्तदा वक्तुं न शक्यते ।।५१।।

इसके पाठ के माहात्म्य को कहाँ तक कहा जाये यदि सौ बार भी इसके माहात्म्य का वर्णन किया जाये तो भी इसका माहात्म्य का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥५१॥

पञ्चवक्त्रेण देवेशि किं वक्तुं न शक्यतेऽधुना ।
सकृत्पाठेन देवेशि किं पुनर्ब्रह्म केवलम् ।।५२।।

हे देवि ! पाँच बार बोलने पर या पाँच बार पाठ करने पर क्या नहीं हो सकता? अधिक क्या कहा जाये यदि विधिपूर्वक पाठ किया जाये तो साधक पुनः ब्रह्म में लीन हो जाते हैं ॥५२॥

अवश्यं लभते शान्तिं सर्वत्र परमेश्वरि ।
यदि शान्तिं न लभते मम वाक्यं मृषा तदा ।।५३।।

हे परमेश्वरी ! अवश्य ही सर्वत्र लाभ होता है एवम् सभी जगह शान्ति स्थापित होती है । हे परमेश्वरी ! मेरा यह वचन कभी असत्य नहीं हो सकता ॥५३॥

षोडशेनोपचारेण प्रथमं पूजनञ्चरेत् ।
द्वितीये पञ्चतत्वेन पूजयेच्चण्डिकां प्रिये ।।५४।।

प्रथम में षोडशोपचार पूजन करना चाहिये और इसके बाद द्वितीय बार पञ्चतत्त्व से ही पूजा अर्चना करनी चाहिये ।।५४।।

सहस्रावृत्तिपाठेन यत्फलं लभते नरः ।
सकृत्पाठस्य देवेशि कलां नार्ह-ति षोडशीम् ।।५५।।

एक हजार बार पाठ करने से ही मनुष्य को पूर्ण फल की प्राप्ति होती है । हे देवि ! पाठ यज्ञ सोलहवों कलाओं से युक्त षोडशी के ही समान सर्वत्र लाभ देने वाला होता है ।।५५।।

चण्डिकाया ध्यानमन्त्रादिकथनम्

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि यथा ध्यात्वा पठेन्नरः ।।५६।।

ध्यान के सम्बन्ध में कहा भी जाता है कि सुधिपाठकगण को इसी क्रम के अनुसार ध्यान करना चाहिये ।।५६।।

ॐ या चण्डी मधुकैटभादिदैत्यदलनी या माहिषोन्मादिनी
या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डमथनी या रक्तबीजाशनी ।
शक्तिः शुम्भनिशुम्भ दैत्यदलनी या सिद्धिलक्ष्मीः परा
सा देवी नवकोटिमूर्त्तिसहिता मां पातु विश्वेश्वरी ।।५७।।

हे मधुकैटभ आदि दैत्यों का विनाश करने वाली, महिषासुर का वध करने वाली, धूम्रलोचन और चण्ड-मुण्ड का विनाश करनेवाली, रक्तबीज के रक्त को पान करने वाली या शुम्भ-निशुम्भ दैत्यों का विनाश करनेवाली आदि शक्ति, चराचर विश्व की स्वामिनी, हे सिद्धि को प्रदान करने वाली और हे नवशक्तियों से समाहित सारे शक्तियों की स्वामिनी मैं तुम्हारे चरणों में बारम्बार नमस्कार करता हूँ ।।५७।।

ध्यानमेतच्चण्डिकायाः श्रृणुष्व वीरवन्दिते ।।५८।।

इसी प्रकार से सुधी साधकगणों को चण्डिका का ध्यान करना चाहिये ।।५८।।

श्रृणु मन्त्रं प्रवक्ष्यामि त्रैलोक्येषु च दुर्लभम् ।
वेदाद्यं वाग्भवं मायां कामबीजं ततः परम्[1] ।।५९।।

---

[1] वेदाद्यमित्यादि । तेन "ॐ ऐं ह्री क्ली हीं ह्री क्लीं नमः" इति मन्त्रो भवति ।

स्थिरमायां महामायां कामबीजं ततो नमः ।
नवाक्षरं महामन्त्रं जपेदादौ शतं प्रिये ।।६०।।

जो मन्त्र कहा जाता है, वह तीनों लोकों में दुर्लभ है। वेदाद्य यानि ॐ फिर वाग्भव बीज ऐं इसके बाद माया बीजं ह्रीं कामबीजं क्लीं इसके बाद स्थिरमाया ह्रीं महामाया ह्रीं, कामबीज क्लीं इसके बाद नम: शब्द जोड़ने से नव अक्षरों का मन्त्र होता है (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं क्लीं नम:) यही नवाक्षर मन्त्र है। इसी का सर्वप्रथम १०८ बार जप करना चाहिये ।।५९-६०।।

विपरीतं[1] महामन्त्रं पाठान्ते तु शतं जपेत् ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि ऋषिच्छन्दः सुदुर्लभम् ।।६१।।

पाठ के समाप्ति पर विलोम क्रम से १०८ बार मन्त्र का जाप करना चाहिये। हे देवि सुनो ! ऋषि:छन्द अत्यन्त दुर्लभ छन्द है ।।६१।।

ॐ सप्तशतीमहास्तोत्रस्य मेधातिथिऋषिः गायत्र्यनुष्टुब्बृहतीपंक्तिः त्रिष्टुब्जगत्यश्छदांसि महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवतास्तवकं ऐं ह्रीं क्लीं बीजानि स्त्रौं शक्तिः ममामुककामसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ।।६२।।

विनियोग बोलकर इष्ट देवता के समक्ष जल छोड़ें ।।६२।।

प्रणवेन महेशानि षडङ्गन्यासमाचरेत् ।
इति ते कथितं कान्ते चण्डीपाठस्य लक्षणम् ।।६३।।

हे महेशानि अर्थात् हे परमेशानी ! ॐ से ही षडङ्ग न्यास करना चाहिये। इस प्रकार मैं चण्डी पाठ के लक्षणों को व्यक्त किया ।।६३।।

चण्डीपाठात् सर्वसिद्धिकथनम्

सावर्णिः सूर्य इत्यादि सावर्णिर्भविता मनुः ।
एतन्मात्रं पठेद्देवि किञ्चिन्न्यूनाधिकं न हि ।।६४।।
वारत्रयं पठेद्देवि सञ्जप्य तु दिनत्रयम् ।।६५।।

सावर्णि: सूर्य से लेकर सावर्णिर्भविता मनु: तक यानि कि सम्पूर्ण सप्तशती का पाठ करना चाहिये इसके कम या अधिक पाठ नहीं करना चाहिये। तीन दिनों तक पाठ करना चाहिये और तीन दिनों तक जप भी करना चाहिये ।।६४-६५।।

महारोगे महादुःखे राजपीडादिदारुणे ।
नाना व्याधिगते वापि राज्यनाशे तथा भये ।।६६।।

---

[1] विरीतमित्यादि। तेन "नमः क्लीं ह्रीं हीं क्लीं ह्रीं ऐं ॐ" इति मन्त्रो भवति ।

ग्रहपीडादि सञ्जाते ब्रह्महत्यादि पातके ।
एवं पाठेन देवेशि मुच्यते नात्र संशयः ।।६७।।

नाना प्रकार के रोग, दु:ख, सम्पत्तिनाश, भयंकर रोगादि, भय, आकस्मिक दुर्घटनादि या ग्रह पीड़ा और ब्रह्म हत्या के समान कष्ट से अतिशीघ्र ही साधक को छुटकारा प्राप्त हो सकेगा। इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं करना चाहिये ।।६६-६७।।

बहु किं कथ्यते देवि सर्वशान्तिं लभेन्नरः ।
सर्वशङ्का विनिर्मुक्तो जायते मदनोपमः ।।६८।।

बहुत अधिक क्या कहा जाये हे देवि! इससे सभीप्रकार की शक्ति मिलती है तथा हरप्रकार के शङ्काओं की समाप्ति और उसका निराकरण भी होता है एवम् सुख और आनन्द की भी प्राप्ति होती है ।।६८।।

एवं कृते महेशानि यदि सिद्धिः न जायते ।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम् ।।६९।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे षष्ठः पटलः ।।६।।

हे महेशानि! इतना करने पर भी यदि सिद्धि न मिले तब पुनः इसका प्रयोग करना चाहिये। इसके बाद सिद्धि मिलेगी ही इसमें किसी तरह का सन्देह नहीं ।।६९।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
छठा पटल समाप्त ।।६।।

सप्तमः पटलः

त्रिपुरामन्त्रज्ञानप्रशंसा

श्रीशिव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रिपुरामन्त्रमुत्तमम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते ।।१।।

श्रीशिव जी बोले– अब मैं त्रिपुरा मन्त्र के उत्तम माहात्म्य का वर्णन कर रहा हूँ, जिसके विशेष ज्ञान से पुनर्जन्म के बन्धन से मुक्ति मिलती है ।।१।।

त्रिपुरायास्त्रैविध्यकथनम्

त्रिपुरा त्रिविधा देवि बाला प्रोक्ता पुरा शिवे ।
तथैव भैरवी देवी नित्यातन्त्रे मयोदिता ।
इदानीं सुन्दरीं देवीं शृणु पार्वति सादरम् ।।२।।

हे देवि ! त्रिपुरा की तीन अवस्थायें हैं— (१) बाला, (२) षोडशी और (३) त्रिपुर सुन्दरी । इसे ही नित्यातन्त्र में भैरवी देवी के रूप में वर्णन किया गया है । हे पार्वती सुनो ! इसे ही त्रिपुर सुन्दरी देवी कहा जाता है अर्थात् यही त्रिपुर सुन्दरी देवी हैं ।।२।।

प्रातःकृत्यादिप्रश्नः

श्रीदेव्युवाच

महामन्त्रं श्रुतं नाथ वामकेश्वरयामले ।
प्रातःकृत्यादि देवेश आराधनक्रमं वद ।।३।।

श्रीदेवी बोलीं– हे नाथ ! मैंने यामलीय ग्रन्थों में और वामकेश्वर तन्त्र में इसके महामन्त्रों को सुना है । कृपया इसके प्रातः कृत्य और आराधनादि क्रम के सम्बन्ध में कहें ।।३।।

तद्विषयकशिववाक्यानि

श्रीशिव उवाच

प्रातरुत्थाय मन्त्रज्ञः सहस्रारे निजं गुरुम् ।
पूर्वोक्तध्यानमुच्चार्य पूजयेद् बहुयत्नतः ।।४।।

श्रीशिव जी बोले– प्रातःकाल उठकर मन्त्रों के ज्ञाता सहस्रार में ही अपने गुरु का ध्यान करते हैं एवम् यत्नपूर्वक विविध प्रकार से ध्यान करके पूजन करते हैं ।।४।।

तथा च श्रीगुरोर्ध्यानं[१] गुप्तसाधनतन्त्रके ।
कथितञ्च मया पूर्वं मन्त्रं शृणु वरानने ।।५।।

इसके बाद गुप्त साधन तन्त्र में दिये गये मन्त्रों के द्वारा गुरु का ध्यान ध्यानपूर्वक करना चाहिये। हे सुन्दरी! मैं जो कह रहा हूँ उस मन्त्र को ध्यानपूर्वक सुनो ।।५।।

वाग्बीजञ्च[२] महामायां विष्णुशक्तिं समुच्चरेत् ।
हसखफ्रें तथानन्दभैरवस्य मनुं ततः ।।६।।

वाग्वीज (ऐं) महामायां (ह्रीं) विष्णु शक्ति (श्रीं) के बाद हस्खफ्रें जो कि गुप्त रूप से आनन्दभैरव का मन्त्र है उसका ही उच्चारण करना चाहिये ।।६।।

तस्य शक्तेर्मनुं पश्चात् ततश्चैवं ह्सौः स्मृतः ।
श्रीगुरोश्च[३] तथा शक्तेर्मन्त्रमेतत्सुरेश्वरि ।।७।।

इसके बाद इस हसक्षमलवरयुं आनन्द भैरवाय वषट् हसक्षमलवरयीँ सुधा दैव्यै वषट् मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये। हे सुरेश्वरी! यही मन्त्र गुरु शक्ति है।। ७।।

श्रीगुरोरानन्दनाथान्ते अथातः शक्तिरीरिता ।
वाग्बीजादीन् समुच्चार्य अमुकानन्दनाथ च[४] ।।८।।

ऐं ह्रीं श्रीं अमुकानन्द नाथ श्री पादुकां पूज्यामि नमः से पूजा करना चाहिये; क्योंकि मन्त्रशक्ति ही गुरुशक्ति है ।।८।।

---

१. तथा चेत्यादि । श्रीगुरोर्ध्यानमुक्तं गुप्तसाधनतन्त्रे द्वितीयपटले— श्रीशङ्कर उवाच...कुलवृक्षान् नमस्कृत्य गुरुं ध्यायेत् पराम्बुजे । शरच्चन्द्रसमाभासं शरत्पङ्कजलोचनम् ।। ईषद्धास्यं शारदीयपूर्णेन्दुसदृशाननम दिव्यस्रगम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।। सुरक्तशक्ति संयुक्तवामभागमनोहरम् । वराभयकराम्भोजं सर्वलक्षितम् ।। सहस्रारे महापद्मे गुरुं शिरसि चिन्तयेत् ।। एतत् ते कथितं देवि श्रीगुरोर्ध्यानमुत्तमम् ।। इति । स्त्रीगुरोर्ध्यानञ्च तत्रैव— सहस्रारे महापद्मेकिञ्जल्कगणशोभिते । प्रफुल्लपद्मपत्राक्षीं धनपीनपयोधराम ।। सहस्रवादनां नित्यां क्षीणमध्यां शिवां गुरुम् । पद्मरागसमाभासां रक्तवस्त्रसुशोभनाम् ।। रत्नकङ्कणपाणिञ्च रत्ननूपुरशोभिताम् । शरदिन्दुप्रतीकाशवक्त्रोद्भासितकुण्डलाम् ।। स्वनाथवामभागस्थां वराभयकराम्बुजाम् ।। इति ।

२-३. वाग्वीजञ्चेत्यादि । ॐ ऐँ ह्रीँ श्रीँ हंसखफ्ँ इति मन्त्रः । 'हसक्ष मलवरयूँ आनन्दभैरवाय वषट्' हसक्ष मलवरयीँ सुधादेव्यै वषट् इति आनन्दभैरवस्य तच्छक्तेश्च मनुरिति प्राणतोषणी ।

४. श्रीगुरोरित्यादि । एवञ्चात्र— ऐँ ह्रीँ श्रीँ अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐँ ह्रीँ श्रीँ ह्स्रौः तदात्मकं समर्पयामि इति मन्त्रेण पूजा कर्त्तव्येति ।

श्रीपादुकां समुच्चार्य पूजयामि नमस्ततः ।
वाग्बीजञ्च शम्भुपत्नीं तदुत्तरे हरिप्रियाम् ।।९।।

वाग्बीज (ऐं) शम्भु पत्नीं बीज (ह्रीं) हरिप्रिया बीज (श्रीं) श्रीपादुकां पूजयामि नमः मन्त्र से नमस्कार करना चाहिये ।।९।।

भूतबीजं समुच्चार्य प्रवदेच्च तदात्मकम् ।
समर्पयामि देवेशि पूजाविधिरिति प्रिये ।।१०।।

इसके बाद इसी मन्त्र में भूतबीज (ह्स्रौं) लगाकर विधिपूर्वक पूजा अर्चना करनी चाहिये एवम् नमस्कार भी करना चाहिये ।।१०।।

ततश्चाष्टाक्षरं मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत् ।
जपं समर्पयित्वा तु नमेदञ्जलिना प्रिये ।।११।।

हे प्रिये ! इसके बाद १०८ बार अष्टाक्षर[1] मन्त्र ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें ह्सौः का जप करना चाहिये और जप को गुरु के बायें हाथ में समर्पण करना चाहिये ।।११।।

स्त्रीगुरुस्तवकवचविषये देव्याः प्रश्नः

श्रीदेव्युवाच

स्तुतिञ्च कवचं नाथ श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ।
श्रीगुरोः कवचं स्तोत्रं त्वया प्रोक्तं पुरा प्रभो ।।१२।।

श्रीदेवी बोलीं– हे नाथ ! स्तुति और कवचादि सुनने की प्रबल इच्छा है । हे प्रभो ! गुरुकवच और गुरुस्तोत्र बताने की कृपा करें ।।१२।।

इदानीं स्त्रीगुरोः स्तोत्रं कवचं मयि कथ्यताम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते ।।१३।।

हे नाथ ! इस समय स्त्री गुरुकवच और स्त्रीगुरुस्तोत्र मुझसे कहने की कृपा करें जिसके ज्ञान मात्र से ही पुनर्जन्म के बन्धन से मुक्ति मिलती है ।।१३।।

स्त्रीगुरुस्तोत्रम्

श्रीशिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि स्तोत्रं परमगोपनम् ।
यस्य श्रवणमात्रेण संसारान्मुच्यते नरः ।।१४।।

श्रीशिव जी बोले– हे देवि ! इस परमगोपनीय स्तोत्र को कह रहा हूँ, जिसके सुनने मात्र से ही मनुष्य संसार के सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है इसे सुनो ! ।।१४।।

---

[1] ततश्चेति— ऐँ ह्रीँ श्रीँ हसखफ्रेँ ह्सौः इत्यष्टाक्षरो मन्त्र इति ।

नमस्ते देवदेवेशि नमस्ते हरपूजिते ।
ब्रह्मविद्यास्वरूपायै तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१५।।

हे देवताओं की देवी ! हे शङ्कर द्वारा पूजित देवी ! तुम्हें नमस्कार है । हे ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी देवी ! तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।१५।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
यया चक्षुरुन्मीलितं तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१६।।

अज्ञान रूपी अन्धकार का नाशकर ज्ञान की दीप जलाने वाली और हृदय से ज्ञान उत्पन्न करने वाली हे देवी तुम्हें बार-बार नमस्कार है ।।१६।।

भवबन्धनपारस्य तारिणी जननी परा ।
ज्ञानदा मोक्षदा नित्या तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१७।।

हे संसार के बन्धन से मुक्त करने वाली आदि शक्ति, हे सारे संसार को तारने वाली जगन्माता, हे ज्ञान और मोक्ष देने वाली आदि शक्ति तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।१७।।

श्रीनाथवामभागस्था सदा या सुरपूजिता ।
सदा विज्ञानदात्री च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१८।।

देवताओं द्वारा सदा पूजित श्रीनाथ अर्थात् विष्णु के बायें तरफ निवास करनेवाली अर्थात् लक्ष्मी जो सदा ही ज्ञान और विज्ञान को देने वाली हैं उस देवी को नित्य नमस्कार है ।।१८।।

सहस्रारे महापद्म सदानन्दस्वरूपिणी ।
महामोक्षप्रदा देवी तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१९।।

सहस्रार और महापद्म में निवास करते हुए सदा ही आनन्द प्रदान करने वाली तथा ज्ञान और मोक्ष प्रदान करने वाली देवी ! तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।१९।।

ब्रह्मविष्णुस्वरूपा च महारुद्रस्वरूपिणी ।
त्रिगुणात्मस्वरूपा च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।२०।।

ब्रह्मा, विष्णु और महारुद्र स्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका शक्ति सम्पन्न आदि शक्ति रूपी देवी तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।२०।।

चन्द्रसूर्याग्निरूपा च सदाऽऽघूर्णितलोचना ।
स्वनाथञ्च समालिङ्ग्य तस्यै नित्यं नमो नमः ।।२१।।

सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि को सदा अपने में निवास करने वाली और चराचर विश्व को अपनी दृष्टि से दृष्टि प्रदान करने वाली स्वामिनी और शिव को आलिङ्गन करने वाली देवी तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।२१।।

ब्रह्म-विष्णु-शिवत्वादि जीवन्मुक्तिप्रदायिनी ।
ज्ञानविज्ञानदात्री च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।२२।।

ब्रह्मा, विष्णु और शिव को अपने में समाहित करने वाली, समस्त जीव को मुक्ति प्रदान करने वाली, ज्ञान और विज्ञान को देने वाली देवी तुम्हें नित्य नमस्कार है ।।२२।।

इदं स्तोत्रं महेशानि यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
स सिद्धिं लभते नित्यं सत्यं सत्यं न संशयः ।।२३।।

हे गिरिजे ! जो इस स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करता है, उसे अवश्य ही नयी-नयी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । यह सत्य ही सत्य है एवं नित्य भी है, इसमें कोई संशय नहीं ।।२३।।

प्रातःकाले पठेद्यस्तु गुरुपूजापुरःसरम् ।
स एव धन्यो लोकेऽस्मिन्देवीपुत्र इव क्षितौ ।।२४।।

प्रात:काल उठकार गुरु पूजन करके जो कोई भी इसका पाठ करता है वह धन्य हो जाता है तथा पाठक सम्पूर्ण जगत् में देवीपुत्र की तरह भ्रमण करता है ।।२४।।

स्त्रीगुरुकवचनम्

श्रीशङ्कर उवाच

स्तोत्रं समाप्तं देवेशि कवचं शृणु सादरम् ।
यस्य श्रवणमात्रेण वागीशसमतां व्रजेत् ।।२५।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे गिरिजे ! स्तोत्र की समाप्ति के बाद आदरपूर्वक कवच सुनो जिसके सुनने मात्र से ही साधक सरस्वती के समान महाज्ञानी हो जाता है ।।२५।।

स्त्रीगुरोः कवचस्यास्य सदाशिव ऋषिः स्मृतः ।
तदाख्या देवता प्रोक्ता चतुर्वर्गफलप्रदा ।।२६।।

स्त्री गुरु कवच के ऋषि सदा शिव हैं और यह देवताओं द्वारा कहा गया है, जिसके पाठ करने से अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष आदि की प्राप्ति होती है ।।२६।।

क्लीं बीजं मे शिरः पातु तदाख्यातं ललाटकम् ।
क्लीं बीजं मे चक्षुषोः पातु सर्वाङ्गं म सदाऽवतु ।।२७।।

क्लीं बीजमन्त्र रूपी शक्ति शिर की रक्षा करे और मस्तक में ज्ञान शक्ति प्रदान करे। क्लीं बीजमन्त्र नेत्र की रक्षा करे और सभी अङ्गों में निवास करें ।।२७।।

ऐं बीजं मे मुखं पातु ह्रीं जङ्घां परिरक्षतु ।
श्रीं बीजं स्कन्धदेशं मे वाग्भवं मे भुजद्वयम् ।।२८।।

ऐं बीज मन्त्र मुख की रक्षा करे और ह्रीं जङ्घा की रक्षा करे। श्रीं बीजमन्त्र दोनों कन्धाओं की रक्षा करे और ऐं अर्थात् वाग्भव बीजमन्त्र दोनों भुजाओं की रक्षा करें ।।२८।।

हकारं मे दक्षभुजं क्षकारं वामहस्तकम् ।
क्षमर्णौ तदधः पातु लकारं हृदयं मम ।।२९।।

हकार (शिव) दक्षिण भुजा और क्षकार (नृसिंह) बायें भुजा की रक्षा करें। क्षमण, कण्ठ की और लकार (पृथ्वी) हृदय की रक्षा करें ।।२९।।

रकारं पृष्ठदेशञ्च रकारं दक्षपार्श्वकम् ।
जूङ्कारं वामपार्श्वे तु सकारं मेरुमेव तु ।।३०।।

रकार अर्थात् अग्नि पीठ की और दक्षिण भाग की रक्षा करे। जूङ्कार बायें भाग की और सकार मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) की रक्षा करे।।३०।।

मकारं चाङ्गुलीः पातु लकारं मे नखोपरि ।
वकारं मे नितम्बञ्च रकारं जानुयुग्मकम् ।।३१।।

वकार यानि कि वटुक भैरव नितम्ब की, रकार अर्थात् अग्नि दोनों घुटनों की रक्षा करें। मकार अङ्गुली की और लकार नाखूनों की रक्षा करें ।।३१।।

यी:कारं पादयुगलं ह्सौः सर्वाङ्गमेव तु ।
ह्सौः लिङ्गञ्च लोमञ्च केशञ्च परिरक्षतु ।।३२।।

यी:कार दोनों पैरों की और ह्सौं: सम्पूर्ण अङ्गों की रक्षा करे। हसौः लिङ्ग, रोयें और बालों की भी रक्षा करें ।।३२।।

ऐं बीजं पातु पूर्वे तु ह्रीं बीजं दक्षिणेऽवतु ।
श्रीं बीजं पश्चिमे पातु उत्तरे भूतसम्भवम् ।।३३।।

ऐं बीज अर्थात् सरस्वती पूर्व दिशा से तथा ह्रीं अर्थात् काली दक्षिण दिशा से रक्षा करें। श्रीं अर्थात् लक्ष्मी पश्चिम दिशा से और भूत (हूं) उत्तर दिशा से रक्षा करें ।।३३।।

श्रीं पातु चाग्निकोणे च तदाख्यां नैर्ऋतेऽवतु ।
देव्यम्बा पातु वायव्यां शम्भोः श्रीपादुकां तथा ।।३४।।

श्रीं अर्थात् लक्ष्मी अग्निकोण से और नैऋत्यकोण से, जगदम्बा वायव्यकोण से तथा शिव ब्रह्मरन्ध्र की रक्षा करें ।।३४।।

पूजयामि तथा चोर्ध्वं नमश्चाधः सदाऽवतु ।
इति ते कथितं कान्ते कवचं परमाद्भुतम् ।।३५।।

ऊर्ध्वमुखी होकर यानि कि ऊपर से पूजा करें और तब नमस्कार करें यह परम अद्भुत कवच मैं तुमसे कह रहा हूँ। हे प्रिये ! यह अद्भुत ही नहीं परम अद्भुत है ।।३५।।

स्त्रीगुरुकवचप्रशंसा

गुरुमन्त्रं जपित्वा तु कवचं प्रपठेद्यदि ।
स सिद्धः सगणः सोऽपि शिवः साक्षान्न संशयः ।।३६।।

गुरु मन्त्र का जप करने के बाद ही इस कवच का पाठ करना चाहिये। इससे सभीप्रकार की सिद्धियों की प्राप्ति होगी और वह साक्षात् शिव समान हो जायेगा ।।३६।।

पूजाकाले पठेद्यस्तु कवचं मन्त्रविग्रहम् ।
पूजाफलं भवेत्तस्य सत्यं सत्यं सुरेश्वरि ।।३७।।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद्देवि स सिद्धो नात्र संशयः ।।३८।।

हे सुरेश्वरी ! पूजाकाल के समय यदि कवच का पाठ किया जाय और मन्त्रों का जप भी किया जाय तो पूजा का फल अवश्य मिलेगा। यह मैं सत्य कह रहा हूँ, सत्य ही कह रहा हूँ। तीनों काल में त्रिकाल सन्ध्या करके इसका पाठ किया जाये तो निश्चित रूप से सिद्धि मिलती है। इसमें किसी तरह का कोई सन्देह नहीं ।।३७-३८।।

भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ।।३९।।

यदि इसे भोजपत्र पर लिख करके और सोने के ताबीज में भरकर धारण किया जाय तो उसको देखते ही उसका प्रतिद्वन्द्वी तत्काल ही प्रभावहीन हो जाता है ।।३९।।

विवादे जयमाप्नोति रणे च निर्ऋतिरिव ।
सभायां जयमाप्नोति मम तुल्यो न संशयः ।।४०।।

हर प्रकार के वाद-विवाद में जय की प्राप्ति होती है और युद्ध में विजय प्राप्त होता है। सभा में सम्मान प्राप्त होता है और वह मेरे ही समान हो जाता है ।।४०।।

सहस्रारे भावयं स्तां त्रिसन्ध्यं प्रपठेद्यदि ।
स एव सिद्धो लोकेशो निर्वाणपदमीहते ।।४१।।

त्रिकाल सन्ध्या करके इसके पाठ करने से सहस्रार से इसकी क्रिया होती है अर्थात् कुण्डली जागरण होता है और वह मेरे समान सिद्ध होकर सम्पूर्ण जगत में विचरण करता है । वह महानिर्वाण पद को यानि कि मुक्ति को भी प्राप्त करता है ।।४१।।

समस्तमङ्गलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन ।।४२।।

समस्त मङ्गल प्रदान करने वाला यह कवच परम अद्भुत है । इसे जैसे-तैसे किसी व्यक्ति को नहीं देना चाहिये और इसे किसी के समक्ष व्यक्त नहीं करना चाहिये ।।४२।।

देयं शिष्याय शान्ताय चान्यथा पतनं भवेत् ।
अभक्तेभ्योऽपि देवेशि पुत्रेभ्योऽपि न दर्शयेत् ।।४३।।

हे देवेशि ! जो शिष्य आज्ञाकारी, शान्त और सरलचित्त हो तथा उसमें उसकी पूर्ण आस्था हो उसे ही देना चाहिये अन्यथा उसका पतन होता है । जो भक्त नहीं है और जिसको कोई भी सन्तान नहीं हो उसे भी इसके सम्बन्ध में नहीं बताना चाहिये और न उसको दिखाना चाहिये ।।४३।।

महादेवस्य वक्तव्यविषये जिज्ञासा

इदं कवचमज्ञात्वा दशविद्याञ्च यो जपेत् ।
स नाप्नोति फलं तस्य परे च नरकं व्रजेत् ।।४४।।

इस कवच के पाठ करने के बाद यदि वह दशो महाविद्याओं की साधना करता है या मन्त्र जप करता है तो उसे कभी भी नरक में जाना नहीं होता ।।४४।।

समाप्तं कवचं देवि किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।
तव स्नेहानुबन्धेन किं मया न प्रकाशितम् ।।४५।।

हे देवि ! कवच की समाप्ति के बाद और अन्य क्या सुनने की इच्छा है । तुम्हारे ही प्रेम के वशीभूत होकर मैंने क्या नहीं बतलाया ।।४५।।

कूर्चबीजं समुच्चार्य प्राणमन्त्रं ततः प्रिये ।
अनेन वायुयोगेन कुण्डलीचक्रसञ्चरेत् ।।४६।।

हे प्रिये ! कूर्चबीज (हूँ) के बाद प्राणमन्त्र (हंस:) का उच्चारण करना चाहिये । इसी के वायु प्रवाह (स्पन्दन) मात्र से कुण्डलीनि चक्र में संचार होता है ।।४६।।

अष्टोत्तरशतं मूलमन्त्रं जप्त्वा नमेत् सुधीः ।
स्नानकर्म ततः कृत्वा सन्ध्यां कुर्यात्पुरोदिताम् ।।४७।।

इस मूल मन्त्र का १०८ बार जप करके भक्तिपूर्वक नमस्कार करना चाहिये और इसके बाद स्नानादि कर्म करके सन्ध्यादि कर्म करना चाहिये ।।४७।।

श्रीविद्याविषये सन्ध्याध्यानादिप्रश्नः

श्रीदेव्युवाच

सन्ध्यायाः कीदृशं ध्यानं वद मे परमेश्वर ।
श्रीविद्याविषये नाथ विशेषो मयि कथ्यताम् ।।४८।।

श्रीदेवी बोली– हे परमेश्वर ! हे नाथ ! सन्ध्या का ध्यान किस प्रकार किया जाता है। इसके सम्बन्ध में विशेष रूप से प्रकाश डालने की कृपा करें ।।४८।।

श्रीविद्यायाः प्रातरादिभेदेन रूपत्रैविध्यकथनम्

श्रीशिव उवाच

ध्यायेच्च सुन्दरीं देवीं त्रिविधां बीजरूपिणीम् ।
प्रभाते वाग्भवां देवीं मध्याह्ने मदनात्मिकाम् ।।४९।।

श्री शिव जी बोले– तीन बीजमन्त्रों की अधिष्ठात्री त्रिपुर सुन्दरी देवी का ध्यान करना चाहिये। प्रात:काल में वाग्भव सरस्वती देवी का और मध्याह्नकाल में महालक्ष्मी का ध्यान करना चाहिये ।।४९।।

सायाह्ने शक्तिरूपाञ्च त्रिविधां बिन्दुरूपिणीम् ।
पूजाकाले महादेवीं ध्यानानुरूपिणीं शिवाम् ।।५०।।

सायंकाल में महाकाली का ध्यान करना चाहिये जो तीन बिन्दुओं के रूप में स्थित हैं। हे महादेवी ! पूजाकाल में इसी के अनुरूप ध्यान करना चाहिये ।।५०।।

वाग्भवेनेन्दु सदृशां शुक्लवर्णां विचिन्तयेत् ।
शक्तिबीजं स्वर्णवर्णं रक्तवर्णां विभावयेत् ।।५१।।

वाग्भव (महासरस्वती) चन्द्रमा के समान श्वेतवर्ण की और महाकाली स्वर्ण की सी आभा लिये रक्तवर्ण की हैं उसी के अनुरूप ध्यान करना चाहिये ।।५१।।

[१]प्रभाते शुक्लवर्णाभां मध्याह्ने नीलसन्निभाम् ।
सायाह्ने रक्तवर्णाभां भावयेत् साधकोत्तमः ।।५२।।

वही प्रात:काल में श्वेवर्ण की रहती हैं मध्याह्न काल में आकाश के समान नीले रंग की और सायंकाल में रक्तवर्ण की हो जाती हैं । इसी के अनुरूप उत्तम साधकों को ध्यान करना चाहिये ।।५२।।

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीपूजाग्रे शम्भुपूजाया अवश्यकर्त्तव्यत्वकथनम्

एवं ध्यात्वा महेशानि सन्ध्यां कुर्याद्विचक्षणः ।
शिवपूजां ततः कृत्वा पूजयेत्परदेवताम् ।।५३।।

हे गिरिजे ! इसी के अनुरूप ध्यान करके सन्ध्या करनी चाहिये और इसके बाद शिव लिङ्ग की पूजा करके अन्य देवताओं की भी पूजा करनी चाहिये ।।५३।।

ततस्तु पूजयेद्देवीं त्रिपुरां मोक्षदायिनीम् ।
त्रिपुरा परमा विद्या महाविद्या पतिव्रता ।।५४।।

हे देवि ! इसके बाद मोक्ष प्रदान करनेवाली त्रिपुरादेवी (त्रिपुरसुन्दरी) की पूजा करनी चाहिये । महाविद्याओं में त्रिपुरसुन्दरी सबसे उत्तम विद्या हैं जो पतिव्रता हैं अर्थात् शिव की अर्द्धांगिनी हैं ।।५४।।

पतिपूजां विना पूजां न गृह्णाति कदाचन ।
अत एव महेशानि आदौ लिङ्गं प्रपूजयेत् ।।५५।।

हे गिरिजे ! पति (शिव) की पूजा के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होगा । हे गिरिजे ! प्रथम में शिव (लिङ्ग) की ही पूजा करनी चाहिये ।।५५।।

पञ्चाक्षरं पञ्चवक्त्रं पूजयेत् बहुयत्नतः ।
ततस्तु पूजयेद्देवीं त्रिपुरां मोक्षदायिनीम् ।।५६।।

पञ्चमुख भगवान् शिव, जिनका पाँच अक्षरों वाला मन्त्र है उसी के द्वारा पूर्ण विधिविधान से पूजा करनी चाहिये । इसके बाद मोक्ष प्रदान करने वाली त्रिपुरा देवी की पूजा करनी चाहिये ।।५६।।

---

१. प्रभात इत्यादि । अत्र यद्वर्णविषये । विसवादि सन्ध्याध्यानमुक्तं गायत्रीतन्त्रे प्रथमपटले— सन्ध्याध्यानं प्रवक्ष्यामि सावधानेन संशृणु । विना ध्यानं महेशानि न सन्ध्याफलमाप्नुयात् ।। नासाग्रे लोचनं न्यस्य ध्यायेद् ब्रह्मस्वरूपिणीम् । प्रातरादित्यसङ्काशां मध्याह्ने शङ्खसन्निभाम् ।। सायाह्ने मरकतभासां चतुर्बाहुसमन्विताम् ।। इत्यादि ; तत्रैव— मध्याह्ने...चतुर्भुजां कृष्णवर्णाम् इत्यादि, तदपि सुधीभिर्विभाव्यम् ।।

शम्भुपूजायामाधारभेदप्रश्नः, तत्राऽऽधारभेदकथनञ्च

श्रीदेव्युवाच

किमाधारे यजेच्छम्भुं कृपया वद शङ्कर ।
आधारभेदे देवेश साधकः फलभाग्भवेत् ।।५७।।

श्रीदेवी बोली– हे देवताओं के देवता ! किस आधार से शम्भु श्रेष्ठ हो जाते हैं और उसका भेद क्या है? हे भगवान् शङ्कर ! इसे बताने की कृपा करें कि किस आधार भेद के कारण साधक उत्तम फल को कैसे प्राप्त करता है? ।।५७।।

श्रीशङ्कर उवाच

[१]पूजयेत् पार्थिवे लिङ्गे पाषाणे लिङ्गके तथा ।
स्वर्णलिङ्गेऽथवा देवि रौप्ये ताम्रे च कांस्यके ।।५८।।

श्री शङ्कर जी बोले– हे देवि ! मिट्टी के बने (पार्थिव) शिवलिङ्ग की या पत्थर के बने शिवलिङ्ग की या सोने या चाँदी अथवा ताँबे या काँसे से बने शिवलिङ्ग की ही पूजा करनी चाहिये ।।५८।।

पारदे वाऽथ गङ्गायां स्फाटिके मारकतेऽपि वा ।
कार्यभेदे लौहलिङ्गे भस्मनिर्माणलिङ्गके ।।५९।।

पारद से बने शिवलिङ्ग की या गङ्गा की मिट्टी से बने शिवलिङ्ग की या स्फटिक से बने शिव लिङ्ग की या माणिक्य आदि रत्नों से बने शिवलिङ्ग की भी पूजा करनी चाहिये तथा कार्य भेद से लोहे के लिङ्ग की भी पूजा करनी चाहिये ।।५९।।

[२]वालुकानिर्मिते लिङ्गे गोमये वाऽथ पूजयेत् ।
पार्थिवे पूजनं देवि तोडलाख्ये मयोदितम् ।।६०।।

---

[१] पूजयेदित्यादि । लिङ्गस्य पञ्चसूत्रीकरणमुक्तं लैङ्गे तन्त्रान्तरतन्त्रे च— शिवलिङ्गस्य यन्मानं तन्मानं दक्षसव्ययोः । योन्यग्रमपि यन्मानं तदधोऽपि तथा भवेत् ।। लिङ्गस्य यादृग् विस्तारः परिणाहोऽपि तादृशः । लिङ्गस्य द्विगुणा देवि योनिस्तदर्धसम्मिता । कुर्वीतांगुष्ठतो ह्रस्वं न कदाचिदपि क्वचित् । रत्नादिशिवनिर्माणे मानमिच्छावशाद्भवेत् ।। इति ।

[२] वालुकानिर्मित इत्यादि । तदुक्तं तोडलतन्त्रे पञ्चमपटले— शृणु देवि प्रवक्ष्यामि पार्थिवं शिवपूजनम् । तत्रादौ परमेशानि गुरुदेवं नमेत् सुधीः ।। ॐ हराय नमस्कारं मृत्तिकामाहरेत् सुधीः । महेश्वराय नमस्कारं लिङ्गं निर्माय यत्नत ।। शूलपाणे इहोच्चार्य सुसम्प्रतिष्ठितो भव ।

.....क्रमशः

गोबर और बालू दोनों को एक साथ मिलाकर लिङ्ग बना करके ही शिवलिङ्ग की पूजा करनी चाहिये। तोडल तन्त्र में दिये गये पार्थिव पूजन विधि से ही शिवलिङ्ग की पूजा करनी चाहिये ।।६०।।

शिवसंस्कारकथनम्

संस्कारेण विना देवि पाषाणादौ न पूजयेत् ।
संस्कारञ्च प्रवक्ष्यामि विशेष इह यद्भवेत् ।।६१।।

बिना संस्कार अर्थात् बिना प्राणप्रतिष्ठा किये पत्थर के शिवलिङ्ग की पूजन नहीं करनी चाहिये। यहाँ जो संस्कार करने के सम्बन्ध में कहा गया है, उसी के बाद ही पूजन करना चाहिये ।।६१।।

रौप्यञ्च स्वर्णलिङ्गञ्च स्वर्णपात्रे निधाय च ।
तस्मादुत्तोल्य तं लिङ्गं दुग्धमध्ये दिनत्रयम् ।।६२।।

चाँदी या सोने के बने शिवलिङ्ग को लेकर इसे तीन दिनों तक दूध में डुबाकर रखना चाहिये। दूध उतना ही होना चाहिये जितना कि शिवलिङ्ग का वजन है ।।६२।।

त्र्यम्बकेण स्थापयित्वा कालरुद्रं प्रपूजयेत् ।
षोडशेनोपचारेण वेद्यान्तु पार्वतीं यजेत् ।।६३।।

अनेन मनुना देवि जीवन्यासं विधीयते। शकारं बिन्दुसंयुक्तं दीर्घयुक्तं षडङ्गकम्। तस्य ध्यानं प्रवक्ष्यामि श‍ृणुष्व सुसमाहिता ।। ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्। पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।। पुष्पं शिरसि सन्धार्य्य मानसैः पूजनञ्चरेत्। पुनर्ध्यात्वा महेशानि शिवे पुष्पं निधाय च ।। पिनाकधृगिति चोच्चार्य इहागच्छद्वयं वदेत्। इह तिष्ठ ततो द्वन्द्वं सन्निधेहिद्वयम् इह ।। इह सन्नि ततो रुद्रद्वयस्वशब्दश्च ततो वदेत्। यावत् पूजां समुच्चार्य ततश्चैवं करोम्यहम् ।। स्नानीयञ्च पशुपति ङे युक्तञ्च नमश्चरेत्। वेदाद्यं योजयेद् देवि ब्राह्मणः साधकोत्तमः ।। एतत् पाद्यं महेशानि षडक्षरमनुं ततः। विचार्य्यं सर्वं देवेशि षोडशैरुपचारकैः ।। पूजयित्वा महेशानि चाष्टमूर्त्ति प्रपूजयेत्। शर्वो भवस्तथा रुद्र उग्रो भीमः पशुपतिः ।। महादेवश्च ईशान ङेयुतं कुरु यत्नतः। क्षितिं जलं तथा चाग्निं वायुञ्चाकाशमेव च ।। यजमानं तथा सोमं सूर्यञ्च मूर्त्तिना सह। सर्वत्र ङेयुतं कृत्वा पूजयेत् साधकोत्तमः ।। प्रणवादिनमोऽन्तेन वामावर्तेन पूजयेत्। मूर्त्तयोऽष्टौ शिवस्यैताः पूर्वादिक्रमयोगतः ।। आग्नेयान्ताः प्रपूज्याथ वेद्यां लिङ्गे शिवं यजेत्। अष्टोत्तरसहस्रं वा शतं वा प्रजपेत् ततः ।। गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ।। ततस्तोयं समादाय जपञ्चैव समर्पयेत्। मुखवाद्यं ततः कृत्वा चाष्टाङ्गं प्रणमेत् सुधीः ।। संहारेण महादेव क्षमस्वेति विसर्जयेत्।

हे पार्वती ! महामृत्युञ्जय मन्त्र से स्थापना करके कालरुद्र की पूजा करनी चाहिये और वैदिक रीति से ही षोडषोपचार पूजन करना चाहिये ।।६३।।

तस्मादुत्तोल्य तं लिङ्गं गङ्गातोये दिनत्रयम् ।
ततो वेदोक्तविधिना संस्कारमाचरेत् सुधीः ।।६४।।

इसके बाद इसी के तुल्य शिवलिङ्ग को गङ्गाजल में तीन दिनों तक रखना चाहिये। इसके बाद इसका वैदिक रीति से संस्कार पूजन करना चाहिये। साधकगण इसी रीति से करते हैं ।।६४।।

लिङ्गप्रमाणप्रश्नः, लिङ्गप्रमाणकथनञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

लिङ्गप्रमाणं देवेश कथयस्व मयि प्रभो ।
पार्थिवे च शिलादौ च विशेषो यदि वा भवेत् ।।६५।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे देवेश ! हे प्रभो ! हमें यह बताने की कृपा करें कि लिङ्ग का प्रमाण क्या होगा? यदि पार्थिव लिङ्ग या शिलादि यानि कि पत्थर आदि का लिङ्ग बनाया जाये तो उसका प्रमाण क्या होगा? ।।६५।।

श्रीशिव उवाच

[१]मृत्तिकातोलकं ग्राह्यमथवा तोलकद्वयम् ।
एतदन्यं न कर्त्तव्यं कदाचिदपि पार्वति ।।६६।।

---

[१] मृत्तिकेत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणन्तु— मृत्तिकातोलकं ग्राह्यमथवा तोलकद्वयम् । त्रिसूत्रस्य प्रमाणेन घटनं कारयेद् बुधः ।। अङ्गुष्ठपर्वमानन्तु कृत्वा लिङ्गं प्रपूजयेत् । मृदादिलिङ्गगठने प्रमाणं परिकीर्त्तितम् ।। फलमुक्तमवाप्नोति अन्यथा चेत्तदन्यथा । (इति षट्कर्मदीपिका-धृतावश्वसारतन्त्रम्) । मृत्तिकाभेदेन ब्राह्मणादीनां पूजा फलस्य प्राशस्त्यमुक्तं तत्रैव : शुक्लं हि पार्थिवं लिङ्गं निर्माय यस्तु पूजयेत् । स एव परमेशानि त्रिवर्गफलभाग्भवेत् ।। क्षत्रियस्तु वरारोहे रक्तं निर्माय पार्थिवम् । पूजयेत्सततं यस्तु त्रिवर्गफलभाग्भवेत् ।। हरितं पार्थिवं देवि निर्माय यस्तु पूजयेत् । स च वैश्यो महेशानि त्रिवर्गफलभाग्भवेत् । कृष्णं हि पार्थिवं लिङ्गं निर्माय यस्तु पूजयेत् । स शूद्रः परमेशानि त्रिवर्गफलभाग्भवेत् ।। इति । लिङ्गार्चनतन्त्रे द्वितीयपटले— मृत्स्ना तु परमेशानि वर्णभेदेन सुन्दरि । वर्णभेदस्तु तत्रैव तृतीयपटले— चतुर्धा पार्थिवं लिङ्गं मृत्स्नाभेदेन पार्वति । शुक्लं रक्तं तथा पीतं कृष्णञ्च परमेश्वरि ।। शुक्लन्तु ब्राह्मणे शस्तं क्षत्रिये रक्तमिष्यते । पीतन्तु वैश्यजातौ स्यात् कृष्णं शूद्रे प्रकीर्त्तितम् ।। इति ।

....क्रमशः

श्रीशिव जी बोले– हे पार्वती ! एक तोला या दो ताला मिट्टी लेना चाहिये इससे अधिक नहीं लेना चाहिये या इससे अधिक लेने की आवश्यकता नहीं है ।।६६।।

शिलादौ परमेशानि स्थूलञ्च फलदायकम् ।
अङ्गुष्ठमानं देवेशि यद्वा हेमाद्रिमानकम्[1] ।।६७।।

हे देवताओं की देवी ! पत्थर आदि का लिङ्ग स्थूल (मोटा) होने पर ही पूर्ण रूप से ही फल देने में सक्षम है । इसका प्रमाण अँगूठा भर होना चाहिये या पाँच अगूँठे भर का होना चाहिये ।।६७।।

एवंक्रमेण देवेशि फलं बहुविधं लभेत् ।
स्थूलात्स्थूलतरं लिङ्गं रुद्राक्षं परमेश्वरि[2] ।।६८।।
पूजनाद्धारणाद्देवि फलं बहुविधं स्मृतम् ।।६९।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे सप्तमः पटलः ।। ७।।

हे देवेशि ! इसी क्रम से विभिन्न प्रकार के फलों की प्राप्ति होती है । मोटा से मोटा लिङ्ग रुद्राक्ष की तरह ही पूर्णरूप से शुभ फल देनेवाला है । हे देवी ! पूजन और धारण करने से विभिन्न प्रकार के फलों को प्राप्ति होती हैं ।।६८-६९।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का सातवाँ पटल समाप्त ।।७।।

पार्थिवे त्रिसूत्रीकरणञ्चोक्तं कालोत्तरे— लिङ्गे वेद्यां तथा पीठे समसूत्रनिपातनात् । समञ्चैव विजानीयात्त्रिसूत्रीकरणन्त्विदम् ।। इति ।

मृत्तिकाग्रहणस्थानान्याह प्राणतोषणीधृतमत्स्यसूक्ते पञ्चदशपटले— तीर्थमृत्स्नां समाहृत्य निर्माय लिङ्गमद्भुतम् । तीर्थाभावे महेशानि नदीमृत्स्नां शुचिस्मिते ।। नद्यभावे महेशानि क्षुद्रस्य मृत्तिकां प्रिये । नदीक्षुद्रयोर्लक्षणमपि तत्रैव : पर्वतप्रभवा देवि नदीनाम्नेत्युदाहृता । एतद्भिन्ना महेशानि नदी क्षुद्रा इति प्रिये ।। निझरस्य च देवेशि मृत्स्ना सम्पत्प्रदायिनी । तथा चैव सरोत्पन्ना नाना-सुखप्रदायिनी ।। सर्वाभावे महेशानि गोष्पदस्थाञ्च मृत्तिकाम् । अथवा परमेशानि यत्र चित्तं प्रसीदति ।। इति ।

[1] शिलादौ चेति । अत्र संवदति— रुद्राक्षं शिवलिङ्गञ्च स्थूलात्स्थूलं प्रशस्यते । शालग्रामो नार्मदश्च सूक्ष्मात्सूक्ष्मो विशिष्यते ।। इति मेरुतन्त्रवचनम् ।
हेमाद्रिप्रमाणञ्चोक्तं मत्स्यपुराणे षडशीतितमेऽध्याये— उत्तम : पलसाहस्रो मध्यमः पञ्चभिः शतैः । तदर्द्धेनाधम इति ।

[2] स्थूलादिति । स्थूलात् स्थूलतरमिति पार्थिवलिङ्गेतरपरम्, 'मृत्तिकातोलकं ग्राह्य' मित्यादिवचनादिति ।

अष्टमः पटलः

देव्याः पारदमाहात्म्यविषये लिङ्गरूपविषये च जिज्ञासा

श्रीदेव्युवाच

शृणु नाथ परानन्द परापरकुलात्मक ।
त्वां विना त्राणकर्त्ता च मम ज्ञाने न वर्त्तते ।।१।।

श्रीदेवी बोली– हे परम आनन्द को देने वाले पर अपर कुल के स्वामी सुनिये । हे कष्टहरणकर्ता ! आपके बिना मेरे ज्ञान की वृद्धि कैसे होगी? ।।१।।

पूर्णलिङ्गं महेशान शिवबीजं न चान्यथा ।
शिलामध्ये तथा चक्रं लक्ष्मीनारायणं परम् ।।२।।

पूर्ण लिङ्ग और शिव बीज दोनों में अन्यथा कुछ भी नहीं है । उस पत्थर के मध्य में चक्र तथा लक्ष्मी-नारायण का निवास है और कुछ भी नहीं ।।२।।

महादेवस्य तत्रोत्तरम्

पारदस्य शतांशैकं मम ज्ञाने न वर्त्तते ।
शिवबीजं महादेव शिवरूपं न चान्यथा ।
लिङ्गरूपं कथं देव तद्वदस्व मयि प्रभो ।।३।।

पारा के सौवें हिस्से का भी हमें ज्ञान नहीं है । शिव बीज में महादेव शिव रूप में हैं इसमें अन्यथा कुछ भी नहीं है। हे प्रभो ! लिङ्ग के सम्बन्ध में हमें बताने की कृपा करें ।।३।।

श्रीशिव उवाच

यथा ज्योतिर्मयं लिङ्गं कैलासशिखरे मम ।
तस्यैव षोडशांशैकः काश्यां विश्वेश्वरः स्थितः ।।४।।

श्रीशिव जी बोले– सर्वोत्तम ज्ञान का प्रकाश देने वाला सदैव ज्योति सम्पन्न मेरा लिङ्ग कैलास की चोटी पर है और उसका सोलहवाँ भाग ही काशी में विश्वेश्वर लिङ्ग के रूप में विख्यात है ।।४।।

पूर्णलिङ्गं महेशानि शिवबीजं न चान्यथा ।
शिलामध्ये तथा चक्रं लक्ष्मीनारायणं परम् ।।५।।

हे गिरिजे ! पूर्ण लिङ्ग और शिव बीजमन्त्र मेरे सिवा कुछ भी नहीं है और पत्थर (शालिग्राम) के मध्य में ही लक्ष्मी-नारायण अर्थात् विष्णु निवास करते हैं ।।५।।

पारदस्य शतांशैकं लक्ष्मीनारायणं न हि ।
पकारं विष्णुरूपञ्च आकारं कालिका तथा ।।६।।

पारद का सौवें भाग में से एक भी भाग ऐसा नहीं है, जिसमें लक्ष्मी-नारायण अर्थात् (विष्णु) नहीं हैं। पारद में पकार विष्णु का रूप है और उसमें आकार कालिका का रूप है ।।६।।

रेफं शिवं दकारञ्च ब्रह्मरूपं न चान्यथा ।
पारदं परमेशानि ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मकम् ।।७।।

हे गिरिजे ! रेफ शिव का प्रतीक है और दकार ब्रह्मा का प्रतीक है, यह अन्यथा नहीं है । पारद में ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों एक साथ ही सन्निहित हैं ।।७।।

सर्वलिङ्गतः पारदनिर्मितलिङ्गस्य प्राधान्यकथनम्

यो यजेत्पारदं लिङ्गं स एव शम्भुरव्ययः ।
स एव धन्यो देवेशि स ज्ञानो स तु तत्त्ववित् ।।८।।

हे गिरिजे ! जो शिवलिङ्ग की पूजा करता है वह स्वयम् ही शिव के समान हो जाता है । वही तत्त्वविद, ज्ञानी और धन्य हैं ।।८।।

स ब्रह्मवेत्ता स धनी स राजा भुवि पूजितः ।
अणिमादिविभूतीनामीश्वरः साधकोत्तमः ।।९।।

वह ब्रह्मज्ञानी, राजा, धनी, यशस्वी और लोक में पूज्य होकर सारे संसार में विख्यात होता है और अणिमादि अष्टसिद्धियों को प्राप्त करके श्रेष्ठ साधक वनता है ।।९।।

स्त्रियः स्वभावचपला गोपितुं न हि शक्यते ।
अत एव हि देवेशि विरता भव पार्वति ।।१०।।

हे गिरिजे ! नारी चञ्चल स्वभाव के कारण से इसे गोपनीय नहीं रख सकती अतएव इसी कारण से वह पार्वती के समान विरक्त हो जाती है ।।१०।।

लिङ्गनिर्माणविषये देव्या जिज्ञासा

श्रीदेव्युवाच

कथयस्व कृपानाथ करुणा यदि वर्त्तते ।
तव वाक्यं विना देव क्व मुक्तिः क्व च साधुता ।।११।।

श्रीदेवी बोलीं– हे स्वामी ! यदि मुझ पर आपकी कृपा और दया हो तो हमें यह वताने की कृपा करें कि साधुता क्या है? और मुक्ति क्या है? विना कहे ही इसे वताने की कृपा करें ।।११।।

पारदताडननिषेधः, विघ्नादिशमनप्रश्नः च

श्रीशिव उवाच

पारदं शिवबीजं हि ताडनं न हि कारयेत् ।
ताडनाद्वित्तनाशः स्यात्ताडनात् सुतहीनता ।
ताडनाद्रोगयुक्तः स्यात्ताडनान्मरणं भवेत् ।।१२।।

श्रीशिव जी बोले– पारद शिवलिङ्ग का किसी भी प्रकार से तिरस्कार नहीं करना चाहिये । इसके तिरस्कार करने से सम्पत्ति और संतति दोनों का नाश होता है । शिवलिङ्ग के तिरस्कार करने से नानाप्रकार के रोग और मरण-तुल्य कष्ट भी होते हैं ।।१२।।

श्रीदेव्युवाच

एतद्विघ्नादिकं नाथ सत्यमेव न संशयः ।
विघ्नादिरहितं नाथ कथयस्व दयानिधे ।।१३।।

श्रीदेवी बोलीं– हे स्वामी ! इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसमें तरह-तरह के विघ्न होते हैं । इसे विघ्नरहित कैसे किया जाय हे स्वामी ! आप हमें बताने की कृपा करें ।।१३।।

पारदशिवनिर्माणे शान्त्यादेरावश्यकता

श्रीशिव उवाच

पारदे शिवनिर्माणे नानाविघ्नं यतः शिवे ।
अत एव हि तत्रादौ शान्ति स्वस्त्ययनञ्चरेत् ।।१४।।

श्रीशिव जी बोले– हे शिवा ! पारद शिवलिङ्ग के निर्माण में कई प्रकार के विघ्न और रुकावट आते हैं इस कारण से इसके निर्माण के पूर्व शान्तिपाठ अवश्य ही करना चाहिये ।।१४।।

शान्तिप्रणालीकथनम्

द्वादशं पार्थिवं लिङ्गमुपचारैश्च षोडशैः ।
पट्टादिसूत्रनिर्माणं रचितं शुक्लमेव वा[1] ।।१५।।

---

[1] द्वादशमित्यादि । लिङ्गपूजाधारनियमश्च महिषमर्दिनीतन्त्रे त्रयोदशपटले— स्वर्णपात्रे तथा रौप्ये च प्रस्तरे तथा । पद्मपत्रे पलाशे च तथा वा कदलीदले ।। पूजनं मृन्मयं लिङ्गं काशीक्षेत्रसमं प्रिये । तैजसे दारवे पात्रे सामान्यफलदं सदा ।। अन्यत् पात्रञ्च चार्वङ्गि वर्जयेच्छिवपूजने । इति ।

बारह पार्थिव शिवलिङ्ग बनाकर, षोडशोपाचर पूजन करना चाहिये और इसके बाद उसे नूतन सफेद वस्त्रादि से लपेटना चाहिये ।।१५।।

पुरुषस्य यथायोग्यं युग्मवस्त्रं निवेदयेत् ।
भोगयोग्यं प्रदातव्यं मधुपर्कं सुरेश्वरि ।।१६।।

हे सुरेश्वरि ! पुरुषों के पहनने योग्य जोड़ा वस्त्र अर्पण करना चाहिये और भोग्य योग्य सामग्री अर्थात् प्रसादादि भी चढ़ाना चाहिये, मधुपर्क (मधु) भी प्रदान करना चाहिये ।।१६।।

अलङ्कारं यथाशक्ति दद्यात् कल्याणहेतवे ।
पूजयेद् बहुयत्नेन विल्वपत्रेण पार्वति ।।१७।।

अपने कल्याण के लिये शृङ्गारादि योग्य वस्तुयें भी प्रदान करना चाहिये और विधिपूर्वक इसका पूजन करना चाहिये तथा बेलपत्र भी चढ़ाना चाहिये ।।१७।।

[1]तोडलोक्तेन विधिना प्रत्येकेनायुतं जपेत् ।
आदौ पञ्चाक्षरं मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत् ।।१८।।

तोडल तन्त्र में जो पूजा की विधि दी गयी है उसी के अनुसार प्रारम्भ में १०८ बार पञ्चाक्षर शिव मन्त्र (नम: शिवाय) का जप भी करना चाहिये ।।१८।।

पूजान्ते प्रजपेत् पश्चात् प्रासादाख्यं महामनुम् ।
दक्षिणान्तं समाचर्य्य हविष्याशी जितेन्द्रियः ।।१९।।

पूजा के बाद ही जप करना चाहिये और इसके बाद प्रासाद बीजमन्त्र यानि कि ह्रौं का जप करना चाहिये और दक्षिणा देकर फिर हवनादि कार्य करना चाहिये । इसे साधक इन्द्रियों को जीत लेता है ।।१९।।

ताम्बूलञ्च तथा मत्स्यं वर्जयेन्न कदाचन ।
अस्मिंस्तन्त्रे हविष्यान्नं ताम्बूलं मीनमुत्तमम् ।।२०।।

ताम्बुल और मत्स्य (यानि कि मछली और पान) आदि कभी भी प्रदान नहीं करना चाहिये; वैसे कई तन्त्र ग्रन्थों में ताम्बुल एवं मछली उत्तम माना गया है ।।२०।।

---

१. तोडलोक्तेनेत्यादि । तदुक्त तोडलतन्त्रे पञ्चमपले— नमस्कारं समुद्धृत्य वान्तं नेत्रविभूषितम् । वारुणं मुखवृत्तञ्च वायुं ललाटसंयुतम् ।। अयं पञ्चाक्षरो मन्त्रः पञ्चाम्नायफलप्रदः । एतेन "नम: शिवाय" इति मन्त्रो भवति । प्रणवादिर्यदा देवि तदा मन्त्र: षडक्षर: । एतेन च "ॐ नम: शिवाय" इति षडक्षरो मन्त्रः ।

होमयेत् परमेशानि दशांशं वा शतांशकम् ।
होमस्य दक्षिणा कार्या तदा विघ्नैर्न लिप्यते ।।२१।।

हे परमेशानि ! जप का दशांश या शतांश यानि कि जप का १०वाँ भाग या १००वाँ भाग हवन करना चाहिये । होम और दक्षिणा हमेशा कार्य में आने वाले समस्त विघ्नों की समाप्ति करता है ।।२१।।

ततः परस्मिन् दिवसे पारदमानयेद् बुधः ।
तस्योपरि जपेन्मन्त्रं सर्ववन्द्यनवात्मकम् ।।२२।।

इसलिये शुभ समय में सुधिजन को पारा लाना चाहिये और सादरपूर्वक नवाक्षर मन्त्र का जाप करना चाहिये । नवाक्षर मन्त्र यह है— ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं क्लीं नमः ।।२२।।

व्योमबीजं शिवान्तञ्च वर्गाद्यं बिन्दुमस्तकम् ।
वायुबीजं च त्रितयं त्रितयं त्र्यम्बकं प्रिये ।।२३।।

व्योम (आकाश) बीज हं शिवान्तक बीज क्षं वर्ग आद्य कं वायु बीज तीन बार यँ यँ यँ और त्र्यम्बक बीज तीन बार यानि कि हँ क्षँ कँ यँ यँ यँ हँ हँ हँ मन्त्र का जप करना चाहिये ।।२३।।

इमं मन्त्रं महेशानि प्रजपेदौषधोपरि ।
पारदे प्रजपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं यदि ।।२४।।
तदेवौषधयोगेन बद्धो भवति नान्यथा ।।२५।।

हे गिरिजे ! इस मन्त्र का जप उक्त औषधि पर यानि कि पारद पर कम से कम १०८ बार अवश्य ही करना चाहिये । तभी वह ओषधि योग्य हो सकेगा अन्यथा नहीं ।।२५।।

ततः परस्मिंदिवसे शृणु मत्प्राणवल्लभे ।
वरयेत्कर्मकर्त्तारं यथोक्तविभवावधि ।।२६।।

हे प्राणवल्लभे ! सुनो । इसके बाद किसी शुभ-मुहूर्त में अपने सामर्थ्य के अनुसार उसका वरण कर विधिवत् रूप से संस्कार करना चाहिये ।।२६।।

सुवर्णं चम्पकाकारं कर्णयुग्मे निवेदयेत् ।
चतुष्कोणयुतं स्वर्णं ग्रीवायां सुमनोहरम् ।।२७।।

सोने की तरह पीले चम्पा के आकार का दोनों कानों में धारण करने योग्य यानि कि कान की बाली भी निवेदन करना चाहिये । इसके साथ ही साथ चारों तरफ से बराबर सोने का चेन भी गले में धारण करने के योग्य देना चाहिये ।।२७।।

हस्तद्वये महेशानि दद्याद्वलययुग्मकम् ।
वलयं शुक्लवर्णञ्च अङ्गरीयं तथैव च ।।२८।।

हे पार्वती ! दोनों हाथ के दसों अङ्गुलियों में धारण करने योग्य चाँदी की अगूँठी तथा कमर में धारण हेतु करधनी भी उसे प्रदान करना चाहिये ।।२८।।

ऊर्मिं दद्यात्पीतवस्त्रं क्षौमवस्त्रयुगं शिवे ।
एवं कृत्वा महेशानि शिवरूपं विचिन्तयेत् ।।२९।।

हे गिरिजे ! पीले रंग का वस्त्र देना चाहिये, इसके साथ एक और वस्त्र प्रदान करना चाहिये । ये सब करने के बाद ही उसका शिवरूप में चिन्तन-मनन करना चाहिये ।।२९।।

पारददृढीकरणप्रणाली

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विधानं शृणु पार्वति ।
प्रस्तरे चैव संस्थाप्य [1]झिण्टीपत्ररसेन च ।
प्रस्तरेण समालोड्य कुर्यात् कर्दमवत्प्रिये ।।३०।।

हे गिरिजे ! इसके आगे का जो विधान है उसे मैं कहता हूँ । फिर इसे एक पत्थर के कटोरे जैसे पात्र में गुरीच के रस में तब तक घोटना चाहिये, जब तक दोनों मिलकर कीचड़वत न हो जाँय। तब इसके बाद स्थापित करना चाहिये ।।३०।।

निर्माणयोग्यं तत्रैव यदि स्यात् सुरसुन्दरि ।
तदा निर्माय तं लिङ्गं पुनर्दृढतरं चरेत् ।।३१।।

हे सुर सुन्दरी ! उसे तब तक उसी रूप में रखना चाहिये जब तक कि वह निर्माण करने योग्य नहीं । इसके बाद उसे शिवलिङ्ग के आकार का बनाना चाहिये जिससे कि वह ठोस शिवलिङ्ग के रूप में तैयार हो सके ।।३१।।

स्वपुष्पसंयुते वस्त्रे अङ्गारे च करीषके ।
किञ्चिदुष्णं प्रकर्त्तव्यं यतो दृढतरो भवेत् ।।३२।।

फिर स्वपुष्प वस्त्र को मिलाकर आग पर धीरे-धीरे गरम करना चाहिये । गरम हो जाने पर यह ठोस रूप में बदल जायेगा ।।३२।।

ततो निर्माय तं लिङ्गं पुनर्दृढतरं चरेत् ।
स्वपुष्पसंयुते वस्त्रे स्थापयेत् पार्थिवे पुनः ।।३३।।

---

[1] झिण्टी— सैरेयक- Parlp Parleria Prionitis यह चार प्रकार का होता है— पीला, नीला, श्वेत और लाल जिसे प्रचलित भापा में बाकस का फूल बोलते हैं । यह कटसरैया और पीयावासा के नाम से भी प्रसिद्ध हैं ।

इसके बाद पुनः उसे शिवलिङ्ग के आकार का बनाना चाहिये और उसके ऊपर स्वपुष्प से युक्त वस्त्र को पार्थिव शिवलिङ्ग पर दृढ़तापूर्वक रख देना चाहिये यानि कि स्वपुष्प वस्त्र को शिवलिङ्ग पर लपेट देना चाहिये ।।३२।।

किञ्चिदुष्णं प्रकर्त्तव्यं यावद् दृढतरो भवेत् ।
विना ह्यौषधयोगेन भस्मो भवति नान्यथा[1] ।।३४।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादेऽष्टमः पटलः ।।८।।

इसके बाद फिर उसे तब तक गरम करना चाहिये जब तक कि वह पुनः ठोस नहीं बन जाये। इसके बिना वह औषधि निर्माण योग्य नहीं हो सकता ।।३४।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
आठवाँ पटल समाप्त ।। ८।।

◆

---

[1] भस्मो भवतीति अत्रावधूतैरुच्यते— मुडरीलीजे सूत पर उसको दीजे मण्डलभरके खल करीजे ।। तब होजाय कादो प्राय उससे शिवजी निर्माय। उसमें दीजेजड़के पानी वज्रसमान करके जानी ।। इति।

नवमः पटलः

पारदभस्मनिर्माणप्रणालीः

श्रीशिव उवाच

भस्मप्रकारं देवेशि शृणु मत्प्राणवल्लभे ।
कर्त्तारं वरयेदादौ यथोक्तविभवावधि ।।१।।

श्रीशिव जी बोले– हे पार्वती ! अव मैं भस्म बनाने की प्रक्रिया को व्यक्त कर रहा हूँ । हे प्राणवल्लभे इसे सुनो । आगे कहे हुये तरीके से अपने सामर्थ्य के अनुसार कर्म करना चाहिये और पूर्ण संस्कार करना चाहिये ।।१।।

सुवर्णं मौक्तिकयुतं कर्णयुग्मे निवेदयेत् ।
हस्तयुग्मे च वलयं अङ्गुरीयं तथैव च ।।२।।

मोती से युक्त स्वर्ण दोनों कान में धारण करने योग्य निवेदन करना चाहिये या अर्पण करना चाहिये । हाथ में पहनने योग्य कड़ा और कमर में धारण योग्य करधनी भी अर्पण करना चाहिये ।।२।।

तोढद्वयं बाहुयुग्मे शुद्धकाञ्चननिर्मितम् ।
ग्रीवायां दापयेत् स्वर्णं चतुष्कोणं मनोरमम् ।।३।।

सोने से निर्मित दोनों बाहों में धारण करने योग्य बाजूबन्द भी अर्पण करना चाहिये । इसके साथ ही साथ गले में धारण करने योग्य चौकोर स्वर्ण भी अर्पण करना चाहिये ।।३।।

वस्त्रयुग्मं पट्टसूत्रनिर्मितञ्च सुशोभनम् ।
उष्णीषं शुक्लवर्णञ्च उष्णीषं पीतवाससम् ।।४।।

एक जोड़ा सूती वस्त्र भी जो अत्यन्त सुन्दर हो उसे भी अर्पण करना चाहिये, इसके साथ एक उजले रंग का वस्त्र और एक उपवस्त्र तथा एक पीले रंग का गरम शाल भी अर्पण करना चाहिये ।।४।।

एवं हि वरयेद्देवि कर्मयोग्यं विचिन्तयेत् ।
चिन्तयेच्छिवरूपञ्च चिन्तयेत् त्रिगुणात्मकम् ।।५।।

इसके अतिरिक्त और भी सामग्री अर्पण करना चाहिये जो कि व्यवहार में आने योग्य हो ! इसके बाद उसमें त्रिगुणात्मक शिव रूप की ही कल्पना करनी चाहिये ।।५।।

पूजादिप्रकारः

ततः परस्मिन् दिवसे शान्तिस्वस्त्ययनञ्चरेत् ।
निर्मितं शुद्धस्वर्णेन विल्वपत्रेण सुन्दरि ।।६।।

हे सुन्दरी ! इसके बाद शुभ समय में शान्तिस्तव का पाठ भी करना चाहिये और सोने का बना शुद्ध बेलपत्र भी समर्पण करना चाहिये ।।६।।

सहस्रसङ्ख्यया देवि पार्थिवं द्वादशं यजेत् ।
षोडशेनोपचारेण पट्टवस्त्रयुगेन च ।।७।।

द्वादश शिवलिङ्गों का एक हजार पार्थिव शिवलिङ्ग बनाना चाहिये और उसका षोडषोपचार पूजन करके जोड़ा वस्त्र भी अर्पण करना चाहिये ।।७।।

अलङ्कारविचित्रैश्च पूजयेत् परमेश्वरम् ।
भोगभोग्यं प्रदातव्यं मधुपर्कं निवेदयेत् ।।८।।

हे परमेश्वरि ! विभिन्न प्रकार के शृङ्गारयुक्त सामग्री से उसका पूजन करना चाहिये और खाने योग्य उत्तम सामग्री भी प्रदान करना चाहिये । इसके बाद मधुपर्क (मधु) भी प्रदान करना चाहिये ।।८।।

स्वर्णासनेन संस्थाप्य प्रत्येकं पूजनञ्चरेत् ।
पूजान्ते प्रजपेन् मन्त्रमष्टोत्तरशतं सुधीः ।।९।।

प्रत्येक शिवलिङ्ग को पूजन के बाद सोने के बने आसन पर स्थापित करना चाहिये और पूजा की समाप्ति के बाद नव अक्षरों वाला बीजमन्त्र ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं क्लीं १०८ बार जप भी साधक को करना चाहिये ।।९।।

षडक्षरं महामन्त्रं प्रासादाख्यं मनुं ततः ।
दिक्सहस्त्रं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत् प्रिये ।।१०।।

हे प्रिये ! षडक्षर मन्त्र में (ॐ नमः शिवाय) प्रासाद बीज (हौं) बीज लगाकर जप करना चाहिये और जप करने के बाद उसका दशांश हवन करना चाहिये ।।१०।।

होमकुण्डप्रमाणादिकम्

होमस्य द्रव्यं देवेशि शृणु मत्प्राणवल्लभे ।
बालुकानिर्मिते वापि कुण्डे वा परमेश्वरि ।।११।।

हे देवों की देवि, हे प्राण वल्लभे ! हवन सामग्री के सम्बन्ध में कह रहा हूँ उसे भी ध्यानपूर्वक सुनो । हे परमेशानी ! बालू का हवन कुण्ड भी बनाना चाहिये ।।११।।

द्वात्रिंशदङ्गुलिमानं विस्तृतं तत्समं प्रिये ।
षोडशाङ्गुलिमानं हि कुण्डं कुर्यात् सुलक्षणम् ।।१२।।

हे प्रिये ! हवन-कुण्ड बत्तीस अङ्गुली के नाप का चारो तरफ से बराबर होना चाहिये । सोलह अङ्गुली माप का हवनकुण्ड भी शुभ लक्षणों से युक्त होता है । यही हवनकुण्ड शुभ लक्षणों से युक्त होता है । इसका भी निर्माण किया जा सकता है ।।१२।।

तदूर्ध्वे परमेशानि वेदनेत्राङ्गलिं शिवे ।
एवं हि स्वर्णकुम्भश्च ताम्रकुम्भासमर्थिना ।।१३।।

हे शिवे ! हे परमेश्वरी ! इसके बाद ही इसमें ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण का निर्माण करना चाहिये और उस पर सोने का हवनकुण्ड या ताँबे के हवनकुण्ड का भी अपने सामर्थ्य के अनुसार उपयोग करना चाहिये ।।१३।।

एतदन्यतरं कुम्भं स्थापयेद्वेदिकोपरि ।
पट्टवस्त्रेण युग्मेन संवेष्ट्य बहुयत्नतः ।।१४।।

इसके बाद इस कुण्ड को वेदी पर स्थापित करना चाहिये और उसकें चारों तरफ जोड़ा वस्त्र भी लपेट देना चाहिये ।।१४।।

होमयेद् विल्वपत्रेण यथोक्तेन सुरेश्वरि ।
[1]त्रिमध्वक्तेन विधिना ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम् ।।१५।।

हे सुरेश्वरि ! इसके बाद विल्वपत्र (वेलपत्र) से यथाविधि हवन करना चाहिये और हवन के बाद मधु, इक्षुरस (गन्ने का रस) तथा क्षीर (दूध) मिलाकर भी हवन करना चाहिये ।।१५।।

दक्षिणादानस्याऽऽवश्यकता

ततस्तु दक्षिणा कार्य्या यथोक्तविभवावधि ।
सर्वद्रव्यमयं मूल्यं द्विगुणं वा प्रदापयेत् ।।१६।।

इसके पश्चात् अपने सामर्थ्य के अनुसार ही दक्षिणा भी देना चाहिये । जितने मूल्य की हवन सामग्री हो उसका दुगुना ही दक्षिणा देना चाहिये । यही दक्षिणा का विधान है ।।१६।।

दक्षिणाविहीना यज्ञाः सिद्धिदा न च मोक्षदाः ।
अत एव महेशानि दक्षिणा विभवावधि ।।१७।।

---

[1] त्रिमध्वक्तेनेति । मधुत्रयमुक्तं वराहपुराणे— क्षौद्रमिक्षुरसं क्षीरं तथा त्रिमधुरं स्मृतम् । इति वैदिकसर्वस्वे ।

हे गिरिजे ! दक्षिणा दिये बिना यज्ञ कार्य सिद्धि और मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती । इस कारण से अपने सामर्थ्य के अनुसार अवश्य ही दक्षिणा देना चाहिये ॥१७॥

प्रयोग:

वराहवत्समानीय जन्ममात्रेऽपि सुन्दरि ।
पारदं तोलकं मानं भक्षयेद् बहुयत्नतः ॥१८॥

हे सुन्दरी ! अपने को सुअर के बच्चे के समान योनि में जन्म मान करके अर्थात् बिना किसी तरह की घृणा भाव के एक तोला पारद को यत्नपूर्वक खाना चाहिये ॥१८॥

पुनस्तोलकमानं हि मातृदुग्धं ततः परम् ।
पुनश्च भक्षयेद्धीमांस्ततो दुग्धन्तु भक्षयेत् ॥१९॥

एक तोला पारा माँ के दूध के समान ही श्रेष्ठ है । इसी कारण से पुनः भी एक तोला पारद दूध में मिलाकर खाना चाहिये ॥१९॥

ततश्च वत्समानीय नवद्वारं प्रयत्नतः ।
सूत्रयोगेण देवेशि बद्धं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥२०॥

हे गिरिजे ! इसके बाद अपने शरीर के सम्पूर्ण भाग को सभी ओर से बच्चे के समान वस्त्रों को बाँध लेना चाहिये ॥२०॥

ततश्च हेलकीमन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत् ।
गजप्रमाणं देवेशि दीर्घप्रस्थन्तु खातकम् ॥२१॥

हे देवों की देवी ! इसके बाद एक हाथ गहरा गड्ढा खोदना चाहिये और उसमें बैठ करके १०८ बार हेलकी मन्त्र[१] का जाप करना चाहिये ॥२१॥

करीषकेण देवेशि पूर्णं कुर्याद्विचक्षणः ।
तन्मध्ये स्थापयेद्वत्सं सन्दहेद्बहुयत्नतः ॥२२॥

इसके बाद उसमें पूरा सूखा कण्डा बिछाना चाहिये और कण्डा बिछाने के बाद उस पारे को मिट्टी पात्र में रख कर स्थापित कर देना चाहिये इसके बाद अग्नि संस्कार करना चाहिये ॥२२॥

वह्निस्थिते महेशानि न स्पृशेत्कुण्डमुत्तमम् ।
कुण्डे सुशीतले जात उत्थाप्य बहुयत्नतः ॥२३॥

---

[१] पुस्तक के किसी भाग में स्पष्ट रूप से उलेख्य नहीं है । सम्भवतः हेलकी मन्त्र शिव मन्त्र ही है । इसी षडक्षर मन्त्र में दोनों ओर प्रासाद बीजमन्त्र हौं लगाकर जप करें ।

हे गिरिजे ! इस उत्तम कुण्ड को तब तक स्पर्श नहीं करना चाहिये जब तक कि कुण्ड शीतल न हो जाये। जब कुण्ड शीतल हो जाये तब तो उसे उठाकर रख लेना चाहिये ।।२३।।

सर्वप्रकाशकं मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत्।
विश्वेश्वरं प्रवक्ष्यामि शृणु पार्वति सादरम् ।।२४।।

हे पार्वती सादरपूर्वक सुनो ! इसके बाद पुनः १०८ बार उसी मन्त्र का जप करना चाहिये; क्योंकि विश्वेश्वर (काशी-विश्वनाथ) ही इसका देखभाल करते हैं ।।२४।।

पारदं तोलकं मानं ताम्रपात्रे तु लेपयेत्।
चूर्णं कुर्यान्महेशानि गन्धकं सार्द्धतोलकम् ।।२५।।

एक तोला पारा ताँबें के पात्र में लेप करना चाहिये और उसी में एक तोला चूर्ण करके गन्धक भी मिलाना चाहिये ।।२५।।

समाच्छाद्य प्रयत्नेन चूर्णेन परमेश्वरि।
सन्दहेद्बहुयत्नेन मन्दमन्देन वह्निना ।।२६।।

हे परमेश्वरि ! उसे मिलाकर के मंदाग्नि (धीमी आँच) पर उस ताम्र पात्र में रखे गये पारद और गन्धक को यत्नपूर्वक गरम करना चाहिये ।।२६।।

पारदभस्मव्यवहारप्रशंसा

कृष्णावर्णं रेणुयुतं दृष्ट्वा उत्थाप्य सुन्दरि।
रत्तिप्रमाणं तद् द्रव्यं भक्षयेद्यदि सुन्दरि ।।२७।।
सत्यं सत्यं सर्वकुष्ठं भक्षणान्नाशमाप्नुयात्।
अनुपानमुष्णतोयं मत्स्यादीन् परिवर्जयेत् ।।२८।।

हे सुन्दरी ! जब यह कृष्णावर्ण का या नीला रंग का हो कण-सदृश हो जाये तब इसे उठा लेना चाहिये। हे सुन्दरी ! यदि इसको एक रत्ती प्रमाण नियमित इसे सेवन किया जाये तो सभी प्रकार के कुष्ठ रोग तत्काल ही समाप्त हो जाते हैं। यह मैं सत्य कह रहा हूँ। इसके अनुपान में गरम पानी लेना चाहिये और कभी भी मांस-मछली आदि का सेवन नहीं करना चाहिये ।।२७-२८।।

पुत्रवतो गृहिण एतत्प्रयोगनिषेधः

एवं प्रयोगं देवेशि न कुर्यात् पुत्रवान् गृही।
प्रथमे दिवसे पुत्रान् द्वितीये दिवसे धनम् ।।२९।।

हे देवों की देवी ! यदि घर में सन्तान नहीं है तो इसके प्रयोग से अतिशीघ्र सन्तान लाभ भी होगा और अधिक से अधिक धन की भी प्राप्ति होगी ।।२९।।

तृतीये दिवसे शक्तिं चतुर्थे दिवसे गृहम् ।
पञ्चमे दिवसे रोगं नाशं तु जायते ध्रुवम् ।।३०।।

तीन दिनों में शरीर में शक्ति आनी प्रारम्भ हो जायेगी औरा अतिशीघ्र गृह-निर्माण का कार्य भी प्रारम्भ हो जायेगा । इसके प्रयोग से पाँचवें दिन रोग से छुटकारा मिलना प्रारम्भ हो जायेगा यही पूर्ण और ध्रुव सत्य है ।।३०।।

अत एव महेशानि आत्मस्वस्त्ययनञ्चरेत् ।
पूर्वोक्तविधिना मन्त्री चतुर्गुणं समाचरेत् ।।३१।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे नवमः पटलः ।।९।।

हे गिरिजे ! अतः इस पर पूर्ण आत्मविश्वास रखना चाहिये एवम् स्तवन का पाठ भी करना चाहिये । ऊपर कहे गये कई विधि के अनुसार इसके द्वारा चतुर्दिक लाभ की प्राप्ति होती है ।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का नौवाँ पटल समाप्त ।।९।।

* * *

दशमः पटलः

गुरुमन्त्रयोरेकत्वविषये देव्याः प्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च

श्रीदेव्युवाच

नराकृतिं गुरुं नाथ मन्त्रं वर्णात्मकं तथा ।
ध्यानानुरूपिणं देवमेकत्वं वा कथं वद ।।१।।

श्रीदेवी बोली– हे स्वामी ! गुरु मानव रूप में हैं और मन्त्र वर्णों के रूप में है दोनों में एकता कैसे हो सकता है? ध्यान में गुरु और मन्त्रों में किस प्रकार की एकरूपता है? हे देव ! इसे बताने की कृपा करें ।।१।।

श्रीशिव उवाच

गुरुवक्त्रान्महामन्त्रो लभ्यते साधकोत्तमैः ।
यद्येको जायते वीर्यस्तस्य मूर्त्तिर्भवेद् ध्रुवम् ।।२।।

श्रीशिव जी बोले– गुरु महामन्त्रों का वक्ता है । उसी के द्वारा दिये गये मन्त्रों से साधक श्रेष्ठ लाभ प्राप्त करते हैं । जिस प्रकार रजवीर्य के मिलन से सन्तान होता है, उसीप्रकार गुरु भी मन्त्र का मूर्त्तरूप है ।।२।।

देवतायाः शरीरञ्च बीजादुत्पद्यते प्रिये ।
गुरोराज्ञानुसारेण चान्यमूर्त्तिस्तु जायते ।।३।।

हे प्रिये ! देवता लोग शरीर में बीज रूप में उत्पन्न होते हैं और गुरु के निर्देशानुसार वे मूर्ति के रूप में साकार हो जाते हैं ।।३।।

[1]गुर्वादिभावनाद्देवि भावसिद्धिः प्रजायते ।
अत एव महेशानि चैकत्वं परिकथ्यते ।।४।।

हे देवि ! गुरु भावना प्रदान करते हैं और भावना से ही भावसिद्धि की प्राप्ति होती है । हे पार्वती ! इस प्रकार दोनों में ही एकत्व की कल्पना की गयी है ।।४।।

---

[1] गुर्वादीति । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं यामले— गुरुरेकः शिवः प्रोक्तः सोऽहं देवि न संशयः । गुरुस्त्वमपि देवेशि मन्त्रोऽपि गुरुरुच्यते ।। अतो मन्त्रे गुरौ देवे न हि भेदः प्रजायते । कदाचित् स सहस्रारे पद्मे ध्येयो गुरुः सदा ।। कदाचिद्हृदयाम्भोजे कदाचिद्दृष्टिगोचरे ।। इति ।

मुण्डमालातन्त्रे च— देवतागुरुमन्त्राणामैक्यं सम्भावयन् धिया । तदा सिद्धो भवेन्मन्त्रः प्रकटं हानिरेव च ।। मन्त्रे वा गुरुदेवे वा न भेदं यस्तु कल्पते । तस्य तुष्टा जगद्धात्री किं न दद्याद् दिने दिने ।। इति ।

अचाक्षुषस्य ध्यानविषये प्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च

श्रीदेव्युवाच

यच्चाक्षुषं महादेव तदाकरं विचिन्तयेत् ।
अचाक्षुषे महादेव ध्यानं वा कीदृशं भवेत् ।।५।।

श्रीदेवी बोली– हे महादेव ! इन आँखों से आकार की कल्पना कैसे की गयी है । हे महादेव ! इन आँखों से ध्यान कैसे किया जा सकता है और किस प्रकार देखा जा सकता है ।।५।।

श्रीशिव उवाच

शब्दब्रह्ममयं देवि मम वक्त्राद्विनिर्गतम् ।
आकाररहिते देवि यथा ध्यानादिकं भवेत् ।।६।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि ! मेरे द्वारा कहा गया शब्द ब्रह्ममय है अत: हे देवि ! बिना आकार के ही ध्यानादि किया जाता है और इसी प्रकार से ही ध्यान होता है ।।६।।

तथैवोच्चारणेनैव भक्तियुक्तेन चेतसा ।
सत्यं सत्यं महेशानि प्रत्यक्षं नात्र संशयः ।।७।।

हे गिरिजे ! इसलिये उसका उच्चारण भक्तिपूर्वक चेतना से करना चाहिये । यह मैं सत्य-सत्य कह रहा हूँ इसमें किसी भी तरह का सन्देह नहीं है ।।७।।

देव्याः पशुप्रदानवाक्यप्रश्नः, महादेवस्योत्तरञ्च

श्रीदेव्युवाच

पशुप्रदाने वाक्यं तु कीदृशं वद शङ्कर ।
येन वाक्येन देवेश देवी तुष्टा भवत्यपि ।।८।।

श्री देवी बोली– किस प्रकार के शब्दों से पशु प्रदान किया जाता है । हे शङ्कर ! कहने की कृपा करें । किस प्रकार के वाक्य से देवी प्रसन्न होती हैं । हे देवों के देव इसे कहने की कृपा करें ।।८।।

श्रीशिव उवाच

मृगे महिषे चोष्ट्रे च पशुशब्दं न योजयेत् ।
[१]छागले च तथा सिंहे व्याघ्रे च परमेश्वरि ।।९।।

---

[१] छागले चेति । तथाच छागादिबलिदानफलमुक्तं मुण्डमालातन्त्रे— छागे दत्ते भवेद्वाग्मी मेषे दत्ते कविर्भवेत् । महिषे धनवृद्धिः स्यान्मृगे मोक्षफलं लभेत् ।। पक्षिदाने समृद्धिः स्याद्

...क्रमशः

श्री शङ्कर जी बोले– हे परमेश्वरी ! हिरण, भैंसा और ऊँट आदि के सम्बोधन के लिए पशु शब्द की आवश्यकता नहीं है और न बकरा, बाघ या सिंह के लिये पशु शब्द की आवश्यकता है ।।९।।

पशुशब्दं योजयित्वा महादेव्यै निवेदयेत् ।
पशुभावस्थितो मन्त्री महिषो दीयते यदि ।।१०।।

पशु शब्द का प्रयोग उस समय करना चाहिये जब यह महादेवी को प्रदान किया जाये । यदि मन्त्रणा करके पशु भाव से महिष या भैसे आदि प्रदान किया जाय तभी पशु शब्द का प्रयोग होना चाहिये ।।१०।।

बलिदानं प्रकर्त्तव्यं न मांसं भक्षयेन्नरः ।
सम्यक् फलं न लभते दशांशं लभते प्रिये ।।११।।

यदि बलि के बाद मनुष्य उसके मांस का भक्षण नहीं करता है तो उसे पूर्ण फल की प्राप्ति नहीं होती मात्र उसे दशांश भाग का ही फल प्राप्त होता है ।।११।।

दिव्यवीरमते पशुदानस्याऽऽवश्यकता

महिषादि प्रदातव्यं दिव्यवीरमते स्थितः ।
स एव सिद्धिमाप्नोति फलं सम्यक् प्रियंवदे ।।१२।।

हे प्रिये ! भैसे आदि प्रदान करते समय मन में दिव्यभाव और वीरभाव होना चाहिये । तभी उसको पूर्ण फल प्राप्त होता है और सिद्धि भी प्राप्त होती है ।।१२।।

[1]पशुदानं विना देवि पूजयेन्न कदाचन ।
तथा च नित्यपूजायां यदि शक्तो भवेन्नरः ।।१३।।

गोभिकायां महाफलम् । नरे दत्ते महर्द्धिः स्यादष्टसिद्धिरनुत्तमा ।। इति । एवं तत्रैव— राजा नरबलिं दद्यान्नान्यो हि परमेश्वरि । सिंहव्याघ्रनरान् दत्त्वा ब्राह्मणो रौरवं व्रजेत् ।। इति वचनाद् ब्रह्मणानां नरादिबलिदाने नाधिकार इति । एवमपि निबन्धे तृतीयपटले— सिंहं व्याघ्रं नरञ्चापि स्वगात्ररुधिरं तथा । मद्यञ्चापि ददद् विप्रो ब्राह्मण्यादेव हीयते ।। इति ।

[1] पशुदानमित्यादि । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं कालीतन्त्रे एकादशपटलेन— ददाति बलिं यस्तु शिवायै शिवताप्तये । स पापिष्ठो नाधिकारी कुलदेव्याः समर्च्चने ।। इति । तथा च निबन्धे तृतीयपटले— बलिदानं विना यस्तु पूजयेत् तारिणीं नरः । ना ज्ञानं न च मोक्षः स्यात् तेषां पशुधियां प्रिये ।। इति । अत्र तारिणीत्युपलक्षणम्, यथा काली तथा च्छिन्ना यथा च्छिन्ना तथोन्मुखी । यथा दुर्गा तथा धूमा तथा महिषमर्द्दिनी ।। यथा काली तथा तारा सर्वास्तारा-विभेदकाः । इति तस्यैव वचनात् । महानीलतन्त्रीयषष्ठपटलस्य “सुन्दरी च तथा च्छिन्ना कालीतारादिकाश्च याः । महाविद्याश्च याश्चान्याः सर्वास्तारावदाचरेत् ।। इति वचनाच्च ।

हे देवि ! पशुदान के बिना पूजा कदाचित नहीं करना चाहिये । जो मनुष्य शक्ति की नित्य पूजा में लीन है उसे तो अवश्य ही पशुबलि करना चाहिये ।।१३।।

केवलं बलिदानेन सिद्धो भवति नान्यथा ।
निर्धनः परमेशानि यदि पूजादिकञ्चरेत् ।।१४।।

हे परमेशानी अर्थात् हे गिरिजे ! यदि निर्धन व्यक्ति भी पूजा करता है और वह बलि प्रदान करता है तो उसे भी सिद्धि प्राप्त होती है या केवल बलि से भी सिद्धि मिलती है, यह अन्यथा नहीं है अर्थात् सत्य है ।।१४।।

वत्सरान्ते प्रदातव्यं बलिमेकं सुरेश्वरि ।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्यादाजन्म पूजनादपि ।।१५।।

हे सुरेश्वरि ! वर्ष में एक बार कर्ज लेकर भी अवश्य ही बलि प्रदान करना चाहिये; क्योंकि बिना बलि प्रदान किये जन्म–जन्मान्तर तक भी सिद्धि नहीं मिल सकती ।।१५।।

बलिदानप्रशंसा

[1]बलिदानं महायज्ञं कलिकाले च चण्डिके ।
अश्वमेधादिकं यज्ञं कलौ नास्ति सुरेश्वरि ।।१६।।

हे कालिके ! कलियुग में चण्डिका के लिये बलि करना ही महायज्ञ है । हे सुरेश्वरि ! कलियुग में अश्वमेघ आदि यज्ञ नहीं किया जा सकता ।।१६।।

यज्ञावशेषभोजनस्याऽऽवश्यकता

[2]केवलं बलिदानेन चाश्वमेधफलं भवेत् ।
यज्ञावशेषं यद् द्रव्यं भोजनीयं न चान्यथा ।।१७।।

केवल बलि प्रदान करने से ही अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त हो सकता है । यज्ञ का बचा हुआ द्रव्य भोजनादि में प्रयोग करना चाहिये यह अन्यथा नहीं है ।।१७।।

---

[1] बलिदानमित्यादि । तत्र च स्त्रीपशुदाननिषेध उक्तो महानिर्वाणतन्त्रीयषष्ठोल्लासे— बलिदानविधौ देवि विहितः पुरुषः पशुः । स्त्रीपशुर्न च हन्तव्यस्तत्र शाम्भवशासनात् ।। इति । अन्यत्रापिः शक्तिमांसं च गृह्णीयादण्डजं जलजं विनेति हरतत्त्वदीधितिः ।

[2] केवलमित्यादि । एवमपि निबन्धे पञ्चमपटले— सर्वत्रिकोटितीर्थेषु स्नात्वा यत् फलमश्नुते । तत् फलं लभते भक्त्या बलिभिः पूजनान्मम ।। इति । बृहन्नीलतन्त्रे षष्ठ पटलेऽपि— भूतहिंसा न कर्त्तव्या पशुहिंसा विशेषतः । बलिदानं विना देव्या हिंसां सर्वत्र वर्जयेत् ।। इति ।

यज्ञावशेषभोगेन स यज्ञी नात्र संशयः ।
न भक्षेद्यदि मोहेन न यज्ञफलभाग् भवेत् ।।१८।।

यज्ञ के बचे हुये द्रव्य या सामग्री को यज्ञ करने वाले को सेवन करना चाहिये इसमें किसी भी तरह का सन्देह नहीं । यदि यज्ञकर्त्ता ममतावश उसका उपयोग नहीं करता तो उसे यज्ञ भाग की प्राप्ति सम्भव नहीं ।।१८।।

पटलश्रवणप्रशंसा

त्याज्यं द्रव्यं कथं देवि महादेव्यै निवेदयेत् ।
ब्रह्मरूपं महातन्त्रं मम वक्त्राद्विनिर्गतम् ।।१९।।

केवल वही वस्तु प्रयोग या व्यवहार में नहीं लाना चाहिये जो महादेवी को निवेदन किया गया हो या चढ़ाया गया हो । तन्त्र ब्रह्मस्वरूप है । यह मेरी वाणी द्वारा कही गयी है ।।१९।।

स पूतः सर्वपापेभ्यो यदि चैकाक्षरं श्रुतम् ।
महाभक्तियुतो भूत्वा शृणोति पटलं यदि ।।२०।।
किं तस्य ध्यानपूजायां तीर्थस्नानेन तस्य किम् ।
शब्दब्रह्ममयं ज्ञात्वा समस्तं यदि चण्डिके ।।२१।।

कोई भी व्यक्ति यदि इसके एक अक्षर को भी सुनता है तो वह महाभक्ति युक्त होता है । जो इस अध्याय को सुनता है उसके लिये ध्यान, पूजा, तीर्थाटन, जप-तप-व्रत और स्नानादि कर्म की क्या आवश्यकता है ? यदि वह समस्त रूप से चण्डी को जानता है तो यही जानना चाहिये कि शब्द ब्रह्ममय है ।।२०-२१।।

केवलं श्रवणेनैव स सिद्धो नात्र संशयः ।
अष्टादशपुराणानां श्रवणेनैव यत् फलम् ।।२२।।

केवल सुनने मात्र से सिद्धि मिल सकती है इसमें सन्देह नहीं । जिस तरह से १८वों पुराण सुनने से जो फल प्राप्त होता है वही फल इसके सुनने से होता है ।।२२।।

तन्त्रश्रवणप्रशंसा

चतुर्वेदेन साङ्गेन श्रवणेनैव यत् फलम् ।
अस्य तन्त्रस्य देवेशि कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।।२३।।
ब्रह्मरूपमिदं तन्त्रं सारात् सारं परात् परम् ।।२४।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे दशमः पटलः ।।१०।।

चारो वेदों के एक साथ सुनने से जो फल प्राप्त होता है उसी प्रकार से तन्त्र से भी फल प्राप्त होता है। हे देवि ! इसका फल सोलह गुणा अधिक है। तन्त्र ब्रह्मरूप है उसके सारों का सार ही परमब्रह्म के समान है ।।२३-२४।।

इस तरह शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
दसवाँ पटल समाप्त ।।१०।।

* * *

एकादशः पटलः

देव्याः प्रासाद-मण्डप-कूपादिनिवेदनविधानप्रश्नः, तन्माहात्म्यप्रश्नश्च

श्रीचण्डिकोवाच

प्रासादं मण्डपं वापि यदि दैव्यै निवेदयेत् ।
विधानं तस्य माहात्म्यं वद मे परमेश्वर ।।१।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे परमेश्वर ! यदि तालाब के किनारे विशाल मण्डप बना करके देवी को निवेदन किया जाय तो उसका विधान क्या है? बताने की कृपा करें ।।१।।

कूपादिकं महादेव यदि देव्यै निवेदयेत् ।
विधानं तस्य माहात्म्यं वद मे परमेश्वर ।।२।।

हे महादेव ! कुआँ या जलश्रोत या तालाव आदि के किनारे यदि देवी को निवेदित किया जाय या आह्वान किया जाये तो उसका विधान और माहात्म्य क्या है? हे परमेश्वर ! इसे बताने की कृपा करें ।।२।।

प्रासादोत्सर्गविधानकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि येन प्रासादमुत्सृजेत् ।
तस्यैव पश्चिमे भागे वेदिकां चतुरस्रकाम् ।।३।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि ! महादेवी का मण्डप बना करके ही आह्वान किया जाना चाहिये और उसके पश्चिम भाग में चौकोर यज्ञवेदी का निर्माण करना चाहिये ।।३।।

प्रकुर्य्याद् बहुयत्नेन वस्त्रेण वेष्टनञ्चरेत ।
तदभावे महेशानि तृणेनैव च वेष्टयेत् ।।४।।

बहुत यत्नपूर्वक उसके चारो ओर वस्त्र लपेट देना चाहिये और उसे तृण या फूँस या घास आदि से आच्छादित करना चाहिये ।।४।।

कुम्भयुग्मं स्थापयित्वा क्षौमवस्त्रेण वेष्टयेत् ।
युग्मं युग्मं क्षौमवस्त्रं कुम्भयुग्मे नियोजयेत् ।।५।।

नवीन वस्त्र लपेटने के बाद उसमें दो कलश स्थापित करना चाहिये । उस कलश पर दो-दो वस्त्र रखना चाहिये या जोड़ा-जोड़ा यानि कि दो-दो वस्त्र

लपेटना भी चाहिये। फिर उस कलश में एक-एक वस्त्र को कलश पर रखना चाहिये और दूसरे वस्तु से कलश को ढकना चाहिये ।।५।।

ईशकुम्भे यजेद्देवीमाग्नेय्यामग्निदैवतम् ।
[1]चतुःषष्ट्युपचारेण पूजयेदिष्टदेवताम् ।।६।।

प्रथम कलश अग्निकोण में अग्नि के देवता को अर्पित करना चाहिये और अग्निकोण में रखे कलश में अग्नि देवता की स्थापना करनी चाहिये। अपने इष्ट देवता का चौसठ प्रकार से पूजन करना चाहिये ।।६।।

अभावे पूजयेद् देवीं तदर्द्धेन प्रयत्नतः ।
अथवा परमेशानि यथाशक्त्युपचारतः ।।७।।

हे गिरिजे ! चौसठ उपचार से पूजन करने की क्षमता नहीं हो तो बत्तीस उपचार से पूजा करना चाहिये। अथवा अपने सामर्थ्य के अनुसार जितने उपचारों से पूजन हो सके उतने ही उपचारों से पूजन करना चाहिये ।।७।।

---

१. शक्तिविषये चतुःषष्टिरुपचारा यथा तन्त्रसारधृतयामले— आसनारोपणम् (१) सुगन्धितैलाभ्यङ्गः (२) मज्जनशालाप्रवेशनम् (३) मज्जनमणिपीठोपवेशनम् (४) दिव्यस्नानीयम् (५) उद्वर्त्तनम् (६) उष्णोदकस्नानम् (७) कनककलसस्थितसकलतीर्थाभिषेकः (८) धौतवस्त्रपरिमार्जनम् (९) अरुणदुकूलपरिधानम् (१०) अरुणदुकूलोत्तरीयम् (११) आलेपमण्डपप्रवेशनम् (१२) आलेपमणिपीठोपवेशनम् (१३) चन्दनागुरुकुंकुमकर्पूरकस्तूरीरोचनादिव्यगन्धसर्वाङ्गानुलेपनम् (१४) केशभारस्य कालागुरुधूप मल्लिका मालती जातीचम्पकाशोकशतपत्रपूगकुहरीपुन्नागकल्हार-यूथीसर्वर्तुकुसुममालाभूषणम् (१५) भूषणमण्डपप्रवेशनम् (१६) भूषणमणिपीठोपवेशनम् (१७) नवमणिमुकुटम् (१८) चन्द्रशकलम् (१९) सीमन्तसिन्दूरम् (२०) तिलकरत्नम् (२१) कालाञ्जनम् (२२) कर्णपालीयुगलम् (२३) नासाभरणम् (२४) अधरयावकः (२५) ग्रथनभूषणम् (२६) कनकचित्रपदकम् (२७) महापदकम् (२८) मुक्तावलिः (२९) एकावलिः (३०) देवच्छन्दकः (३१) केयूरयुगलचतुष्कम् (३२) वलयावलिः (३३) ऊर्मिकावलिः (३४) काञ्चीदाम (३५) कटिसूत्रम् (३६) शोभाख्याभरणम् (३७) पादकटकम् (३८) रत्ननूपुरम् (३०) पादाङ्गुरीयकम् (४०) एककरे पाशः (४१) अन्यकरेऽङ्कुशम् (४२) इतरकरे पुण्ड्रेक्षचापः (४३) अपरकरे पुष्पवासाः (४४) श्रीमन्माणिक्यपादुका (४५) स्वसमानवेशास्त्रावरणदेवताभिः सह सिंहासनारोहणम् (४६) कामेश्वरपर्यङ्कोपवेशनम् (४७) अमृताशनचषकम् (४८) आचमनीयम् (४९) कर्पूरवटिका (५०) आनन्दोल्लासविलासहासम (५१) मङ्गलारात्रिकम् (५२) श्वेतच्छत्रम् (५३) चामरयुगलम् (५४) दर्पणम् (५५) तालवृन्तम (५६) गन्धः (५७) पुष्पम् (५८) धूपः (५९) दीपः (६०) नेवेद्यम (६१) पुनराचमनीयम (६२) ताम्बूलम् (६३) वन्दनम् (६४) इति।

पूजयेद् बहुयत्नेन ततो होमादिकञ्चरेत् ।
आगमोक्तेन विधिना कुर्यात् तत्र कुशण्डिकाम् ।।८।।

विधिपूर्वक पूजन करना चाहिये और पूजन के बाद होम आदि क्रिया भी करना चाहिये । इसके बाद वहाँ पर तान्त्रिक (आगभोक्त) विधि से कुण्ड का निर्माण करना चाहिये और उसके चारो दिशाओं में कुश बिछा देना चाहिये ।।८।।

त्रिमध्वक्तेन देवेशि विल्वपत्रेण होमयेत् ।
सहस्रं होमयेन्मन्त्री शतन्यूनं न कारयेत् ।।९।।

शहद (मधु) गन्ने का रस और दूध तीनों समान भाग मिलाकर बेलपत्र के साथ हवन करना चाहिये । एक हजार बार आहुति देनी चाहिये पर किसी भी स्थिति में आहुति एक सौ आठ से कम नहीं होना चाहिये ।।९।।

पूर्णाहुतिं ततो दत्त्वा ततो वाक्यं समाचरेत् ।
अद्येत्यादि समुच्चार्य सौरमासं समुच्चरेत् ।।१०।।

पूर्णाहुति के पूर्व ही सङ्कल्पादि में सौरमास का उच्चारण करना चाहिये तब पूर्णाहुति देना चाहिये फिर वसोर्धारा करनी चाहिये ।।१०।।

तिथिगोत्रं चामुकोऽहं धर्माऽर्थ-काममेव वा ।
प्राप्तये परमेशानि ततो मूलं समुच्चरेत् ।।११।।

विधिपूर्वक सङ्कल्प आदि अपने कामना के साथ करना चाहिये । प्रारम्भ में ही अपने इष्ट की प्राप्ति की कामना करनी चाहिये । हे परमेश्वरी ! इसका उच्चारण नक्षत्र, तिथि, गोत्र आदि के साथ प्रारम्भ में ही करना चाहिये ।।११।।

देवतायै नमः पश्चाद् दक्षिणां दापयेद् गुरौ ।
कुम्भतोयेन देवेशि स्नापयेद्यजमानकम् ।।१२।।

इसके बाद देवता को नमस्कार करना चाहिये तथा गुरु (आचार्य) को दक्षिणा देना चाहिये और कलश के जल से यजमान (यज्ञकर्त्ता) को स्नानादि कार्य करना चाहिये ।।१२।।

सुरास्त्वादीन्समुच्चार्य शान्तिं कुर्यात्ततो गुरुः ।
सर्वादौ गुरुदेवस्य वरणं कारयेत् सुधीः ।।१३।।

गुरु को शान्ति पाठ का स्तवन करना चाहिये । फिर देवताओं का भी स्तवन करना चाहिये । सुधी साधकजन सर्वप्रथम ही गुरु (आचार्य) का वरण करते हैं अर्थात् प्रारम्भ में ही गुरु की पूजा करते हैं ।।१३।।

सुवर्णं चम्पकाकारं कर्णयुग्मे निवेदयेत् ।
चतुष्कोणयुतं स्वर्णं ग्रीवायां परियोजयेत् ।।१४।।

चम्पा के फूल के आकार का दोनों कानों में पहनने वाला सोने का कर्णफूल चढ़ाना चाहिये । इसके अतिरिक्त चारों कोणों के बराबर बना हुआ सोने का आभूषण भी गले में धारण करने योग्य प्रदान करना चाहिये ।।१४।।

उष्णीषञ्च ततो दद्यात्कण्ठे मालां नियोजयेत ।
ताडयुग्मं ततो बाहौ वलयं मणिबन्धके ।।१५।।
अङ्गुल्यामङ्गुरी देया दिव्यवस्त्रं नियोजयेत् ।
एवं हि वरणं कृत्वा कर्मयोग्यं विचिन्तयेत् ।।१६।।

देवी के लिये मुकुट प्रदान करना चाहिये ।इसके बाद कण्ठ में धारण करने योग्य माला भी प्रदान करना चाहिये । फिर बाहों में धारण करने वाला वाजूबन्द और दोनों हाथों में पहनने वाला सोने का कंगन भी देना चाहिये और अङ्गुली में धारण करने वाला अँगूठी के साथ ही साथ उत्तम वस्त्र भी प्रदान करना चाहिये ।।१५-१६।।

गुरुं वा गुरुपुत्रं वा वरयेद्यत्नतः सुधीः ।
सदस्यं न हि कर्त्तव्यं तन्त्रधारं न तत्र वै ।।१७।।

सुधी साधक को गुरु या गुरुपुत्र का सम्मानपूर्वक पूजन करना चाहिये एवम् उन्हें प्रसन्न करना चाहिये । यदि गुरु के परिवार के सदस्यों के लिये यह प्रतिकर्म नहीं किया गया तो यह तन्त्र-साधना का आधार ही नहीं बन सकता ।।१७।।

ब्रह्माणं न हि कर्त्तव्यं केवलं वरयेद् गुरुम् ।
गुरोर्भृत्यो महेशानि भैरवो नात्र संशयः ।।१८।।

हे महेशानी ! ब्राह्मणों का प्रथम कर्त्तव्य है कि पहले केवल गुरु (आचार्य) का वरण करें । गुरु भैरव का सेवक है, इसमें कोई भी सन्देह नहीं है ।।१८।।

स्वीयेन परिधानेन वाससा तोषयेत् स्वयम् ।
स्वयं होता भवेद विप्रो गुरोराज्ञानुसारतः ।।१९।।

अपने ही वस्त्रों में हमेशा प्रसन्न रहना चाहिये । ब्राह्मण स्वयम् यज्ञ का कर्त्ता होता है । गुरु आज्ञा से ब्राह्मण स्वयम् ही होता अर्थात् यज्ञकर्त्ता हो जाता है ।।१९।।

मायाबीजं समुच्चार्य आधारशक्तये नमः ।
अनेन मनुना देवि वेदिसंस्कारमाचरेत् ।।२०।।

हे देवि ! माया बीज यानि कि ह्रीं आधार शक्तये नमः का उच्चारण करना चाहिये । इसके बाद वेदि का विधिवत् रूप से संस्कार करना चाहिये ॥२०॥

भूरसीत्यादि मन्त्रेण घट युग्माभिमन्त्रितम् ।
अस्त्रान्तेनैव मूलेन उष्णीषं परियोजयेत् ॥ २१ ॥

फिर ॐ भूरिसि····इत्यादि मन्त्रों से दोनों कलश को अभिमन्त्रित करना चाहिये । इसके बाद इसके मूल में चारो तरफ से वस्त्र लपेट देना चाहिये ॥२१॥

वेदोक्तञ्चैव स्मृत्युक्तं मन्त्रं न योजयेत् सुधीः ।
एवं कूपादिदानेषु कर्त्तव्यं परमेश्वरि ॥ २२ ॥

वैदिक निर्देशों के अनुसार मन्त्रों के प्रति अपने हृदय में पूर्ण आस्था लेकर साधक को जाप करना चाहिये । हे परमेश्वरी ! इसके बाद तालाब या कुआँ आदि का भी दान करना चाहिये ॥२२॥

कूपोत्सर्गे विशेषः

अन्यत् सर्व समानं हि प्रासादादिस्थले पुनः ।
कूपादियोजनं कुर्यात्यष्टिप्रोतनमाचरेत् ॥ २३ ॥

देवी को मण्डप वाले स्थान में पूर्ण सम्मान के साथ ही लाना चाहिये और कुएँ या तालाव आदि के लिये भी उसी रीति से आचरण (सत्कार) करना चाहिये ॥२३॥

चतुर्हस्तप्रमाणञ्च मध्यभागे तु प्रोतनम् ।
मूलमन्त्रं समुच्चार्य ततो वह्निबधूं न्यसेत् ॥ २४ ॥

इसके बाद मण्डप के ही बीच में चार हाथ लम्बा-चौड़ा छतरी बनाना चाहिये और मूलमन्त्र का उच्चारण करके अग्नि का विधिवत् रूप से न्यास करना चाहिये ॥२४॥

ततो यष्टिं समुच्चार्य पोतयामि वदेत् सुधीः ।
तत्र सन्तरणं धेनुं नैव कुर्याद्विचक्षणः ॥ २५ ॥

इसके बाद झण्डा पताका आदि गाड़कर उसे सुन्दर गृह जैसा सजाना चाहिये और ऊपर से चाँदनी से ढक देना चाहिये । इसके बाद ज्ञानी साधक को नवीन वस्त्रों से सुसज्जित करके नया गाय भी लाना चाहिये ॥२५॥

धेनुसन्तरणेनैव फलहानिः प्रजायते ।
स्वर्णं रूप्यं प्रवालञ्च दक्षिणां परियोजयेत् ॥ २६ ॥
स्नापयित्वा कुम्भतोयैः शान्तिं कुर्यात्ततो गुरुः ॥ २७ ॥

सुसज्जित वस्त्रों में गाय नहीं लाने से फल में न्यूनता आती है। सोना, चाँदी, मूँगा आदि विविध प्रकार का रत्न गुरु को दक्षिणा में देना चाहिये। तब इसके बाद उसे कलश के जल से स्नान कराना चाहिये ॥२६-२७॥

अनेनैव विधानेन कूपाद्युत्सर्गमाचरेत्।
वापी-कूप-तडागादि ह्यनेनोत्सर्गमाचरेत्॥२८॥

या अन्य विधि-विधान के अनुसार कुएँ आदि के जल से स्नान कराना चाहिये या तालाब या नदी के जल से स्नान कराना चाहिये। जैसी सुविधा हो उसी के अनुरूप करना चाहिये ॥२८॥

कूपाद्युत्सर्गप्रशंसाकथनम्

दीर्घिकाञ्च पुष्करिणीं ह्यनेनैव जलाशयम्।
उत्सृज्य परया भक्त्या महादेव्यै प्रयत्नतः॥२९॥

फिर सरोवर में से बड़ा कमल का फूल उखाड़कर लाना चाहिये और उस फूल को परमभक्तिपूर्वक शिव जी के ऊपर चढ़ाना चाहिये ॥२९॥

पुरुषं सप्तमं कान्ते पितृवंशे च मातरि।
सप्तमं पुरुषं कान्ते मातृवंशे समं प्रिये॥३०॥

इससे साधक पुरुष मातृपक्ष और पितृपक्ष दोनों ही पक्षों से सात पीढ़ियों तक मेरा प्रिय भक्त बना रहता है ॥३०॥

कैलासे निवसेन्नित्यं देव्यां वरप्रसादतः।
स्वयं देवस्वरूपश्च जीवन्मुक्तो न संशयः॥३१॥

इससे वह कैलाश पर निवास करने वाली देवी से वरदान प्राप्त करता है और वह स्वयम् देवस्वरूप बनकर जीवन के बन्धन से मुक्त हो जाता है, इसमें किसी भी प्रकार का संशय नहीं है ॥३१॥

अश्वमेधसहस्रेण वाजपेयशतेन च।
यत् फलं लभते देवि तस्माल्लक्षगुणं भवेत्॥३२॥

हे देवि ! इससे साधक को एक हजार अश्वमेघ यज्ञ और एक सौ वाजपेय यज्ञ के समान फल प्राप्त होता है और वह एक लाख गुणा ज्यादा फल प्राप्त करता है। इसमें किसी भी प्रकार का काई भी सन्देह नहीं है ॥३२॥

मेरुतुल्यं सुवर्णन्तु ब्राह्मणे वेदपारगे।
दत्त्वा यत् फलमाप्नोति तस्माल्लक्षगुणं भवेत्॥३३॥

साधक को सुवर्ण तथा रत्नों से भरे हुये खजाने की प्राप्ति होती है, ब्राह्मण वेदों में पारङ्गत होता है तथा उसे एक लाख गुणा फल की प्राप्ति होती है और उसे सभी दृष्टि से सम्पन्नता प्राप्त होती है ।।३३।।

पूर्णशस्येन देवेशि सप्तद्वीपां वसुन्धराम् ।
प्रदद्याद् बहुयत्नेन ब्राह्मणे वेदपारगे ।।
तस्माल्लक्षगुणं पुण्यमनेन परमेश्वरि ।।३४।।

हे देवों की देवी ! सातों द्वीप (सम्पूर्ण पृथ्वी) धन-धान्य से परिपूर्ण होता है और बहुत प्रकार से लाभ होता है तथा वह ब्राह्मण सम्पूर्ण वेदों का ज्ञाता होता है ।।३४।।

सदक्षिणं व्रतं सर्वं दानं यद्वेदसम्मतम् ।
तस्माल्लक्षगुणं पुण्यमनेन परमेश्वरि ।।३५।।

दक्षिणा सहित सभी व्रतादि वेदोक्त रीति से करना चाहिये और प्रसन्नतापूर्वक दान देना चाहिये । हे परमेशानी ! इसका फल यह होता है कि उसके पुण्यों में एक लाख गुणा बढ़ोत्तरी होती है ।।३५।।

देव्या यज्ञसूत्रविधानप्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

यज्ञसूत्रधारणेन भूपूज्यो नात्र संशयः ।
इदानीं यज्ञसूत्रस्य विधानं मयि कथ्यताम् ।।३६।।

श्री चण्डिका बोलीं– यज्ञसूत्र धारण करने से साधक सारी पृथ्वी पर पूजनीय होता है इसमें सन्देह नहीं है । इस कारण से हमें यज्ञसूत्र के विधान का वर्णन सुनाने की कृपा करें ।।३६।।

महादेवस्य यज्ञसूत्रविधानकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

[१]यज्ञसूत्रस्य यन्मानं तच्छृणुष्व वरानने ।
ऋग्वेदी धारयेत् सूत्रं नाभेरूर्ध्वं स्तनादधः ।।३७।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे सुन्दरी ! यज्ञ सूत्र धारण करने का विधान तुम्हें सुना रहा हूँ उसे सुनो । यदि ऋग्वेद का अनुसरण करने वाला इसे धारण करता

---

[१] यज्ञसूत्रस्येति । यत्रसूत्रं कस्य किंनिर्मितं स्यादित्यपेक्षायामुक्तं महानील तन्त्रे एकत्रिंशपटले— कार्पासन्तु द्विजातीनां क्षौमञ्च भूभुजां यथा । वैश्यानां शणसूत्रञ्चशङ्करस्य मतेन च ।। इति ।

है तो उसकी कुण्डली शक्ति जागृत होती है और उसके शक्ति आदि की भी वृद्धि होती है ।।३७।।

यजुशां सूत्रमानं हि आश्चर्यं शैलजे परम् ।
बाहुमूलप्रमाणेन यज्ञसूत्रं द्विजातिभिः ।
धारणीयं प्रयत्नेन नान्यद् दैर्घ्यं कदाचन ।।३८।।

हे शैलपुत्री ! यज्ञसूत्र धारण करने का विधान भी आश्चर्यजनक है । एक हाथ लम्बा प्रमाण का ही यज्ञसूत्र ब्राह्मणों को धारण करना चाहिये इससे कम या अधिक कभी नहीं धारण करना चाहिये ।।३८।।

सामगस्य यज्ञसूत्रं त्रिविधं वरवर्णिनि ।
ब्रह्मरन्ध्रान्नाभिदेषपर्यन्तं यज्ञसूत्रकम् ।।३९।।

आगम (तन्त्र) शास्त्रों में यज्ञसूत्र धारण करने का तीन प्रकार से विवरण दिया गया है । शिर से लेकर नाभि प्रदेश तक यज्ञसूत्र होना चाहिये इससे कम भी नहीं होना चाहिये ।।३९।।

अथवापि च ग्रीवायामारोप्य नाभि संस्पृशेत् ।
तस्मात् पृष्ठान्मेरुदण्डपर्य्यन्तं यज्ञसूत्रकम् ।।४०।।

हे परमेश्वरी ! इसके अतिरिक्त और भी प्रकारान्तर है, उसे भी कहा रहा हूँ सो सुनो ! गर्दन से लेकर नाभि प्रदेश तक यज्ञ सूत्र होना चाहिये या कूल्हे तक होना चाहिये ।।४०।।

अथवा परमेशानि प्रकारान्तरकं शृणु ।
ग्रीवाया दक्षिणाङ्गुष्ठपर्य्यन्तं यज्ञसूत्रकम् ।।४१।।

हे परमेशानि ! इसका प्रकारान्तर भी कह रहा हूँ उसे सुनो । गर्दन से लेकर दाहिने हाथ के अँगूठे तक लम्बा यज्ञसूत्र होना चाहिये ।।४१।।

अथवा धारयेत् सूत्रं यत्नेन यजुषां मतम् ।
अथवा धारयेत् सूत्रं समागस्य प्रमाणतः ।।४२।।

या यज्ञसूत्र यज्ञ के आचार्य के अनुसार धारण करना चाहिये या तन्त्र-शास्त्रों में दिये गये मतानुसार ही यज्ञसूत्र धारण करना चाहिये ।।४२।।

अथर्वी धारयेद्यज्ञसूत्रं परममोहनम् ।
आज्ञाचक्रान्नाभिदेशपर्यन्तं यज्ञसूत्रकम् ।।४३।।

अथर्ववेद के ज्ञाता अत्यन्त सुन्दर यज्ञसूत्र धारण करते हैं और उनका यज्ञसूत्र आज्ञाचक्र से लेकर नाभि प्रदेश तक लम्बा होता है ।।४३।।

अज्ञातसङ्केतस्य यज्ञसूत्रधारणनिन्दा

एतत् सङ्केतमज्ञात्वा यः कुर्य्यात् सूत्रधारणम् ।
स चण्डालसमो देवि यदि व्याससमो भवेत् ।।४४।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे एकादशः पटलः ।।११।।

इस प्रकार से यज्ञ सूत्र धारण करने का सङ्केत इसी प्रकार से दिया गया है। यदि चाण्डाल भी इसे धारण करता है तो हे देवि ! वह भी महर्षि व्यास के समान हो जाता है ।।४४।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
ग्यारहवाँ पटल समाप्त ।।११।।

◆

द्वादशः पटलः

पूजाधारकथनम्, पार्थिवलिङ्गस्य निषेधश्च

श्रीशङ्कर उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूजाधारं सुदुर्लभम् ।
शालग्रामे मणौ यन्त्रे प्रतिमायां घटे जले[१] ।।१।।

श्री शङ्कर जी बोले– पूजा-आधार के सम्बन्ध में अब प्रकाश डाला जा रहा है वह अत्यन्त दुर्लभ है । शालिग्राम, मणि, यन्त्र, चित्र और कलश ही पूजा का आधार है ।।१।।

पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां शिवलिङ्गे प्रसूनके ।
शालग्रामे शतगुणं मणौ तद्वत् फलं लभेत् ।।२।।

पुस्तक पर, गङ्गा में, शिवलिङ्ग में और फूल में आधार मानकर पूजा किया जाता है । शालिग्राम में पूजन करने पर एक सौ गुना और मणि आदि रत्नों में पूजा करने पर उसी रूप में लाभ होता है ।।२।।

यन्त्रे लक्षगुणं पुण्यं मूर्त्तौ लक्षं सुलोचने ।
घटे चैकगुणं पुण्यं जले चैकगुणं प्रिये ।।३।।

हे सुन्दर नेत्रोंवाली ! यन्त्र पर पूजा करने से लाख गुना पुण्य होता है और मूर्ति पर पूजन करने से यथावत लाभ होता है । कलश पर पूजन करने से एक गुना और जल में भी पूजन करने पर भी एक गुना लाभ होता है ।।३।।

पुस्तिकायां सहस्रन्तु गङ्गायां तत्समं फलम् ।
[२]शिवलिङ्गे ह्यनन्तं हि विना पार्थिवलिङ्गके ।।४।।

---

१. अथात इत्यादि । अत्र संवादि गुप्तसाधनतन्त्राष्टमपटलवचनमुल्लिख्यते— अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूजाधारन्तु सिद्धिदम् । यं विना परमेशानि न हि सिद्धिः प्रजायते ।। शालग्रामे मणौ यन्त्रे प्रतिमायां सुरेश्वरि । पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां सामान्येन जले तथा ।। अथवा पुष्प-यन्त्रेण पूजयेच्छिवलिङ्गके । यन्त्रभेदेन देवेशि फलं सम्यक् प्रजायते ।। शालग्रामे शतगुणं मणौ तद्वत् फलं लभेत् । यन्त्रे लक्षगुणं प्रोक्तं प्रतिमायां तथैव च ।। पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां समानफलमीरितम् ।। इति ।

२. शिवलिङ्ग इत्यादि । अत्रापि गुप्तसाधनप्रमाणम्— शिवलिङ्गे महेशानि अनन्तफलमीरितम् । न कुर्यात् पर्थिवे लिङ्गे देवीपूजादिकाः क्रियाः ।। पार्थिवे पूजनाद् देवि सिद्धिहानिः प्रजायते । यदि दैवान्महेशानि मृत्तिकास्खलनं भवेत् ।। तावद् वर्षसहस्राणि नरके पूय-

.....क्रमशः

पुस्तक पर एवं गङ्गा में पूजा करने से हजार गुना फल मिलता है। पार्थिव लिङ्ग के अभाव में शिवलिङ्ग पर पूजा करने से अनन्त गुना फल मिलता है ।।४।।

शालग्रामादौ यन्त्रलिखननिषेधः

पुष्पयन्त्रे महेशानि पूजनात् सर्वसिद्धिभाक् ।
शालग्रामे च पूजायां न लिखेद्यन्त्रमुत्तमम् ।।५।।

हे गिरिजे ! पुष्प पर यन्त्र बनाकर पूजन करने से सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती है। शालिग्राम पर पूजा करते समय उस पर यन्त्र न लिखना ही उत्तम माना गया है ।।५।।

मणौ स्थिते महेशानि न लिखेद्यन्त्रमुत्तमम् ।
प्रतिमायाञ्च पूजायां न लिखेद्यन्त्रमुत्तमम् ।।६।।

मणि आदि रत्न पर पूजन करते समय उस पर यन्त्र न लिखना ही उत्तम है और उसी प्रकार चित्र पर भी पूजा करने के समय यन्त्र नहीं लिखना चाहिये ।।६।।

प्रतिमापूजायां विशेषः

प्रतिमायाश्च पुरतो घटं संस्थाप्य यत्नतः ।
परिवारान् यजेत्तत्र घटे तु परमेश्वरि ।।७।।

हे परमेश्वरी ! प्रतिमा के पूरक के रूप में कलश भी स्थापित करना चाहिये। कलश के ऊपर परिवार के अन्य देवी-देवताओं का भी पूजन करना चाहिये, अर्थात् पूजा के समय अन्य देवी देवताओं का भी पूजन करना चाहिये ।।७।।

यन्त्राधिष्ठातृदेवांश्च घटे यन्त्रे प्रपूजयेत् ।
समस्तदेवतारूपं घटन्तु परिचिन्तयेत् ।
सुरद्रुमस्वरूपोऽयं घटो हि परमेश्वरि ।।८।।

शोणिते। कुम्भीपाके महाघोरे पच्यते पितृभिः सह ।। अत एव महेशानि पार्थिवे न हि पूजयेत्। स्फटिकादीन् समानीय लिङ्गं निर्माय यत्नतः ।। तल्लिङ्गे पूजनाद् देवि सर्वसिद्धियुतो भवेत् ।। इति। एवमपि पार्थिवे देवताविशेष पूजने फलविशेषमुक्तं तन्त्रान्तरतन्त्रे— कालिकां तारिणीञ्चैव त्रिपुरां भुवनेश्वरीम्। योऽर्च्चयेत् पर्थिवे लिङ्गे स याति परमां गतिम् ।। तारिण्याः कालिकायाश्च सुन्दर्याः परमेश्वरि। पार्थिवे पूजनाद्देवि चतुर्वर्गफलं लभेत् ।। इति। अत्र च सामान्यविशेषन्यायेन विधिनिषेधयोरविरोधं प्रमाणयन्तोऽनूचाना वंशपरम्परया तथैव व्यवहरन्तीति।

हे परमेश्वरी ! यन्त्रों के अधिष्ठात्री देवताओं का पूजन यन्त्र पर या कलश पर करना चाहिये और समस्त देवताओं का आह्वान पूजन भी कलश पर ही करना चाहिये। सभी देवता घट ही में अपने-अपने स्वरूप में निवास करते हैं ।।८।।

यन्त्रे कृते मूर्त्तेरकर्त्तव्यवा

जन्मस्थानं महायन्त्रं यदि कुर्यात् तु साधकः ।
तत्र मूर्त्तिं न कुर्यात् तु कदाचिदपि मोहतः ।।९।।

प्रतिमायां पूजायां यन्त्रालिखननिषेधः, दैवाद् यन्त्रालिखने कर्त्तव्यव्यवस्था च

यदि मूर्त्तिं प्रकुर्यात् तु तत्र यन्त्रं न कारयेत् ।
यदि कुर्यात् तु मोहेन यजेद् वारद्वयं प्रिये ।।१०।।
द्विगुणं पूजनं तत्र द्विगुणं बलिदानकम् ।
द्विगुणं प्रजपेन् मन्त्रं द्विगुणं होमयेत्सुधीः ।।११।।

यदि साधक जन्म-स्थान पर महायन्त्र का निर्माण करता है और वह मोहवश मूर्ति नहीं स्थापित करता है या वह मूर्ति स्थापित करता है पर यन्त्र नहीं बनाता है और वह दूसरे दिन यन्त्र भी बनाता है तो उसे द्विगुणा पूजन और बलिदानादि कार्य करना चाहिये। साधक को द्विगुणा जाप और हवनादि कार्य भी द्विगुणा करना चाहिये। इस प्रकार उसे सारी क्रियायें हर स्थिति में द्विगुणा ही करनी चाहिये ।।९-११।।

तदकरणे दोष

[१]अन्यथा विफला पूजा विफलं बलिदानकम् ।
सर्वं हि विफलं यस्मात् तस्माद्यन्त्रं न कारयेत् ।।१२।।
इति ते कथितं कान्ते पूजाधारं सदुर्लभम् ।।१३।।

ऐसा नहीं करने पर उसका समस्त पूजा, पाठ, जप, होम और बलिदान आदि कार्य सभी निष्फल चला जाता है। उसे इसका कोई भी फल-प्रतिफल प्राप्त नहीं होता और न उस यन्त्र का भी कोई प्रभाव होता है। उसके सारे क्रियाकलाप निष्फल हो जाते हैं। उसका कार्य-सिद्धि योग्य नहीं रहता। हे देवि ! इस प्रकार दुर्लभ पूजा आधार के सम्बन्ध में मैंने कहा ।।१२-१३।।

---

[१] अन्यथेत्यादि। यत्तु संस्थाप्य पूजयेत्तञ्च यन्त्रराजं घटोपरि। देव्यग्रे च घटं दिव्यं सुदृढं लक्षणान्वितम् ।। तत्र यन्त्रं समारोप्य पूजयेद् विभवावधि ।। इति शाम्भवीतन्त्रीयचतुर्दश-पटलवचनं, तदत्रपूर्णापूजापरं प्रकरणबलात् द्विगुणपूजाभिप्रायेण वेत्यविरोधः ।

शिवलिङ्गलक्षणकथनम्, पार्थिवादिशिवलिङ्गाधिकरणकशिवपूजासु विशेषः च

[१]अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शिवलिङ्गस्य लक्षणम् ।
पार्थिवे शिवपूजायां सर्वसिद्धियुतो भवेत् ।।१४।।

अब शिवलिङ्ग के लक्षणों के सम्वन्ध में कहा जा रहा है। पार्थिव शिवलिङ्ग की पूजा करने से सभीप्रकार के मनोकामनाओं की भी पूर्ति होती है ।।१४।।

पाषाणे शिवपूजायां द्विगुणं फलमीरितम् ।
स्वर्णलिङ्गे च पूजायां शत्रूणां नाशनं मतम् ।।१५।।

पत्थर (स्फटिक पत्थर) के शिवलिङ्ग की पूजा करने से द्विगुणा लाभ होता हैं और सोने के शिवलिङ्ग का पूजन करने से शत्रुनाश होता है ।।१५।।

---

१. अथात इत्यादि। आधारभेदेन शिवपूजायाः फलभेदे अन्यत्रोक्तप्रमाणानि। कालोत्तरे- महाभुक्तिप्रदं हैमं राजतं भूतिवर्धनम्। आरकूटं तथा कांस्यं शृणु सामान्यमुक्तिदम् ।। त्रपुसीसायसं लिङ्गं शत्रूणां नाशने हितम्। कीर्त्तिदं कांस्यजं लिङ्गं राजतं पुष्टिवर्धनम् ।। पैत्तलं भुक्तिमुक्त्यर्थं मिश्रजं सर्वसिद्धिदम् ।। इति। शिवनारदसंवादे— पितृणां मुक्तये लिङ्गं पूज्य रजतसम्भवम्। हैमजं सत्यलोकस्य प्राप्तये पुजयेत्पुमान् ।। पूजयेत्ताम्रजं लिङ्गं पुष्टिकामो हि मानवः। (ताम्रादिलिङ्गन्तु कलीतरपरम्)। तथाच मत्स्यसूक्ते— ताम्रलिङ्गं कलौ नार्चेद्रीत्यस्य सीसकस्य च। रक्तचन्दनलिङ्गञ्च शङ्खकांस्यायसं तथा। तुष्टिकामस्तु सततं लिङ्गं पित्तलसम्भवम्। कीर्त्तिकामो यजेन्नित्यं लिङ्गं कांस्यसमुद्भवम्। शत्रुमारणकामस्तु लिङ्गं लौहमयं सदा। सदा सीसमयं लिङ्गमायुष्कामोऽर्चयेन्नरः ।। लक्षणसमुच्चयेऽपि— स्थिरलक्ष्मीप्रदं हैमं राजतं चैव राज्यदम्। प्रजावृद्धिकरं राङ्गं ताम्रमायुःप्रवर्द्धनम् ।। विद्वेषकारकं कांस्यं रीतिजं शत्रुनाशनम्। रोगघ्नं सैसकं लिङ्गमायसं शत्रुनाशनम् ।। अष्टलौहमयं लिङ्गं कुष्ठरोगक्षयावहम्। त्रिलौहसम्भवंलिङ्गं विज्ञानं प्रति सिद्धिदम् ।। लिङ्गपुराणे— श्रीप्रदं वज्रजं लिङ्गं शिलाजं सर्वसिद्धिदम्। धातुजं धनदं साक्षाद्दारुजं भोगसिद्धिदम् ।। कालोत्तरे— गन्धपुष्पमयंलिङ्गं तथान्नादिविनिर्मितम्। कस्तूरीसम्भवं लिङ्गं धनाकांक्षी प्रपूजयेत् ।। लिङ्गं गोरोचनोत्थञ्च रूपकामस्तु पूजयेत्। कान्तिकामस्तु सततं लिङ्गं कुंकुमसम्भवम् ।। श्वेतागुरुसमुद्भूतं महाबुद्धिविवर्द्धनम्। धारणाशक्तिदं लिङ्गं कृष्णागुरुसमुद्भवम्। इति। गरुडपुराणे च— कस्तूरिकाया द्वौ भागौ चत्वारश्चन्दनस्य च। कुंकुमस्य त्रयश्चैव शशिनश्च चतुःसमम् ।। एतद् वै गन्धलिङ्गन्तु कृत्वा सम्पूज्य भक्तितः। शिवसायुज्यमाप्नोति बन्धुभिः सहितो नरः ।। इति। पद्मपुराणे च— पारदञ्च महाभूत्यै सौभाग्याय च मौक्तिकम्। चान्द्रकान्तं मृत्युजित्स्याद्धाटकं सर्वकामदम् ।। इति। मत्स्यसूक्ते च— विशेषाच्छैलजं मुक्त्यै भुक्तये चानुसङ्गतः। पर्थिवं भुक्तये शस्तं मुक्तये चानुसङ्गतः ।। एवं वै दारुजं ज्ञेयं चिह्नलिङ्गं तथा पुनः। स्थिरलक्ष्मीप्रदं ज्ञेयं हैमं राज्यप्रदञ्च तत् ।। पुत्रवृद्धिकरं ताम्रं राङ्गमायुःप्रवर्द्धनम् ।। इति।

सर्वसिद्धीश्वरो रौप्ये फलं तस्माच्चतुर्गुणम् ।
ताम्रे पुष्टिं विजानीयात् कांस्ये च धनसञ्चयम् ।।१६।।

चाँदी के शिवलिङ्ग पर पूजन करने से सभीप्रकार के मनोरथ पूर्ण होते हैं और इससे चार गुना फल प्राप्त होता है । ताँबे के शिवलिङ्ग पर पूजन करने से शरीर स्वस्थ रहता है तथा ज्ञान की वृद्धि होती है और पीतल के शिवलिङ्ग पर पूजन करने से धन की बढ़ोत्तरी होती है एवम् सम्पन्नता की प्राप्ति होती है ।।१६।।

पारदस्य च माहात्म्यं पुरैव कथितं मया ।
गङ्गायाञ्च लक्षगुणं लाक्षायां रोगवान् भवेत् ।।१७।।

पारद का माहात्म्य मेरे द्वारा पूर्व में कहा ही जा चुका है । गङ्गा में पूजन करने से एक लाख गुना फल और लाह का शिवलिङ्ग पर पूजन करने से शरीर नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं ।।१७।।

स्फाटिके सर्वसिद्धिः स्यात्तथा मारकते प्रिये ।
लौहलिङ्गे रिपोर्नाशं कामदं भस्मलिङ्गके ।।१८।।

स्फटिक शिवलिङ्ग के पूजन से सभी प्रकार के मनोरथ सिद्ध होते हैं और मरकत मणि के शिवलिङ्ग के पूजन से भी वही लाभ प्राप्त होता है । लोहे के शिवलिङ्ग के पूजन से शत्रुओं का नाश और भस्म के शिवलिङ्ग से काम की उत्पत्ति होती है ।।१८।।

वालुकायां काम्यसिद्धिर्गोमये रितुहिंसनम् ।
सर्वलिङ्गस्य माहात्म्यं धर्माऽर्थ-काम-मोक्षदम् ।।१९।।

बालू के शिवलिङ्ग पर पूजन से काम्य सिद्धि और गोबर के शिवलिङ्ग पर पूजन से सम्बन्धियों का नाश होता है । सभीप्रकार के लिङ्गों का माहात्म्य अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिये है ।।१९।।

आधारभेदे यत्पुण्यं चाधिकं कथितं तु ते ।
अतिरिक्तफलान्येतदाधारस्य सुलोचने ।।२०।।

हे सुन्दर नेत्रों वाली ! आधार भेद के अनुसार इसके फल की अधिकता के सम्बन्ध में कहा गया है । आधार भेद के अनुसार ही अतिरिक्त फल की भी प्राप्ति होती है ।।२०।।

शम्भुपूजाप्रशंसा

शिवस्य पूजनाद् देवि चतुर्वर्गाधिपो भवेत् ।
अष्टैश्वर्ययुतो मर्त्यः शम्भुनाथस्य पूजनात् ।।२१।।

हे देवि ! शिवपूजन से चतुर्वर्ग अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष फल की प्राप्ति होती है और शम्भुनाथ के पूजन से आठों प्रकार के ऐश्वर्यों की भी प्राप्ति होती है ॥२१॥

स्वयं नारायणः प्रोक्तो यदि शम्भुं प्रपूजयेत् ।
स्वर्गे मर्त्त्ये च पाताले ये देवाः संस्थिताः सदा ।
तेषां पूजा भवेद्देवि शम्भुनाथस्य पूजनात् ।।२२।।

हे देवि ! यह स्वयम् नारायण (विष्णु) के द्वारा ही कहा गया है कि स्वर्ग, पाताल और मृत्यलोक में जितने भी देवता हैं, शिवपूजन करने से सभी देवताओं का पूजन हो जाता है। इसकारण से सभीप्रकार की पूजा केवल शम्भुनाथ के पूजन से ही सम्पन्न हो जाती है ॥२२॥

विल्वपत्रेण पूजायां फलाधिक्यकथनम्, शिवपूजाप्रशंसा च

स्वर्णपुष्पसहस्रेण यत्फलं लभते नरः ।
तस्माल्लक्षगुणं पुण्यं भग्नैकबिल्वपत्रके ।।२३।।

स्वर्णपुष्प (चम्पा का फूल) चढ़ाने से एक हजार गुना लाभ होता है और टूटा हुआ बेलपत्र चढ़ाने से भी लाख गुना फल प्राप्त होता है ॥२३॥

[1]भग्नैकबिल्वपत्रस्य सहस्रैकेन भागतः ।
मेरुतुल्यसुवर्णेन तत्फलं न हि लभ्यते ।।२४।।

मात्र एक टूटा हुआ बेलपत्र चढ़ाने से हजारों हजार गुना फल प्राप्त होता है बल्कि स्वर्ण पुष्प चढ़ाने से वह फल नहीं मिलता ॥२४॥

शुद्धाशुद्ध विचारोऽपि नास्ति तच्छिवपूजने ।
[2]येन केन प्रकारेण विल्वपत्रैः प्रपूजनात् ।
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा स नरः सिद्ध एव हि ।।२५।।

---

[1] भग्नैकेत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं योगिनीतन्त्रे— विल्वपत्रञ्च माध्यञ्च तमालामकीदलम् । कह्लारं तुलसञ्चैव पद्मपुन्नागपुष्पकम् ॥ एतत् पुर्युषितं न स्याद् यच्चान्यत् कलिकात्मकम् । नीरजस्य च विल्वस्य तुलस्या दलमेव च ॥ न दूष्योच्छिन्नाभिन्नञ्च जातिपुष्पञ्च सुन्दरि ॥ इति ।

[2] येनेत्यादि । अत्र विशेषमाह वरदातन्त्रे चतुर्थपटले— फलशून्यैर्वृक्षजातैर्विल्वपत्रैर्न चार्चयेत् ॥ इति । त्रिविक्रमसंहितायामपि—अच्छिन्नमूलं तत्पत्रं यो दद्याच्छङ्करार्चने । तस्य पूजा वृथा देवि मृतो नरकमाप्नुयात् ॥ इति । लिङ्गार्चनतन्त्रे द्वादशपटलेऽपि— विल्वपत्रं महादेवि कीटादिदोषवर्ज्जितम् । कोमलं मधुरं पत्रं पत्रत्रययुतं शिवे ॥ विल्वपत्रं विना देवि न हि पूजां समाचरेत् ॥ इति । एवञ्च मूलग्रन्थेन सह पर्यालोचनया विशेषवचनानि फलभूयस्त्व-शंसीनीति विज्ञायते ।

इसकारण से शुद्ध-अशुद्ध का विचार करके शिवपूजन करना चाहिये । किसी भी प्रकार के बिल्वपत्र से पूजा-अर्चना करना चाहिये इससे मनुष्य सर्वसिद्धि को प्राप्त करता है ।।२५।।

ब्रह्माण्डमध्ये ये देवास्तद् बाह्ये याश्च देवताः ।
ते सर्वे तृप्तिमायान्ति केवलं शिवपूजनात् ।।२६।।

ये ब्रह्माण्ड के मध्य में ही स्थित हैं और उसके बाहरीभाग में बाकी सभी देवता निवास करते हैं । ये सभी देवता मात्र शिवपूजन से ही तृप्त (प्रसन्न) हो जाते हैं ।।२६।।

लिङ्गोपरि पुष्पगन्धादिदानप्रशंसा

पुष्पं गन्धं जलं द्रव्यं लिङ्गोपरि नियोजयेत् ।
लिङ्गमध्ये महावह्निः सैव रुद्रः प्रकीर्त्तितः ।।२७।।
रुद्रोपरि क्षिपेद्यत्तु तदेव भस्मतां गतः ।।२८।।

फूल, चन्दन, जल, दूध और द्रव्य शिवलिङ्ग के ऊपर निवेदन करना चाहिये; क्योंकि लिङ्ग के मध्य में महाअग्नि है जो रुद्र के स्वरूप है । लिङ्ग के ऊपर रुद्र के रूप में सभी देवता छिपे हुये हैं ।।२७-२८।।

साक्षाद्धामो महेशानि शिवस्य पूजनाद्भवेत् ।
महायज्ञेश्वरो मर्त्त्यः शिवस्य पूजनाद्भवेत् ।।२९।।

हे महेशानी ! शिवपूजन करने वाला साक्षात् धाम (शिवलोक) को ही प्राप्त करता है । महायज्ञकर्त्ता शिवपूजन से यज्ञों का देवता होता है ।।२९।।

लिङ्गोपरि जलदानफलम्

कुशाग्रमानं यत्तोयं तत्तोयेन यजेद्यदि ।
सत्यं सत्यं हि गिरिजे तज्जलं सागरोपमम् ।।३०।।

हे महेशानी ! कुश के अग्रमान से यदि जल में जल मिलाया जाये तो मैं सत्य-सत्य कहता हूँ कि वह जलसागर के समान हो जाता है ।।३०।।

लिङ्गोपरि पुष्पदानफलम्

पुष्पञ्च मेरुसदृशं लिङ्गोपरि नियोजनात् ।
लिङ्गस्य मस्तके देवि यदन्नं परितिष्ठति ।।३१।।
तदन्नस्य च दानेन क्षितिदानफलं लभेत् ।।३२।।

यदि मेरु सदृश्य पुष्प शिवलिङ्ग पर चढ़ाया जाता है तो हे देवि ! वह अन्न के समान चारो तरफ से लिङ्ग पर प्रतिष्ठित हो जाता है । ऐसे अन्न आदि दान से सर्वस्व दान का फल प्राप्त होता है ।।३१-३२।।

एकेन तण्डुलेनैव यदि लिङ्गं प्रपूजयेत् ।
ब्रह्माण्डपात्रसम्पूर्णमन्नदानफलं लभेत् ।।३३।।

यदि एक तिल से भी शिव की पूजा की जाय तो उससे भी ब्रह्माण्ड रूपी पात्र में भरकर अन्नदान करने का फल प्राप्त होता है ।।३३।।

लिङ्गोपरि दूर्वादानफलम्

एकया दूर्वया वापि योऽर्चयेच्छिवलिङ्गकम् ।
सर्वदेवस्य शीर्षे तु चार्घदानफलं लभेत् ।।३४।।

यदि एक दूब से भी शिव की पूजा की जाय तो उससे भी सभी देवताओं के ऊपर अर्घ्य देने के बराबर फल प्राप्त होता है ।।३४।।

शिवस्नपनफलम्

सामान्यतोयमानीय यदि स्नायान्महेश्वरम् ।
सार्द्धत्रिकोटि-तीर्थस्य स्नानस्य फलभाग्भवेत् ।।३५।।

यदि सामान्य रूप से नित्यप्रति मात्र शिवलिङ्ग की पूजा की जाये तो मात्र सी से ही तीन लाख तीर्थों में स्नान करने के बराबर फल प्राप्त होता है ।।३५।।

देव्या ब्रह्मशक्तिविष्णुशक्तिविषये जिज्ञासा

श्रीचण्डिकोवाच

तारिणी ब्रह्मणः शक्तिस्त्रिपुरा वैष्णवी परा ।
कथं शाकम्भरी तारा त्रिपुरा शाम्भवी कथम् ।।३६।।

श्रीचण्डिका बोलीं– त्रिपुरा वैष्णवी ही ब्रह्म शक्ति और परा विद्या हैं जो मुक्ति प्रदान करती है । शाकम्भरी, तारा, शाम्भवी और त्रिपुरा के भी सम्बन्ध में बताने की कृपा करें ।।३६।।

महादेवस्योत्तरम्

श्रीशङ्कर उवाच

काली देहाद्यदा जाता सावित्री वेदमातृका ।
त्रिवर्गदात्री सा देवी ब्रह्मणः शक्तिरेव च ।।३७।।

श्री शङ्कर जी बोले– काली देवी ही आद्या शक्ति हैं तथा सावित्री वेदों की माता अर्थात् मातृका (अक्षर) हैं । ये ही तीनों वर्गों को प्रदान करने वाली ब्रह्म की पराशक्ति हैं ।।३७।।

गुप्तरूपा महाविद्या शैवी सैकजटा परा ।
तस्माल्लक्ष्मीर्वैष्णवी या त्रिवर्गदायिनी शिवा ।।३८।।

महाविद्या ही गुप्त रूप से शिव की शक्ति एकजटा पराशक्ति है और उसी के अनुरूप लक्ष्मी, वैष्णवी और तीनों वर्गों को प्रदान करने वाली शिवा यानि कि शिव की शक्ति हैं ॥३८॥

गुप्तरूपा महाविद्या श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ।
शाम्भवी परमा माया त्रिपुरा मोक्षदायिनी ॥३९॥

त्रिपुर-सुन्दरी ही गुप्त रूप से महाविद्या है तो शाम्भवी महामाया है उसी प्रकार त्रिपुरा अर्थात् त्रिपुर-सुन्दरी ही मोक्ष प्रदान करने वाली हैं ॥३९॥

एकैव हि महाविद्या नाममात्रं पृथक् पृथक् ।
तथैव पुरुषश्चैको नाममात्रविभेदकः ॥४०॥

जिस प्रकार एक ही महाविद्या है और वही अलग-अलग नामों से जानी जाती है, उसी प्रकार देवता भी अलग अलग नामों से जाने जाते हैं। केवल नाम मात्र का भेद ही मातृका भेद उत्पन्न करता है ॥४०॥

मन्त्रधारिणो वातुलत्वरोगित्वविषये देव्याः प्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

मन्त्रधारणमात्रेण तदात्मा तन्मयो भवेत् ।
कथं वा वातुलः सोऽपि कथं वा रोगवान् भवेत् ॥४१॥

श्रीचण्डिका बोलीं– मन्त्र धारण करने मात्र से ही उसकी आत्मा उसमें लीन हो जाता है। अब हमें वातुल के सम्बन्ध में भी कहने की कृपा करें कि रोगों की उत्पत्ति कैसे होती हैं ॥४१॥

मन्त्रवच्छन्नादिदोषेण वातुलत्वादिकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

मन्त्रच्छन्नाद् वातुलत्वं रोगो देहे न जायते ।
मन्त्रच्छन्नं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि समाहिता ॥४२॥

श्रीशङ्कर जी बोले– शुद्ध मन्त्रोच्चारण से शरीर में किसीप्रकार का रोग नहीं होता है। हे देवि ! मन्त्रों की शुद्धि के सम्बन्ध में कह रहा हूँ इसे अपने में समाहित कर लो ॥४२॥

[१]अभक्तिश्चाक्षरे भ्रान्तिर्लुप्तश्छिन्नस्तथैव च ।
ह्रस्वो दीर्घश्च कथनं स्वप्ने तु चाष्टधा स्मृतः ॥४३॥

---

[१] अभक्तिरित्यादि । अस्यार्थः— अभक्तिः मन्त्रेष्वक्षरबुद्ध्यादिरूपा । तदुक्तं कुलार्णवे द्वादशोल्लासे— गुरौ मनुष्यबुद्धिन्तु मन्त्रे चाक्षरभावनाम् । प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं

...क्रमशः

यदि भ्रान्तिवश किसी को गलत मन्त्र दे दिया जाये और उसके प्रति उसके मन में अविश्वास उत्पन्न हो जाये तो ह्रस्व-दीर्घ के कथन को आठ प्रकार से स्मृति में लाना चाहिये ।।४३।।

अभक्त्या नैव सिद्धिः स्यात् कल्पकोटिशतैरपि ।
एवं मन्त्रश्चान्यथा वा चेति भ्रान्त्या च वातुलः ।।४४।।

जिसके मन में सन्देह उत्पन्न हो जायेगा उसे कभी भी सिद्धि नहीं मिल सकती । मन्त्रों का हमेशा ही मनन करना चाहिये तथा भ्रान्ति के सम्बन्ध में मन में कभी भी नहीं सोचना चाहिये ।।४४।।

लुप्तवर्णे बुद्धिनाशश्छिन्ने नाशो भवेत् किल ।
ह्रस्वोच्चारे व्याधियुक्तो दीर्घजापे वसुक्षयः ।।४५।।

यदि मन्त्र का वर्ण लुप्त हो जाये तो बुद्धि का नाश होता है और छिन्न होने पर भ्रान्ति और तर्क उत्पन्न होता है । दीर्घ के वदले ह्रस्व के उच्चारण से रोग और ह्रस्व के वदले दीर्घ के उच्चारण से धन-सम्पत्ति का नाश होता है, इसमें सन्देह नहीं ।।४५।।

कथने मृत्युमाप्नोति स्वप्नेऽपि शृणु शैलजे ।
कालिकायाश्च ताराया मन्त्रोऽपि ज्वलदग्निवत् ।।४६।।

हे गिरिजे ! सुनो, मन्त्रों को स्वप्न में कहने से मृत्यु होती है; क्योंकि कालिका तथा तारा का मन्त्र जलती हुई अग्नि के समान होता है ।।४६।।

मन्त्रहरणदोषकथनम्, साधकस्यावस्थाविशेषकथनञ्च

विप्ररूपेण देवेन प्रेमभावेन चेतसा ।
यदि मन्त्रं हरेद्देवि शृणु साधकलक्षणम् ।।४७।।

हे देवि ! सुनो, ब्राह्मणरूप में समस्त देवगण समर्पण भाव से चैतन्य होते हैं । जब मन्त्रों के उच्चारण में भूल-चूक हो तो मन्त्रों का हरण होता है यही साधकों का लक्षण है ।।४७।।

व्रजेत् ।। इति । देवतान्तरमन्त्रप्रशंसया स्वमन्त्रस्याफलत्वबुद्ध्यादिरूपा च ।।१।। अक्षरे भ्रान्तिः— गुरोः शिष्यस्य वा भ्रान्त्या मन्त्रेषु वर्णवैपरीत्यं वर्णाधिक्यञ्च ।।२।। लुप्तः- मन्त्रेषु वर्णन्यूनत्वम् ।।३।। छिन्नः-मन्त्रान्तर्गत-युक्तवर्णैकदेशन्यूनत्वम् ।।४।। ह्रस्वः— दीर्घस्थाने ह्रस्वप्रयोगः ।।५।। दीर्घः— ह्रस्वस्थाने दीर्घप्रयोगः ।।६।। यद्यप्येतद्दोषयोरक्षर-भ्रान्त्यन्तर्भूतत्वेन पौनरुक्त्यं स्यात्, तथापि पृथक्प्रायश्चित्तस्य वक्ष्यमाणत्वाद् अक्षरभ्रान्तिस्तदितरविषया ।।७।। कथनम्-अन्येषु स्वीयमन्त्रप्रकाशः ।।८।। स्वप्नेत्विति-स्वप्ने ब्राह्मणरूपिदेवेन स्वीयमन्त्रस्य प्रहरणं प्रकर्षेण हरणं तस्मिन् स्वीयमन्त्रप्रकाश इति यावत् । इति ।

सर्वाङ्गे वै भवेज्ज्वाला देहमध्ये विशेषतः ।
तोये शैत्यं न जायेत तथैवौषधसेवने ।।४८।।

शरीर के सभी अङ्गों में विशेष रूप से शरीर के मध्य में ज्वाला उत्पन्न होता है, वह ज्वाला न तो जल से ठंडा होता है, न ही औषधियों के सेवन से शान्त ही होता है ।।४८।।

सदा वातुलवत्सर्वं प्रत्यक्षे स्वप्नवद्भवेत् ।
वर्षमध्ये त्रिवर्षे वा मृत्युस्तस्य न संशयः ।।४९।।

वह हमेशा वातुलवत (अर्द्धविक्षिप्त) होकर प्रत्यक्ष में या स्वप्न में दृष्टिगोचर होता है, जिसके कारण से एक वर्ष या तीन वर्ष के भीतर में ही उसकी मृत्यु हो जाती है इसमें सन्देह नहीं ।।४९।।

अष्टविधमन्त्रच्छन्नदोषनाशोपाये देव्या जिज्ञासा

श्री चण्डिकोवाच

मन्त्रच्छन्नं चाष्टविधं तव वक्त्राच्छ्रुतं मया ।
यदि दैवाद्भवेद्देव तस्योपायं वदस्व मे ।।५०।।

श्रीचण्डिका बोलीं– मन्त्रों के जो आठ प्रकार के शोधन के नियम हैं, उसे भी आप हमें बताने की कृपा करें । यदि आप देवताओं के भी देवता हैं तो आप इस सम्बन्ध में अवश्य ही कहने की कृपा करें ।।५०।।

महादेवस्योपायकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

बहुजापात्तथा होमात्कायक्लेशादि विस्तरात् ।
यदि [1]भक्तिर्भवेद्देवि तस्य सिद्धिरदूरतः ।।५१।।

श्रीशङ्कर जी बोले– अधिक जप करने से और होमादि क्रिया करने से यदि मन में सन्देह हो जाये और देवताओं के प्रति श्रद्धा भी बनी रहे तो भी उसे सिद्धि नहीं मिलती ।।५१।।

गुरुणा तत्सुतेनैव साधकेन वरानने ।
[2]अक्षरे दूषणं हित्वा पुनर्मन्त्रं प्रकाशयेत् ।।५२।।

हे सुन्दरी ! तब साधक पुत्रवत् होकर गुरु के समीप जाता है और गुरु के द्वारा उसे मन्त्रों का शोधन करके पुनः मन्त्रों की प्राप्ति होती है ।।५२।।

---

[1] अभक्तिजन्यदोषशान्तिमाह : बहुजापादित्यादि (१)

[2] अक्षरभ्रान्तिजन्यदोषशान्तिमाह-गुरुणेत्यादि (२)

गुरुणा तत्सुतेनैव साधकेन समाहितः ।
[1]लुप्तवर्णं समुत्थाप्य पुनर्मन्त्रं प्रकाशयेत् ।।५३।।

साधक गुरु के समक्ष पुत्रवत् हो गुरु में ही समाहित हो जाता है और मन्त्रों का जो वर्ण लुप्त हो गया है या साधक उसे भूल गया है, तो उसे पुनः मन्त्रों की प्राप्ति होती है ।।५३।।

चक्रभेदेन षट्कोणं तथैव योनिमुद्रया ।
एकोच्चारे जपेन्मन्त्रं लक्षमेकं वरानने ।
गुर्वादिना महेशानि छिन्नदोषनिकृन्तनम्[2] ।।५४।।

योनि मुद्रा एवं षट्चक्र भेदन आदि क्रिया का सञ्चालन मन्त्र का एकमात्र लक्ष्य है । हे सुन्दरी ! अर्थात् हे गिरिजे ! हे महेशानि ! हे पार्वती ! गुरु द्वारा दिये गये मन्त्र छिन्न दोष से मुक्त करते हैं ।।५४।।

गुरुणा लक्षजापेन तन्मन्त्रं श्रावयेत् त्रिधा ।
दूषणं ह्रस्वदीर्घस्य[3] शान्तिश्चात्र न संशयः ।।५५।।

गुरु मन्त्र के जप का एकमात्र लक्ष्य है कि उसके द्वारा मन्त्रों का (सत्-रज-तम) तीनों विधाओं में सफलता और ह्रस्व-दीर्घ के उच्चारण से उत्पन्न भ्रान्ति की भी शान्ति होती है इसमें किसी तरह का सन्देह नहीं ।।५५।।

गुरुणा तत्सुतेनैव साधकेनैव शैलजे ।
उक्तमार्गेण देवेशि जपेल्लक्षचतुष्टयम्[4] ।।५६।।
तद्दशांश हुनेत्पश्चात्तर्पणादि समाचरेत् ।।५७।।

हे शैलजे ! कोई भी साधक गुरु के सामने पुत्रवत् होता है और इसी मार्ग से उपासना करने से अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है । जप के बाद उसका दसवां भाग हवन और हवन का दसवां भाग तर्पण तथा तर्पण का दसवां भाग मार्जन भी करना चाहिये ।।५७।।

ततोऽपि यदि नैवाभूत्साधकः स्थिरमानसः ।
चतुर्गुणं हि कर्त्तव्यं शिष्यस्य मुक्तिहेतवे ।।५८।।

साधक को हर स्थिति में स्थिर मन से शान्तचित्त होकर यह कार्य करना चाहिये और यही साधक के मुक्ति का लक्ष्य या हेतु भी है ।।५८।।

---

[1] लुप्तदोषशान्तिमाह-गुरुणा तदिति (३)

[2] छिन्नादोषशान्तिमाह-चक्रभेदेनेति (४)

[3] ह्रस्वदीर्घदोषशान्तिमाह-गुरुणेति (५-६)

[4] कथनदोषशान्तिमाह-गुरुणा तदिति (७)

यदि मृत्युर्भवेत्तस्य तथापि मुक्तिभाग् भवेत् ।
कथनस्य दोषशान्तिर्भवत्येवसन शयेः ।।५९।।

यदि इस क्रम में मृत्यु भी हो जाये तो भी उसे मुक्ति मार्ग की प्राप्ति होती है । यह कथनमात्र मन्त्रों के दोष एवम् शान्ति के सम्बन्ध में कहा गया है ।।५९।।

[1]स्वप्नेऽपि मन्त्रकथने श्मशाने चैव शैलजे ।
उक्तमार्गेण देवेशि जपेल्लक्षं चतुष्टयम् ।।६०।।

हे शैलजे ! यदि स्वप्न में मन्त्र कहा जाता है या श्मशान में मन्त्र कहा जाता है तो हे गिरिजे ! उसे उसी मार्ग से ही मन्त्र का जप करना चाहिये । इससे भी लक्ष्यों की प्राप्ति होती है ।।६०।।

तद्दशांशं हुनेत् पश्चात् तर्पणादि समाचरेत् ।
ततोऽपि यदि नैवाभूत्साधकः स्थिरमानसः ।।६१।।

प्राप्त मन्त्रों का जप, जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण और तर्पण का दशांश मार्जन करना चाहिये । इससे साधक के मन में स्थिरता होती है । इस कारण उसे शान्तचित्त होकर उसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिये ।।६१।।

चतुर्गुणं हि कर्त्तव्यं पूर्वोक्तं पूजनञ्चरेत् ।
कुजे वा शनिवारे वा प्रथमे गमनञ्चरेत् ।
सप्ताहं वा यजेद्देवीं तुरीयं वादिनं यजेत् ।।६२।।

हे देवि ! पूर्वोक्त रीति से कहे गये पूजा-अर्चना आदि का चौगुना ही करना चाहिये । गुरु के समक्ष पहली बार मंगलवार या शनिवार को ही जाना चाहिये और सप्ताह में एक दिन गुरु के समक्ष याचना करने के बाद ही उसे तुरीय वादन भी करना चाहिये ।।६२।।

श्मशानसाधनकथनम्

श्मशानसाधनं वक्ष्ये शृणु चैकाग्रचेतसा ।
स्वर्णं रौप्यं तथा वस्त्रं दत्त्वा वरणमाचरेत् ।।६३।।

हे सुन्दरी ! लाश पर बैठकर (मूर्दे के सीना पर) के ही श्मशान साधना करनी चाहिये । इसे एकाग्रचित्त होकर के सुनो । उसे सोने या चाँदी के आभूषण के साथ वस्त्र देकर ही उसका वरण करना चाहिये ।।६३।।

---

[1] स्वप्ने स्वीयमन्त्रप्रकाशजनितदोषशान्तिमाह-स्वप्नेऽपीति (८)

स्वर्णपीठं प्रदातव्यं चतुरङ्गुलिविस्तृतम् ।
भोगयोग्यं प्रदातव्यं मधुपर्कं यथोदितम् ।।६४।।

सोने का चार अङ्गुल लम्बा-चौड़ा पीठ निर्माण करने के बाद उसका पूजनादि करके नैवेद्य भी प्रदान करना चाहिये और अन्त में उसे मधुपर्क (मधु) भी देना चाहिये ।।६४।।

राजपत्नी येन तुष्टा तोषयेत् तेन वाससा ।
अलङ्कारं यथायोग्यं तत्र तत्र नियोजयेत् ।।६५।।

राजपत्नी (रानी) के समान उसका सम्मान करते हुए ही उसे यथायोग्य शृङ्गार सम्बन्धी सारी साम्रगी भी प्रदान करनी चाहिये ।।६५।।

नैवेद्यं विविधं रम्यं नानाद्रव्यसमन्वितम् ।
सामिषान्नं गुडं छागं सुरापिष्टक-पायसम् ।।६६।।

विविधप्रकार से तैयार किये स्वादिष्ट नैवेद्य आदि के साथ ही साथ बकरे का मांस, सुरा (मद्य) पिष्टक (चूर्ण) और गुड़ युक्त खीर भी अर्पण करना चाहिये ।।६६।।

भोग्यद्रव्यं जले दद्याद्यदि भोक्ता न तिष्ठति ।
एवं पूजां समाप्यादौ शिवपूजां समाचरेत् ।।६७।।

भोग द्रव्य के साथ-साथ जल भी अर्पण करना चाहिये ताकि वह पूर्णरूप से तृप्त (प्रसन्न) हो सके तथा पूजा समाप्ति के बाद पुन: शिव की पूजा भी करनी चाहिये ।।६७।।

षोडशैरुपचारैश्च लिङ्गानाञ्चैकविंशतिम् ।
अष्टोत्तरशतेनैव बिल्वपत्रैः सचन्दनैः ।।६८।।

एक्कीस शिवलिङ्ग बनाकर षोडषोपचार रूप (सोलह प्रकार) से पूजन करना चाहिये और साथ में चन्दन आदि के बाद १०८ विल्वपत्र भी चढ़ाना चाहिये ।।६८।।

[१]प्रत्येकं पूजयेन्मत्रं गजान्तकसहस्रकम् ।
सहस्रं होमयेत् पश्चाद्बिल्वपत्रैर्वरानने ।।६९।।

---

[१] प्रत्येकमित्यादि । एकविंशतिशिवलिङ्गानि सचन्दनाष्टोत्तरशतविल्वपत्रैः प्रत्येकं पूजयित्वा शिवषडक्षर-मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रं जपेत् । ततश्च साज्यविल्वपत्रैः सहस्रं जुहुयात् । विशेषेण कथनाद्दशांशबोधः । इति ।

[1]एवं कृते लभेच्छान्तिं दीर्घायुर्नात्र संशयः ।।७०।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे द्वादशः पटलः ।।१२।।

हे सुन्दरी प्रत्येक पूजा के बाद १००८ बार मन्त्रों का जाप करना चाहिये और १००८ बार हवन भी करना चाहिये इसके बाद बेलपत्र से भी हवन करना चाहिये । इस प्रकार करने से पूर्ण शान्ति होती है और साधक दीर्घायु भी होता है, इसमें सन्देह नहीं ।।६९-७०।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
बारहवाँ पटल समाप्त ।।१२।।

---

१. एवं कृत इति । अत्रापि स्वस्यासामर्थ्ये गुर्वादिनैतत् कारयितव्यमिति बोध्यम् ।

त्रयोदशः पटलः

मालाविषये देव्या जिज्ञासा, देवताविशेषे मालाविशेषकथनञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

शृणु नाथ परानन्द परापरजगत्पते ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि मालायाः कीदृशो जपः ।
का माला कस्य देवस्य तद्वदस्य समाहितः ।।१।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे परमानन्द देने वाले चराचर जगत्–स्वामी सुनिये ! माला के सम्बन्ध में मुझे सुनने की इच्छा है कि किसप्रकार के माला से किन–किन देवताओं का जाप किया जाता है, इसे भी आप हमें बताने की कृपा करें ।।१।।

श्रीशङ्कर उवाच

[1]वैष्णवे तुलसीमाला गजदन्तैर्गणेश्वरे ।
कालिकाया महामन्त्रं जपेद् रुद्राक्षमालया ।।२।।

श्रीशङ्कर जी बोले– वैष्णवों के लिये तुलसी की माला, गाणपत्यों के लिये हाथी–दाँत की माला और कालिका के महामन्त्रों का जप रुद्राक्ष की माला से करना चाहिये ।।२।।

[2]तारायाश्च जपेन्मन्त्री महाशङ्खाख्यमालया ।
महाशङ्खाख्यमालायां सर्वां विद्यां जपेत् सुधीः ।।३।।

---

[1] वैष्णव इत्यादि । अत्र प्रमाणम्— सुवर्णमणिभिर्मालां स्फाटिकीं शङ्खनिर्मिताम् । प्रवालैरेव वा कुर्यात् पुत्रजीवं विवर्जयेत् । पद्माक्षञ्चैव रुद्राक्षं भद्राक्षञ्च विशेषतः । रक्तचन्दनमाला तु भोगदा मोक्षदा भवेत् ।। वैष्णवे तुलसीमाला गजदन्तैर्गणेश्वरे । त्रिपुराया जपे शस्ता रुद्राक्षै रक्तचन्दनैः ।। इति मुण्डमालातन्त्रोक्तं संवदत्यत्र । तत्रापि मणिसंख्यामाह योगिनीतन्त्रे— मणिसंख्यां महादेवि मालायाः कथयामि ते । पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं पुष्ट्यै तु सप्तविंशतिः ।। त्रिंशद्भिर्धनसिद्धिः स्यात् पञ्चाशन्मन्त्रसिद्धये । अष्टोत्तरशतैः सर्वसिद्धिरेव महेश्वरि ।। ...दन्तमाला जपे कार्या गले धार्या नृणां शुभा । दशनैर्यदि कर्त्तव्या संख्या दन्तस्य ते प्रिये ।। इति ।

[2] ताराया इत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणं मुण्डमालायाम्— महाशङ्खमयी माला नीलसारस्वते विधौ । इति । ताराकल्पेऽपि— अचिराद् विहिता सिद्धिर्महाशङ्खाख्यमालया । महाशङ्खमयी माला ज्ञेया तारामनौ प्रिये ।। इति च ।
उक्तञ्च नित्यातन्त्रे प्रथमपटले— समाश्रित्य महाशङ्खमालां वीरपदं ब्रजेत् । इति । अत एव महेशानि अस्थिमाला गले मम । इति च । योगिनीतन्त्रे द्वितीयपटलेऽपि— वर्णमालाशुभा प्रोक्ता सर्वमन्त्रप्रदीपनी । तस्याः प्रतिनिधिर्देवि महाशङ्खमयी शुभा ।। महाशङ्खः करे यस्य तस्य सिद्धिरदूरतः । तदभावे वीरवन्द्ये स्फाटिकी सर्वसिद्धिदा ।। इति ।

तारा के मन्त्रों का जप महाशङ्ख की माला पर या फिर सभी महाविद्याओ के मन्त्रों का जप भी महाशङ्ख की माला से करनी चाहिये। यही सर्वश्रेष्ठ माला है ॥३॥

[1]अकस्माद्वै महासिद्धिः महाशङ्खाख्यमालया।
तथैव सकला विद्या महाशङ्खे वसेत् सदा ॥४॥

महाशङ्ख-माला से जप करने पर साधक को अकस्मात् सिद्धि प्राप्त होती है; क्योंकि समस्त महाविद्यायें महाशङ्ख में ही स्थायी रूप से निवास करती हैं ॥४॥

स्फाटिकी सर्वदेवस्य प्रवालैः सकलां जपेत्।
स्वर्णरौप्यसमुद्भूतां सर्वदेवेषु योजिताम् ॥५॥

स्फटिक-माला से या मूँगा-माला से भी सभी देवताओं के मन्त्रों का जप किया जा सकता है तथा सोने और चाँदी की माला से भी जप करने का विधान है ॥५॥

कालिकायाश्च सुन्दर्या रुद्राक्षैः प्रजपेत् सदा।
भैरव्याः प्रजपेन्मन्त्री शङ्खपद्माख्यया प्रिये ॥६॥

कालिका देवी तथा त्रिपुरसुन्दरी देवी का जप रुद्राक्ष की माला पर करना चाहिये तथा त्रिपुरभैरवी के मन्त्रों का जप महाशङ्ख की माला पर ही करनी चाहिये ॥६॥

[2]श्मशाने धुस्तुरैर्मालां जपेद्धूमावतीविधौ।
इति ते कथितं कान्ते महामालाविनिर्णयम् ॥७॥

धूमावती के मन्त्रों का जप धतुरे के बने माला से श्मशान में करना चाहिये। इस प्रकार हे देवि ! हे कान्ते ! यही माला के सम्बन्ध में कहा गया है ॥७॥

मालाग्रन्थिकथनम्

अथ [3]ग्रन्थिं प्रवक्ष्यामि शृणु कान्ते समाहिता।
येन माला सुसिद्धा च नृणां सर्वफलप्रदा ॥८॥

---

[1] अकस्मादित्यादि— अत्र च संवादि प्रमाणमुक्तं गुप्तसाधनतन्त्रे एकादशपटले— महाशङ्खाख्यमालायां यो जपेत् साधकोत्तमः। अणिमादिविभूतीनामीश्वरो नात्र संशयः ॥ ...यदि भाग्यवशाद्देवि महाशङ्खश्च लभ्यते। स सिद्धः स गणः सोऽपि स च विष्णुर्न संशयः ॥ तदैव सहसा सिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा ॥ इति।

[2] श्मशान इत्यादि— अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं मुण्डमालातन्त्रे— श्मशानधुस्तुरैर्माला ज्ञेया धूमावतीविधौ। इति।

[3] अथ ग्रन्थिमित्यादि— ग्रन्थौ सूत्रादिनियममप्याह सनत्कुमारतन्त्रे— कार्पाससम्भवं सूत्रं धर्म्मकामार्थमोक्षदम्। तच्च विप्रेन्द्रकन्याभिर्निर्मितञ्च सुशोभनम् ॥ श्वेतं रक्तं तथा कृष्णं

.....क्रमशः

हे सुन्दरी ! सुनो, अब मैं माला में प्रयोग होने वाले धागों के सम्बन्ध में कह रहा हूँ उसे भी ध्यानपूर्वक सुनो । इस प्रकार से माला सभी प्रकार से सभी सिद्धियों और शुभ फलों को देने वाला है ।।८।।

[१]मालायाश्चाधिका कान्ते ग्रन्थिश्चैका फलप्रदा ।
एकपञ्चाशिकायाञ्च मालायां परमेश्वरि ।।९।।

हे सुन्दरी ! अब माला में दिये जाने वाले गाँठ के सम्बन्ध में भी कहा जा रहा है जो उत्तम फलों को देनेवाला है । हे परमेश्वरी ! माला में एक से अधिक गाँठ ज्यादा शुभ फल देता है ।।९।।

ब्रह्मग्रन्थियुतां मालां सार्द्धद्वितयवेष्टिताम् ।
सपादवेष्टनं देवि नागपाशं मनोहरम् ।।१०।।

ब्रह्म ग्रन्थि से युक्त माला के एक-एक दाने पर ढाई गाँठ देना चाहिये । हे देवि ! एक-एक दाने पर ढाई-ढाई गाँठ देने से वह माला नाग-पाश के समान ही मनोहर होता है ।।१०।।

सर्वदेवस्य मालायां सर्वत्र परमेश्वरि ।
ब्रह्मग्रन्थिं विधायेत्थं नागपाशमथापि वा ।।११।।

हे परमेश्वरी ! सभी देवों के लिये नाग पाश से गूँथा हुआ माला का ही जप में प्रयोग करने का विधान है और यही सर्वोत्तम भी है ।।११।।

पट्टसूत्रमथापि च । शान्तिवश्याभिचारेषु मोक्षैश्वर्यजयेषु च ।। शुक्लं रक्तं तथा पीतं कृष्णं वर्णेषु च क्रमात् । सर्वेषामेव वर्णानां रक्तं सर्वेप्सितिप्रदम् ।। त्रिगुणंत्रिगुणीकृत्य ग्रथयेच्छिल्पशास्त्रतः । एकैकं मातृकावर्णं सतारं प्रजपन् सुधीः ।। मालामादाय सूत्रेण ग्रथयेन्मध्यमध्यतः । ब्रह्मग्रन्थिं विधायेत्थं मेरुञ्च ग्रन्थिसंयुतम् ।। ग्रंथयित्वा पुरी मालां ततः संस्कारमारभेत् ।। एकवीराकल्पे च— मातृकावर्णतो ग्रन्थिं विद्यया वाथ कारयेत् । सुवर्णादिगुणैर्वापि ग्रथयेत् साधकोत्तमः ।। इति ।।

ग्रन्थिनियमश्च एकवीराकल्पे— ब्रह्मग्रन्थिं ततो दद्यान्नागपाशमथापि वा । इति । छन्दःसारेऽपि: त्रिरावृत्तिग्रन्थिकेन तथार्धेन विधीयते । सार्द्धद्वयावर्त्तनेन ग्रन्थिं कुर्याद्यथा दृढम् ।। कालिकापुराणे च— ब्रह्मग्रन्थियुतं कुर्यात् प्रतिबीजं यथास्थितम् । अथवा ग्रन्थिरहितं दृढरज्जुसमन्वितम् ।। एवं निर्माय मालां वै शोधयेन्मुनिसत्तम ।। इति ।

मालाया इत्यादि— माला कीदृशी कर्त्तव्या इत्यपेक्षायामुक्तं गुप्तसाधनतन्त्रे एकादशपटले— गोपुच्छसदृशीं कुर्यादथवा सर्परूपिणीम् । स्थूला सूक्ष्मा च पर्यन्तं क्रमेण ग्रथनञ्चरेत् ।। मूलेन ग्रथनं कार्यं प्रणवेनाथवा प्रिये । ब्रह्मग्रन्थिं प्रयत्नेन दद्यात् साधकसत्तमः ।। सूत्रद्वयं परेशानि मिलितं कारयेत् ततः । मेरुञ्च ग्रथनं कार्यं तदूर्ध्वं ग्रन्थिसंयुतम् ।। समीपे गुरुदेवस्य संस्कारमाचरेत् सुधीः । स्थूलावधि जपेन्मन्त्रं सूक्ष्मभागे समापयेत् पुच्छावधि जपाद्देवि सिद्धिहानिः प्रजायते । इति ।

मालायां त्वधिकां देवि चैकां ग्रन्थिं प्रदापयेत् ।
मूलेन ग्रथितं कुर्यात् प्रणवेनाथवा प्रिये ।।१२।।

हे देवि ! हर स्थिति में माला में एक से अधिक गाँठ देना ही चाहिये और मूल में भी गाँठ दे; क्योंकि यही माला का प्रणव भी है ।।१२।।

ग्रन्थिमध्ये च गुटिकां कुर्यादतिमनोहराम् ।
सूत्रद्वयं महेशानि मिलनं कारयेत्ततः ।।१३।।

ग्रन्थि के मध्य में एक गुटिका भी होना ही चाहिये; क्योंकि यह दो धागों का मिलन है जो सबसे ज्यादा कारगर होता है । यह आत्मा से परमात्मा के मिलन के सदृश्य फल देनेवाला है ।।१३।।

[1]मेरुञ्च ग्रथनं कुर्यात्तदूर्ध्वे ग्रन्थिसंयुतम् ।
एवं मालां विनिर्माय गोपयेद्बहुयत्नतः ।।१४।।

सुमेरु पर जो गाँठ दिया जाता है वह ऊपर के गाँठ को जोड़ने वाला होता है । इसके अतिरिक्त माला-निर्माण के समय पूर्णरूप से गोपनीयता भी बरतनी चाहिये ।।१४।।

मालाजपे कम्पनादौ दोषकथनम्

[2]कम्पनं धूननं शब्दं नैव तत्र प्रकाशयेत् ।
करभ्रष्टं तथा छिन्नं महाविघ्नस्य कारणम् ।।१५।।

---

[1] मेरुञ्चेत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणम् एकवीराकल्पे— कवचेनाथ बध्नीयान्मालां ध्यानपरायणः । सर्वशेषं ततो मेरुं सूत्रद्वयसमन्वितम् ।। ग्रथयेत्तारयोगेण बध्नीयात् साधकोत्तमः । इति । गौतमीये चः मुखे मुखञ्च संयोज्य पुच्छे पुच्छञ्च योजयेत् । गोपुच्छसदृशी माला यद्वा सर्पाकृतिर्भवेत् ।। मुखपुच्छनियमश्च छन्दःसारे— रुद्राक्षस्योन्नतं प्रोक्तं मुखं पुच्छन्तु निम्नगम् । कमलाक्षस्य सूक्ष्मांशं सबिन्दुद्वितयं मुखम् ।। सबिन्दुकस्य स्थूलांशं पुच्छं श्लक्ष्णमिति स्थितम् । एवं ज्ञात्वा मुखं पुच्छं रुद्राक्षाम्भोरुहाक्षयोः ।। तत्सजातीयमेकाक्षं मेरुत्वेनाग्रतो न्यसेत् । एकैकं मणिमादाय ब्रह्मग्रन्थिं प्रकल्पयेत् ।। एकैकं मातृकावर्णं ग्रथनादौ तु संजपेत् ।। इति ।

[2] कम्पनमित्यादि— अत्र संवादि प्रमाणन्तु मालाशोधनमधिकृत्योक्तं योगिनीहृदये— होमकर्म ततः कुर्याद्देवताभावसिद्धये । अष्टोत्तरशतं हुत्वा सम्पाताज्यं विनिक्षिपेत् ।। होमकर्मण्यशक्तश्चेद् द्विगुणं जपमाचरेत् । नान्यमन्त्रं जपेन्मन्त्री कम्पयेन्न विधूनयेत् ।। कम्पनात् सिद्धिहानिः स्याद् धूननं बहुदुःखदम् । शब्दे जाते भवेद्रोगः करभ्रष्टा विनाशकृत् ।। छिन्ने सूत्रे भवेन्मृत्युस्तस्माद् यत्नपरो भवेत् । जपान्ते कर्णदेशे वा उच्चदेशेऽथवा न्यसेत् ।। इति । कम्पनं जपकर्त्तुः शरीरस्य, धूननं मालाया इति केचिद् व्याचक्षते ।

जप के समय शरीर में कम्पन होना या झूमना या शब्दों का उच्चारण आदि करना आदि भी प्रकाश में नहीं आना चाहिये तथा अङ्गुली के हेर-फेर से भी छिन्न हो जाने से भी भयङ्कर दोष उत्पन्न होता है ॥१५॥

कम्पने सिद्धिहानिः स्याद्धूननं बहुदुःखदम् ।
शब्दे जाते भवेद्रोगः करभ्रष्टाद्विनाशकृत् ॥१६॥

कम्पन से सिद्धि की हानि होती है तो झुमने से महादुःख होता है। शब्द के उच्चारण से प्रवाह छिन्न होने पर महारोग उत्पन्न होता है और अङ्गुलियों के या हाथ के हेर-फेर से दोनों पक्षों से हानि होती है ॥१६॥

छिन्नसूत्रे भवेन् मृत्युस्तस्माद्यत्नपरो भवेत् ।
एवं ज्ञात्वा महेशानि शान्तिस्वस्त्ययनं चरेत् ॥१७॥

माला के धागा टूटने से मृत्यु आदि का भय होता है और सारा किया गया प्रयास निष्फल हो जाता है। इस कारण से हे परमेश्वरी ! उस समय शक्ति की शान्ति पाठ करना चाहिये ॥१७॥

कम्पने यो जपेन्मत्रं यदि सिद्धिं प्रयच्छति ।
यत्नेन गुरुमानीय द्वाविंशदुपचारतः ॥१८॥

मन्त्र जप के क्रम में यदि कम्पन हो जाये और सिद्धि की भी इच्छा हो तो यत्नपूर्वक गुरु को बुलाकर या गुरु के समीप जाकर बाइस प्रकार से पूजा-अर्चना आदि करना चाहिये ॥१८॥

दोषे जाते शान्तिकथनम्

कुम्भस्थापनकं कृत्वा पूजयेदिष्टदेवताम् ।
ततो हुनेद्बिल्वपत्रैरष्टोत्तरशताहुतिम् ॥१९॥

इसके लिये विधिवत् रूप से कलश स्थापन करके अपने इष्ट देवता की पूजा करनी चाहिये। पूजा के बाद विधिवत् रूप से हवन-तर्पण और मार्जन आदि भी करना चाहिये ॥१९॥

त्रिमध्वक्तेन विधिना धूननेऽपि च सुन्दरि ।
सशब्दे जपने चण्डि ह्येवं कुर्याद्विचक्षणः ॥२०॥

हे सुन्दरी ! त्रिमध्वायुक्त [इक्षु रस (ईख)-मधु और दूध] सामग्री से तथा विविध प्रकार के हवन सामग्री मिला करके ही हवन करना चाहिये, पश्चात् चण्डी मन्त्र का जप भी करना चाहिये। ज्ञानी साधक यही करते हैं ॥२०॥

[1]करभ्रष्टे तथा छिन्ने पुरश्चरणमाचरेत् ।
जपाद्यन्ते यजेद्देवीं षोडशैरुपचारकैः ।। २१ ।।

हे देवि ! हाथ से माला छूट जाने पर या धागा टूट जाने पर पुनः पुरश्चरण करना चाहिये और अन्त में षोडषोपचार पूजन भी अवश्य ही करना चाहिये ।।२१।।

प्रत्यहं प्रजपेन्मन्त्रं प्रत्यहं बलिदानकम् ।
पञ्चाङ्गस्य प्रमाणेन सर्वकर्म समापयेत् ।। २२ ।।

पूजा के बाद पुनः मन्त्र का जप करना चाहिये, जप के बाद पुनः बलिदान करना चाहिये । ये सारे कार्य पञ्चाङ्गों में दिये गये निर्देशों के अनुसार ही विधिपूर्वक करना चाहिये ।।२२।।

दरिद्रस्य विशेषः

दरिद्रः परमेशानि यदि विघ्नपरायणः ।
आद्यन्ते महतीं पूजां [2]दिक्सहस्रं जपेन्मनुम् ।। २३ ।।

यदि साधक गरीब है और आर्थिक दृष्टि से सक्षम नहीं है अर्थात् तमाम तरह के परेशानियों से घिरा हुआ है तो उसे पूजा के अन्त में हवन के बदले १०००० मन्त्र जप ही करना चाहिये ।।२३।।

---

१. करभ्रष्ट इत्यादि— अत्र-जीर्णे सूत्रे पुनः सूत्रं ग्रथयित्वा शतं जपेत् । प्रमादात् पतिता हस्ताच्छतमष्टोत्तरं जपेत् । जपेन्निषिद्धसंसर्गे क्षालयित्वा यथोदितम् । इति वैशम्पायनसंहितोक्तप्रमाणम् । छिन्ने सूत्रे पुनः सूत्रं ग्रथयित्वा शतं जपेत् । इति कुब्जिकातन्त्रोक्तप्रमाणञ्चोपजीव्य यदुक्तं तन्त्रसारकृता 'छिन्नेऽपि अष्टोत्तरशतजपः कार्यः, करभ्रष्टच्छिन्नयोस्तुल्यत्वादिति', तत्तु ग्रन्थमेतमनालोच्यैवेति सुधीभिश्चिन्तनीयम् । पुरश्चरणमिति । — पुरश्चरविधिप्रोक्तस्तन्त्रसारे— "कुलार्णवे ...एवं जपं पुरा कृत्वा गन्धाक्षतकुशोदकैः । जपं समर्पयेद्देव्या वामहस्ते विचक्षणः ।। जपान्ते प्रत्यहं मन्त्री होमयेत् तद्दशांशतः । तर्पणञ्चाभिषेकञ्च तत्तद्दशांशतो मुने ।। प्रत्यहं भोजयेद् विप्रान् न्यूनाधिकप्रशान्तये ।। तथा होमाद्यशक्तौ च योगिनीहृदये : होमकर्मण्यशक्तानां विप्राणां द्विगुणो जपः ।" इत्यादिना । गन्धर्वतन्त्रेऽष्टाविंशतिपटले च...जपसंख्यादशांशतः । यथोक्तविहिते कुण्डे जुहुयात्संस्कृतेऽनले ।। अथवा प्रत्यहं जप्त्वा जुहुयात्तद्दशांशतः । तथा होमदशांशन्तु जले सम्पूज्य देवताम् ।। तर्पयामीति मन्त्रान्ते प्रोक्ताभिर्मूर्द्धि तर्पयेत् । जपो होमस्तर्पणञ्च पूजा ब्राह्मणभोजनम् ।। पूर्वपूर्वदशांशेन कुर्यात् पञ्चाङ्गसंयुतम् । स्वाभिषेकाघमर्षौ च सूर्यार्घ्यं जलपानकम् । प्राणायामं ततः कुर्यात् पूर्वपूर्वदशांशतः । दशाङ्गोपासनं भक्त्या पुरश्चरणमुच्यते ।। तत् पुरश्चरणं नाम मन्त्रसिद्ध्यर्थमात्मनः । यथोक्तं नियमं कृत्वा स्वकल्पोक्तजपस्य च ।। करणं विजयान्तं तत् प्रोक्तं देशिकसत्तमैः । तदन्ते महतीं पूजां कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम् ।। गुरुं सन्तोषयेदेवं मन्त्रः सिद्ध्यन्ति मन्त्रिणः । होमकर्मण्यशक्तानां विप्राणां द्विगुणो जपः ।। इति ।

२. दिक्सहस्रमिति : दशसहस्रमित्यर्थः ।

[1]सहस्रैकं हुनेत् पश्चात् सर्वविघ्नस्य शान्तये ।
कुम्भतोयैः स्नापयित्वा पुनर्मालां प्रदापयेत् ।।२४।।
अनेनैव विधानेन विघ्नजालैः न लिप्यते ।।२५।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे त्रयोदशः पटलः ।।१३।।

जप के बाद १००० हवन करने से सभीप्रकार के उपद्रव शान्त होते हैं, कलश के जल से स्नान करने के बाद ही पुनः दूसरा माला प्राप्त करना चाहिये । अन्य किसी प्रकार के विघ्न जाल भी यदि उपस्थित हो जाये तो भी नहीं उठना चाहिये ।।२४-२५।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
तेरहवाँ पटल समाप्त ।।१३।।

---

[1] सहस्रैकमिति : अत्रापि होमाद्यशक्तौ होमसंख्याद्विगुणजपादिकं कर्त्तव्यमिति बोध्यम् ।

चतुर्दशः पटलः

देव्या भोगविषये प्रश्नः

श्रीचण्डिकोवाच

मन्त्रधारणमात्रेण तत्क्षणे तन्मयो भवेत् ।
जीवात्मा कुण्डलीमध्ये प्रदीपकलिका यथा ।।१।।

श्रीचण्डिका बोलीं– मन्त्र धारण मात्र से ही सारा शरीर मन्त्रमय हो जाता है और कुण्डलीनि के मध्य में जो जीवात्मा है वह काली के समान जागृत हो जाता है ।।१।।

त्रिविधभोगकथनम्

निजेष्टदेवतारूपा देहसंस्था च कुण्डली ।
भुज्यते सैव देहस्था का चिन्ता साधकस्य च ।
तन्मे ब्रूहि महादेव यद्यहं तव वल्लभा ।।२।।

हे महादेव ! कुण्डलिनी शक्ति के मध्य जो जीवात्मा है, वही इष्टदेवतारूप में विराजमान है और वही साधक के समस्त चिन्ताओं का भक्षण करते हुए शरीर में ही निवास करता है । हे प्राणवल्लभ ! इस सम्बन्ध में बताने की कृपा करें ।।२।।

दिव्यभोगकथनम्

श्रीशङ्कर उवाच

भोगस्तु त्रिविधो देवि दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
निर्लिप्तो दिव्यभावस्थः कुण्डली भुज्यते यदि[१] ।।३।।

श्रीशङ्कर जी बोले– भोग की तीन अवस्थायें हैं— दिव्यभोग, वीरभोग्य और पशुभोग्य । कुण्डलिनी निर्लिप्त भाव से (निर्विकार भाव से) केवल दिव्य भोग का ही भक्षण करती है ।।३।।

---

[१] भोगस्त्वित्यादि— रुद्रयामले षष्ठपटले भावत्रयमुक्तमनुलोमक्रमेण, यथा— आदौ भावं पशोः कृत्वा पश्चात् कुर्यादवश्यकम् । वीरभावं महाभावं सर्वभावोत्तमोत्तमम् ।। तत्पश्चादतिसौन्दर्यं दिव्यभावं महाफलम् । कुर्याद्भावत्रयं दिव्यं भावसाधनमुत्तमम् ।। इति । अत्र च भावस्य प्रातिलोम्येन कथनेऽपि क्रमशब्दोपादानं भोगस्य क्रमापकर्षज्ञापनार्थम् । तथाच दिव्यभावे सर्वोत्कर्षेण भोगः, ततः क्रमेण तस्य ह्रास इति सुधीभिर्विवेच्यम् ।।

वीरभोगकथनम्, पशुभोगकथनम्

अजिह्वान्ता कुण्डलिनी वीरस्य वीरवन्दिते ।
महादेव्याः प्रीतये च प्रसादं भुज्यते पशुः ।।४।।

कुण्डलिनी शक्ति की अनन्त जिह्वायें हैं, जिसका कि वीरभाव के उपासक लोग वन्दना करते हैं और महादेवी प्रेम के कारण वह पशुभाव के प्रसाद को भी ग्रहण कर लेती हैं ।।४।।

दिव्य-वीरभावगतिश्च

द्विजातेर्दिव्यभावश्च सदा निर्वाणदायकः ।
विप्रो वीरश्च निर्वाणी भवत्येव न संशयः ।।५।।

श्रेष्ठ वर्णों के लिये दिव्यभाव सदैव निर्वाण (मुक्ति) दायक होता है, जिसके कारण से ब्राह्मण तथा वीरभाव के उपासक मुक्ति प्राप्त करते हैं, इसमें किसीतरह का सन्देह नहीं है ।।५।।

सायुज्यादिमोक्षाधिकारिणः, पशुभावगतिश्च

सायुज्यादि महामोक्षं नियुक्तं क्षत्रियादिषु ।
पशुना भक्तियुक्तेन प्रसादं भुज्यते यदि ।।६।।

क्षत्रियों को भी सामीप्यता और मुक्ति दोनों ही प्राप्त होती है । पशुभाव (मूर्ख) वाले भी यदि भक्तियुक्त होकर प्रसाद ग्रहण करें तो उन्हें भी सायुज्यता (समीपता) और मुक्ति भी मिलती है ।।६।।

स्वर्गभोगो भवत्येव मरणे नाधिकारिता ।
जन्मान्तरमवाप्नोति महादेव्याः प्रसादतः ।।७।।

साधक को मृत्यु के बाद स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा महादेवी की कृपा से जन्म-जन्मान्तर तक यह निकटता बनी रहती है ।।७।।

[१]दिव्यवीरमते दृष्टिर्जायते नात्र संशयः ।
दिव्यवीरप्रसादेन निर्वाणी नात्र संशयः ।।८।।

---

[१] दिव्यवीरेत्याति । दिव्यस्य वीरस्य च लक्षणमुक्तं कामाख्यातन्त्रे चतुर्थपटले— दिव्यः सर्वमनोहारी मितवादी स्थिरासनः । गभीरः श्लिष्टवक्ता च शतावधानकः सुखी ।। गुरुपादाम्बुजे भीरुः सर्वत्र भयवर्ज्जितः । सर्वदर्शी सर्ववक्ता सर्वदुष्टनिवारकः ।। सर्वगुणान्वितो दिव्यः सोऽहं किं बहुवाक्यतः ।। इति । निर्भयो भयदो वीरो । गुरुभक्तिपरायणः । वाचालो बलवाञ्छुद्धः पञ्चतत्वे सदा रतिः ।। महोत्साहो महाबुद्धिर्महासाहसिकोऽपि च । महाशयः सदा देवि साधूनां पालने रतः ।। तमोमयः सदा वीरो विनयेन महोत्सुकः । एवं बहुगुणैर्युक्तो वीरो रुद्रः स्वयं प्रिये ।। इति च ।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि वीरभाव के उपासक को दिव्यदृष्टि भी प्राप्त होती है और वीरभाव के उपासकों को मोक्ष भी प्राप्त होता है ।।८।।

[१]प्रसादभोगी यो देवि स पशुर्नात्र संशयः ।
मरणे नाधिकारोऽस्ति पशुभावस्थितस्य च ।।९।।
नैव मुक्तिर्भवेत्तस्य जन्म चाप्नोति निश्चितम् ।।१०।।

हे देवि ! यदि पशुभाव वाले साधक भी प्रसाद ग्रहण करें तो मृत्यु के बाद उनमें पशुभाव की स्थिति भी समाप्त हो जाती है, लेकिन पशुभाव वाले कर्त्ता को मुक्ति नहीं मिलती और उसे पुनः जन्म लेना ही पड़ता है यह भी निश्चित है ।।९-१०।।

देव्या दिव्यवीरलक्षणजिज्ञासा

श्रीचण्डिकोवाच

वद मे परमेशान दिव्यवीरस्य लक्षणम् ।
यत्कृते दिव्यवीरस्य महामुक्तिर्भविष्यति ।।११।।

श्रीचण्डिका बोलीं– हे परमेश्वर ! कृपा करके हमें दिव्यभाव और वीरभाव के लक्षणों का वर्णन करते हुए यह बताने की कृपा करें कि दिव्यभाव और वीरभाव वाले उपासकों को महामुक्ति कैसे मिलती है ।।११।।

महादेवस्य वारुणीप्रशंसा, तन्मुखेन दिव्यवीरलक्षणकथनञ्च

श्रीशङ्कर उवाच

साक्षाद् ब्रह्ममयी देवी चाभिशप्ता च वारुणी ।
शापमोचनमात्रेण ब्रह्मरूपा सुधा परा ।।१२।।

श्रीशङ्कर जी बोले– देवी साक्षात् ब्रह्ममयी होने पर भी अभिशप्त हैं तथा साथ ही साथ वारुणी देवी भी अभिशप्त हैं। शापविमोचन होने से ही वह साक्षात्-सुधामयी (अमृतमयी) हो जाती हैं ।।१२।।

निवेदनान्महादेव्यै तत्तद्देवी भवेत् किल ।
मूलाधारात्कुण्डलिनीमाजिह्वान्तां विभावयेत् ।।१३।।

महादेवी के प्रसन्न होने पर ही देवी प्रसन्न होती हैं, मूलाधार में स्थित जो कुण्डलिनी शक्ति है, वह अपनी जिह्वा खोल देती है ।।१३।।

---

[१] प्रसादेत्यादि । अत्र संवादि प्रमाणमुक्तं कामाख्यातन्त्रे चतुर्थपटले— य उक्तः पशुभावो हि कलौ कस्तस्य पालकः । पञ्चतत्वं न गृह्णाति तत्र निन्दां करोति न ।। शिवेन गदितं यत्तु तत्सत्यमिति भावयन् । ...यदि चंक्रमणे शक्तः खडगधारे सदा नरः पश्वाचारं सदा कुर्यात् किन्तु सिद्धिर्न जायते ।। इत्यादि ।

तन्मुखे दानमात्रेण ज्ञानवान् साधको भवेत् ।
यथैव कुण्डली देवी देहमध्ये व्यवस्थिता ।।१४।।

कुण्डलिनी के मुख को खोलकर ही ज्ञानी पुरुष साधक बन जाते हैं और वही कुण्डलिनी शक्ति जो शरीर में अवस्थित है वही सारे शरीर को अपने में ही व्यवस्थित कर लेती है ।।१४।।

तथैव वारुणीं ध्यायेत् कलाङ्गे स्वेष्टदेवताम् ।
कुण्डल्या समभावेन शक्तिवक्त्रे[1] प्रदापयेत् ।।१५।।

अत: सर्वप्रथम वारुणीदेवी का ध्यान करना चाहिये पश्चात् उसके बाद सम्पूर्ण कलाओं से परिपूर्ण अपने इष्टदेवता का ध्यान करना चाहिये ।।१५।।

आत्मोच्छिष्टं महापूतं तन्मुखात् परमामृतम् ।
अवश्यमेव गृह्णीयात् तादात्म्येन वरानने ।।१६।।

हे सुन्दरी ! आत्मा से त्यागा हुआ वह वही महापूत है, जिसके मुख में ही अमृत का निवास है । निश्चित रूप से वही (अमृत) निवास करके आत्मा-परमात्मा के तारतम्य को जोड़ता है ।।१६।।

उत्सृष्टादिविचारोऽपि कदाचिन्नास्ति ब्रह्मणि ।
गङ्गातोयं परं ब्रह्म प्रसादं कस्य तद्वद ।।१७।।

उसीके द्वारा विचारों की भी उत्पत्ति होती है और उसमें भी ब्रह्मशक्ति का भी निवास रहता है । जिस प्रकार गङ्गाजल परंब्रह्म का प्रसाद स्वरूप है, उसी प्रकार वह भी है ।।१७।।

गङ्गासागरतोयं वा प्रसादं कस्य वा भवेत् ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तज्जले स्नानमात्रतः ।।१८।।

हे देवि ! सुनो, जो फल गङ्गासागर में स्नान मात्र से होता है, वही फल उसके जल एवं प्रसाद से भी होता है ।।१८।।

मुक्तिभागी भवेन्मर्त्यः स्नानावगाहनात् किल ।
पादादिमस्तकान्तं वै स्नानकाले प्रमज्जति ।।१९।।

---

[1] शक्तिवक्त्रे इति । अत्र विशेषस्तु निरुत्तरतन्त्रे पञ्चमपटले— निजशक्तिं विना देवि शक्त्युच्चिष्टं पिबेद् यदि । रौरवे नरके घोरे यावदिन्द्राश्चतुर्दश ।। एकासने वसेद् यस्तु भुञ्जीत चैकभाजने । परस्परमुखस्पर्शे स याति नरकं ध्रुवम् ।। एकासनस्थो यो वीरो दिव्यो वा कलसुन्दरि ।। सुधां पीत्वा वीरचक्रे रौरवं नरकं व्रजेत् ।। महासिद्धीश्वरो वापि भुङ्क्ते पीत्वा परस्परम् । सिद्धिहानिं पुरस्कृत्य स याति नरकं ध्रुवम् ।। विना शक्तिं पिबेद् द्रव्यं वीरो गुरुपरायणः । तथापि नरके घोरे पतत्येव न संशयः । शक्त्यभावे कुलेशानि तद् द्रव्यं जलतः क्षिपेत् । गुर्वभावे च तद् द्रव्यं जलतो विनिवेदयेत् । इति ।।

मोक्षार्थी (मोक्ष चाहनेवाले) साधक गङ्गा स्नान करके मृत्यु को भी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करते हैं। वे स्नान करते समय गङ्गा के पद-धूली को मस्तक पर रख लेते हैं ।।१९।।

पादस्पर्शो न दोषाय परंब्रह्मणि शैलजे।
परमात्मनि लीने च थैव परमेश्वरि ।।२०।।

हे शैलजे ! हे परमेश्वरी ! ऐसे साधकों का पैर स्पर्श करने में कोई दोष नहीं है; क्योंकि वे परंब्रह्म परमात्मा में लीन हो जाते हैं ।।२०।।

इति ते कथितं देवि दिव्यवीरस्य लक्षणम्।
वीरतन्त्रे च कथितं माहात्म्यं प्राणवल्लभे ।।२१।।

हे देवी ! इसप्रकार दिव्यभाव और वीरभाव के लक्षणों को कहा। हे प्राण प्रिये ! इसका माहात्म्य वीरतन्त्र में कहा गया है ।।२१।।

साधिकालक्षणम्, प्रकारभेदः, गुरुपूजाप्रकारः, गुरुपूजाऽकरणे दोषश्च

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि साधिकायाश्च लक्षणम्।
दिव्यशक्ति-र्वीरशक्ति-र्गुरुशक्तिस्तथा परा ।।२२।।

हे देवि ! साधिकाओं के लक्षण को भी सुनिये। दिव्यभाव उपासिका, वीरभाव उपासिका और गुरु-पत्नी साक्षात् आदिपराशक्ति हैं ।।२२।।

कुलशक्तिः कामिनी च नवशक्तिः कुमारिका।
श्रीगुरुं पूजयेद्भक्त्या स्वदेहदानपूर्वकम् ।।२३।।

कुलशक्ति, कामिनी और कुमारी आदि नवशक्तियाँ हैं। साधकों को चाहिये कि वह भक्तिपूर्वक गुरुपूजा कर अपने आपको उनमें ही समर्पण करें ।।२३।।

अन्यथा तु स्वदेहस्य निग्रहो जायते ध्रुवम्।
सप्तजन्मनि सा देवी पुक्कसी पतिवर्ज्जिता ।।२४।।

अथवा अपने शरीर का विग्रह करके भी लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है। वह सात जन्मों तक अपनी इच्छानुसार अपने स्वामी को प्राप्त करती है ।।२४।।

विशेषविधिनिषेधाः

शिवं मत्वा स्वकान्तञ्च पूजासाधनमाचरेत्।
कदाचिन्न यजेच्चान्यं पुरुषं परमेश्वरि ।।२५।।

हे परमेश्वरि ! शैवमत से अपने पति के साथ ही शान्तिपूर्वक पूजा-अर्चना करनी चाहिये और किसी अन्य पुरुष को कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिये ।।२५।।

अन्यस्य यजनाच्चण्डि सर्वनाशो भवेद् ध्रुवम् ।
कान्तस्यायुर्विहीनत्वं विपत्तिश्च पदे पदे ।।२६।।

परपुरुष वरणकरने वाली साधिका चण्डी के क्रोध से निश्चित ही सर्वनाश को प्राप्त होती हैं । उसका पति भी अल्पायु हो जाता है तथा उसे पग-पग पर विपत्तियों का सामना करना पड़ता है ।।२६।।

धननाशो भवेन्नित्यं देव्याः क्रोधश्च जायते ।
अवश्यं पूजयेन्नित्यं गुरुदेवं सनातनम् ।।२७।।

देवी के क्रोध से दिन-प्रतिदिन धन का नाश होता है । अत: साधक एवं साधिका को नित्यप्रति अपने गुरुदेव की ही पूजा करनी चाहिये और यही सनातन भी है ।।२७।।

भद्रा-भद्रविचारं च या करोति गुरुस्थले ।
तस्या मन्त्रं क्रोधयुक्तं विपत्तिश्च पदे पदे ।।२८।।

जो साधक गुरु-स्थान (गुरु के समक्ष) में जाकर शुभ-अशुभ का विचार करता है, उसे मेरे क्रोधयुक्त मन्त्र से पग-पग पर विपत्ति का ही सामना करना पड़ता है ।।२८।।

वरं जनमुखान्निन्दा वरं प्राणान् परित्यजेत् ।
तथापि पूजयेद्देवं साक्षान्निर्वाणदायकम् ।।२९।।
सदा भयञ्च कापट्यं वर्जयेद् गुरुपूजने ।।३०।।

वरण किये गये गुरु की निन्दा नहीं करनी चाहिये एवं न सुननी ही चाहिये, भले ही प्राण त्यागना क्यों न पड़े, वल्कि पूजन करना चाहिये;.क्योंकि वही निर्वाण (मोक्ष) देनेवाला है । गुरुपूजन के समय किसीप्रकार का भय एवं कपट नहीं करना चाहिये ।।२९-३०।।

श्रीगुरोस्तेजसं भक्त्या यदि धारणमाचरेत् ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं काशी सा नात्र संशयः ।।३१।।

साधक भक्तिपूर्वक गुरु के तेज (शक्ति) को धारण करते हुए उसके अनुरूप आचरण करता है तो सत्य-सत्य और सत्य से भी सत्य कहा गया है कि उसे काशीतीर्थ के समान फल प्राप्त होता है इसमें किसीतरह का सन्देह नहीं करना चाहिये ।।३१।।

अभक्त्या परमेशानि यदि धारणमाचरेत् ।
जप-पूजादिकं तस्याः सन्दहेत् तेन तेजसा ।।३२।।

हे परमेश्वरी ! यदि अभक्त भी पूजन–अर्चन आदि करता है तो उसका भी सन्देह पूजा आदि कर्म के बाद स्वत: ही समाप्त हो जाता है ।।३२।।

देव्या गुरुपूजाप्रकारे प्रश्नः, तत्र महादेवस्योत्तरञ्च

श्रीचण्डिकोवाच

सपत्नीकं यजेद्देवं गुरुं निर्वाणदायकम् ।
तस्य सङ्गं परित्यज्य कथमात्मनियोजनम् ।।३३।।

श्रीचण्डिका बोलीं– गृहस्थ (पति–पत्नीयुक्त) गुरु का ही वरण करना चाहिये जो निर्वाण दे सके। गुरु सङ्ग छोड़ने से सारा कहा हुआ स्वयम् से ही निकल जाता है ।।३३।।

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गुरोराज्ञानुसारतः ।
धारयेत्तेजसं भक्त्या स्वयं लिप्साविवर्ज्जिता ।।३४।।

श्रीशङ्कर जी बोले– हे देवि ! सुनो, गुरु के आज्ञानुसार अपने सभी प्रकार के व्यसनों एवं इच्छाओं को त्यागते हुए भक्तिपूर्व तेज को धारण करना चाहिये ।।३४।।

गुरुपुत्रपूजनप्रशंसा, एकाधिकगुरुपुत्रपूजननिषेधश्च

गुरुपत्न्याश्चात्मजश्च श्रीगुरोरात्मजो यतः ।
गुरुपत्नी गुरुः साक्षाद् गुरुपुत्रो न संशयः ।।३५।।

गुरुपत्नी से उत्पन्न पुत्र ही गुरुपुत्र होता है और गुरुपत्नी तथा गुरुपुत्र भी साक्षात् गुरु के समान ही होता है इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं ।।३५।।

एकस्य पूजनात् कान्त उभयोः पूजनं भवेत् ।
गुरुपुत्रो गणेशश्च गुरुपुत्रः षडाननः ।।३६।।

एक ही पूजन से समस्त पूजन पूर्ण हो जाता है जिस प्रकार से गणेश या षडानन गुरुपुत्र हैं उनमें से या गणेश रूप में पूजन करें या चाहे षडानन के रूप में पूजन करें ।।३६।।

गुरुपुत्रपूजनस्यावश्यकर्त्तव्यता, पूजने दोषश्च

एकं गुरुसुतं कान्ते पूजने या सदा रता ।
अन्यं गुरुसुतं कान्ते पूजयेन्न कदाचन ।।३७।।

हे सुन्दरी ! केवल एक ही गुरुपुत्र का पूजन करना चाहिये। दूसरे गुरुपुत्र का पूजन कभी भी नहीं करना चाहिय ।।३७।।

वीरं वा दिव्यमूर्त्तिं वा कदाचिन्न हि पूजयेत् ।
एकस्य पूजनाद्देवि महासिद्धीश्वरो भवेत् ।।३८।।

एक ही भाव से, दिव्यभाव या वीरभाव से पूजन करें । हे देवि ! एक ही प्रकार के पूजन से सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ।।३८।।

उभयोस्त्रीणि चत्वारि या नारी पूजनञ्चरेत् ।
तस्याः समस्तं विफलं ध्यानादि-जप-पूजनम् ।।३९।।

उभयलिङ्गी या चतुर यानि कि दगा करने वाली स्त्री की पूजा से साधक का समस्त पूजा, ध्यान और उपासना आदि कर्म सभी निष्फल चले जाते हैं ।।३९।।

यदि भाग्यवशाद्देवि एकं गुरुसतुं लभेत् ।
मनोज्ञं शास्त्रवेत्तारं निग्रहानुग्रहे रतम् ।।४०।।
सुन्दरं यौवनोन्मत्तं गुरुतुल्यं जितेन्द्रियम् ।
प्राणान्तेऽपि च कर्त्तव्यं पूजनं मोक्षदायकम् ।।४१।।
नो यजेद्यदि मोहेन सैव पापमयी भवेत् ।।४२।।

इति श्रीमातृकाभेदतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे चतुर्दशः पटलः ।।१४।।

यदि सौभाग्य से एक ही गुरुपुत्र हो और वह सभी शास्त्रों में निपुण हो तथा अनुग्रह एवम् विग्रह से मुक्त हो इसके साथ ही युवा और सुन्दर होकर भी जितेन्द्रिय हो तो उसका जीवनपर्यन्त पूजन करना चाहिये । उसके पूजन से मोक्ष की प्राप्ति होती है । यदि साधक मोहयुक्त होकर यदि ऐसा नहीं करता है तो वह अवश्य ही पापं का भागी होता है ।।४०-४२।।

इस प्रकार शिवपार्वती संवादरूप में मातृकाभेदतन्त्र का
चौदहवाँ पटल समाप्त ।।१४।।

◆

शक्तिरूपीगुरुस्तोत्रम्

नमस्ते देवदेवेशि नमस्ते हरपूजिते ।
ब्रह्मविद्यास्वरूपायै तस्यै नित्यं नमो नमः ।।१।।
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
यया चक्षुरुन्मीलितं तस्यै नित्यं नमो नमः ।।२।।
भवबन्धनपारस्य तारिणी जननी परा ।
ज्ञानदा मोक्षदा नित्या तस्यै नित्यं नमो नमः ।।३।।
श्रीनाथवामभागस्था सदा या सुरपूजिता ।
सदा विज्ञानदात्री च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।४।।
सहस्रारे महापद्म सदानन्दस्वरूपिणी ।
महामोक्षप्रदा देवी तस्यै नित्यं नमो नमः ।।५।।
ब्रह्मविष्णुस्वरूपा च महारुद्रस्वरूपिणी ।
त्रिगुणात्मस्वरूपा च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।६।।
चन्द्रसूर्याग्निरूपा च सदाऽऽघूर्णितलोचना ।
स्वनाथञ्च समालिङ्ग्य तस्यै नित्यं नमो नमः ।।७।।
ब्रह्म-विष्णु-शिवत्वादि जीवन्मुक्तिप्रदायिनी ।
ज्ञानविज्ञानदात्री च तस्यै नित्यं नमो नमः ।।८।।
इदं स्तोत्रं महेशानि यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
स सिद्धिं लभते नित्यं सत्यं सत्यं न संशयः ।।९।।
प्रातःकाले पठेद्यस्तु गुरुपूजापुरःसरम् ।
स एव धन्यो लोकेऽस्मिन्देवीपुत्र इव क्षितौ ।।१०।।

इति शक्तिरूपीगुरुस्तोत्रम् ।

नोट : भक्तिपूर्वक जो इस पाठ को करता है, वह सिद्धि को प्राप्त करता है, नित्यप्रति प्रात:काल गुरुपूजा कर इस स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करता है, वह देवी-पुत्र के समान पृथ्वी पर विचरण करता है ।

शक्तिरूपीगुरुकवचम्

क्लीं बीजं मे शिरः पातु तदाख्यातं ललाटकम् ।
क्लीं बीजं मे चक्षुषोः पातु सर्वाङ्गं म सदाऽवतु ।।१।।
ऐं बीजं मे मुखं पातु ह्रीं जङ्घां परिरक्षतु ।
श्रीं बीजं स्कन्धदेशं मे वाग्भवं मे भुजद्वयम् ।।२।।
हकारं मे दक्षभुजं क्षकारं वामहस्तकम् ।
क्षमर्णौ तदधः पातु लकारं हृदयं मम ।।३।।
रकारं पृष्ठदेशञ्च रकारं दक्षपार्श्वकम् ।
जूङ्कारं वामपार्श्वे तु सकारं मेरुमेव तु ।।४।।
मकारं चाङ्गुलीः पातु लकारं मे नखोपरि ।
वकारं मे नितम्बञ्च रकारं जानुयुग्मकम् ।।५।।
यीःकारं पादयुगलं ह्सौः सर्वाङ्गमेव तु ।
ह्सौः लिङ्गञ्च लोमञ्च केशञ्च परिरक्षतु ।।६।।
ऐं बीजं पातु पूर्वे तु ह्रीं बीजं दक्षिणेऽवतु ।
श्रीं बीजं पश्चिमे पातु उत्तरे भूतसम्भवम् ।।७।।
श्रीं पातु चाग्निकोणे च तदाख्यां नैर्ऋतेऽवतु ।
देव्यम्बा पातु वायव्यां शम्भोः श्रीपादुकां तथा ।।८।।
पूजयामि तथा चोर्ध्वं नमश्चाधः सदाऽवतु ।
इति ते कथितं कान्ते कवचं परमाद्भुतम् ।।९।।
गुरुमन्त्रं जपित्वा तु कवचं प्रपठेद्यदि ।
स सिद्धः सगणः सोऽपि शिवः साक्षान्न संशयः ।।१०।।
पूजाकाले पठेद्यस्तु कवचं मन्त्रविग्रहम् ।
पूजाफलं भवेत्तस्य सत्यं सत्यं सुरेश्वरि ।।११।।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद्देवि स सिद्धो नात्र संशयः ।।१२।।
भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ।।१३।।
विवादे जयमाप्नोति रणे च निर्ऋतिरिव ।
सभायां जयमाप्नोति मम तुल्यो न संशयः ।।१४।।

सहस्रारे भावयं स्तां त्रिसन्ध्यं प्रपठेद्यदि ।
स एव सिद्धो लोकेशो निर्वाणपदमीहते ।।१५।।
समस्तमङ्गलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन ।।१६।।
देयं शिष्याय शान्ताय चान्यथा पतनं भवेत् ।
अभक्तेभ्योऽपि देवेशि पुत्रेभ्योऽपि न दर्शयेत् ।।१७।।
इदं कवचमज्ञात्वा दशविद्याश्च यो जपेत् ।
स नाप्नोति फलं तस्य परे च नरकं व्रजेत् ।।१८।।

इति शक्तिरूपीगुरुकवचम् ।

मातृकाभेदतन्त्रस्य मातृकानुसारिणी श्लोकानुक्रमणिका

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
अ
अकस्माद् वै महासिद्धि १०८
अग्राह्यं तव निर्माल्य २२
अङ्गुल्यामङ्गुरी देया ८६
अजिह्वान्ता कुण्डलिनी ११५
अज्ञानतिमिरान्धस्य ५३
अत एव महेशानि २३, ७६
अत एव हि देवेशि २१
अतिस्नेहेन देवेशि ४४
अथ ग्रन्थिं द्रवक्ष्यामि १०८
अथवा धारयेत् सूत्रं ९०
अथवा परमेशानि ३१, ३३ ९०
अथवापि च ग्रीवाया ९०
अथर्वी धारयेद् यज्ञ ९०
अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ५०,६९,९२,९५
अनेनैव विधानेन ८८, ११३
अन्यत् सर्वं समानं हि ८७
अन्यथा तु स्वदेहस्य ११८
अन्यथा विफला पूजा ९४
अन्यस्य यजनाच्चण्डि ११९
अपरे परमेशानि ११
अभक्तिश्चाक्षरे भ्रान्तिः १००
अभक्त्या नैव सिद्धिः स्यात् १०१
अभक्त्याः परमेशानि ११९
अभावे पूजयेद् देवीं ८४
अलक्तकयुतं वापि ३०
अलङ्कारं यथायोग्यं ४२
अलङ्कारं यथाशक्ति ६७
अलङ्कारविचित्रैश्च ७२

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
अवश्यं पञ्चतत्त्वेन ४४
अवश्यं लभते शान्तिं ४६
अशीतितोलकं मानं ५
अश्वमेधसहस्रेण ८८
अष्टोत्तरशतं मूल ५८
अस्य पुष्पस्य माहात्म्यं ११
आ
आत्मोच्छिष्टं महापूतं ११७
आदावृष्यादिसूत्रेण ४४
आधारभेदे यत् पुण्यं ९६
आनीय पारदं देवि ३२
आनीय बहुयत्नेन ५
आम्रपुष्पं तद्द्विगुणं ६
आलिङ्गाग्रमधोनालं १६
आवाहनं ततो मुद्रां ४४
इ
इति ते कथितं कान्ते १५,१७,२८,९४
इति ते कथितं देवि ११८
इदं कवचमज्ञात्वा ५७
इदं स्तोत्रं महेशानि ५४
इदानीं स्त्रीगुरोः स्तोत्रं ५२
इमं मन्त्रं महेशानि ६८
ई
ईशकुम्भे यजेद् देवी ८४
उ
उत्सृष्टादिविचारोऽपि ११७
उभयोस्तुल्यशुक्रेण १०
उभयोस्त्रीणि चत्वारि १२१
उष्णीषञ्च ततो दद्यात् ८६

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः

उद्यतां पदमुच्चार्य्यं ७

ऊ

ऊर्मि दद्यात् पीतवस्त्रं ६९
ऊर्ध्वनालं सहस्रारे १६

ए

एकं गुरुसुतं कान्ते १२०
एकया दूर्व्वया वापि ९९
एकस्य पूजनात् कान्ते १२०
एकेन तण्डुलेनैव ९९
एकैव हि महाविद्या १००
एतच्छ्रुत्वा ततो देवि १२
एतत्तत्वं प्रयत्नेन ४१
एतत्तु गुटिकां कृत्वा ६
एतदन्यतरं कुम्भं ७३
एतद्विघ्नादिकं नाथ ६६
एतन्मध्ये महाज्ञानं २३
एतन्मध्ये महेशानि ९
एतन्मन्त्रं महेशानि ३६
एतत् सङ्केतमज्ञात्वा ९१
एतत् सुगुप्तभेदं हि ४१
एवं कृते ब्रह्मरूपः १४
एवं कृते महासिद्धिं ४३
एवं कृते महेशानि ४९
एवं कृते लभेच्छान्तिं १०६
एवं कृते वह्नियोगे ३४
एवं क्रमेण देवेशि ६३
एवं ध्यात्वा महेशानि ५९
एवं प्रयोगं देवेशि ७५
एवं हि वरयेद् देवि ७१

ऐ

ऐँ बीजं पातु पूर्वे तु ५५
ऐँ बीजं मे मुखं पातु ५५

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः

क

कथने मृत्युमाप्नोति १०१
कथयस्व कृपानाथ ६५
कथं वा जायते पुत्रः ८
कम्पनं धूननं शब्दं ११०
कम्पने यो जपेन्मन्त्रं १११
कम्पने सिद्धिहानिः स्याद् १११
करभ्रष्टे तथा च्छिन्ने ११२
करीषकेण देवेशि ७४
कारणं दुग्धरूपं वा ६
कारणं देवदेवेशि २६
कारणेन महामोक्षं २२
कारणेन विना देवि २५
कारणे निवसेद् देवि २७
कारागारगते देवि ४३
कालिकायाश्च सुन्दर्य्या १०८
कालीदेहाद् यदा जाता ९९
कालीबीजयुगं देवि ४१
किं तस्य ध्यानपूजायां ८१
किञ्चिदुष्णं प्रकर्त्तव्यं ७०
किञ्चिद्रोगादिसम्भूते ११
किमाधारे यजेच्छम्भुं ६५
कुम्भयुग्मं स्थापयित्वा १०३
कुम्भस्थापनकं कृत्वा १११
कुलशक्तिः कामिनी च ११८
कुशाग्रमान यत्तोयं ९८
कूपादिकं महादेव ८३
कूर्च्चबीजं समुच्चार्य्य ५७
कृष्णवर्णं रेणुयुतं ७५
केनोपायेन देवेश ३
केवलं बलिदानेन ८०
केवलं श्रवणेनैव ८१
कैलासशिखरे रम्ये ३

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
कैलासे निवसेन्नित्यं	८८
क्लीं बीजं मे शिरः पातु	५४
ग	
गङ्गा तु कारणं वारि	२६
गङ्गयां ज्ञानतो मोक्षं	२४
गङ्गासागरतोयं वा	११७
गङ्गास्पर्शनमात्रेण	२७
गङ्गास्पर्शे तथा देवि	२७
गङ्गास्पर्शेन देवेश	२६
गन्धहीनं भवेन्मद्यं	७
गलिते परमेशानि	१०
गानेन तुम्बुरुः साक्षात्	३६
गुञ्जाप्रमाणं तद् द्रव्यं	६, ३६
गुप्तभावार्थयद्वाक्यं	२४
गुप्तरूपा महाविद्या	९९,१००
गुरवे दक्षिणां दद्याद्	३२
गुरुणा तत्सुतेनैव	१०२, १०३
गुरुणा लक्षजापेन	१०३
गुरुपत्न्याश्चात्मजश्च	१२०
गुरुमन्त्रं जपित्वा तु	५६
गुरुवक्त्रान्महामन्त्रो	७७
गुरुं वा गुरुपुत्रं वा	८६
गुर्वादिभावनाद् देवि	७७
ग्रन्थि मध्ये च गुटिकां	११०
ग्रहपीडादि सञ्जाते	४९
घ	
घृतनारीरसेनैव	३३
घृतयुक्तं तथा दीपं	३०
च	
चक्रभेदेन षट्कोणं	१०३
चतुरङ्गुलिविस्तारं	३०
चतुरशीतिलक्षेषु	२३
चतुरस्रादिकं देवि	१६

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
चतुर्गुणं हि कर्त्तव्यं	१०४
चतुर्वेदेन साङ्गेन	८१
चतुर्हस्तप्रमाणञ्च	८७
चन्द्रसूर्य्याग्निरूपा च	५३
चामुण्डाया महामन्त्रं	४१
चीनतन्त्रानुसारेण	४
छ	
छिन्नसूत्रे भवेन्मृत्यु	१११
ज	
जन्मस्थानं महायन्त्रं	९४
जीवस्य भोजनं देवि	१४
ट	
टङ्कनमानयेद् धीमान्	६
त	
ततः परस्मिन् दिवसे	६८,६८,७२
ततः परीक्षा कर्त्तव्या	५,३६
ततो निर्माय तं लिङ्गं	६९
ततोऽपि यदि नैवाभूत्	१०३
ततोर्यघ्रिं समुच्चार्य	८७
ततश्च वत्समानीय	७४
ततश्च हेलकीमन्त्र	७४
ततश्चाष्टाक्षरं मन्त्र	५२
ततस्तु दक्षिणा कार्य्या	७३
ततस्तु पूजयेद् देवीं	५९
तत्क्षणाच्छिवरूपोऽसौ	१८
तत्क्षणे हि विजानीयात्	४६
तत्पत्रेण भवेत् पुष्पं	९
तत्र यद् यत् कृतं सर्व्व-	४०
तत्रैव प्रजपेन्मन्त्रं	५
तथा च श्रीगुरोर्ध्यानं	४१
तथा सामुद्रकेणैव	४
तथैव तुलसी देवी	२५
तथैव मद्यपानेन	१९

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
तथैव वारुणीं ध्यायेत् ११७
तथैवोच्चारणेनैव ७८
तदन्नस्य च दानेन ९८
तदा चानेन मनुना १४
तदूर्द्धे परमेशानि ७३
तदेवौषधयोगेन ६८
तद्दशांशं हुनेत् पश्चात् १०३, १०४
तन्मुखे दानमात्रेण ११७
तर्पणं च ततः कृत्वा ४४
तस्माद् भोगं सदा कार्य्यं १३
तस्मादुत्तोल्य तं लिङ्गं ६२
तस्मादेव स्तनद्वन्द्वं ८
तस्य शक्तेर्मनुं पश्चात् ५१
ताम्बूलञ्च तथा मत्स्यं ६७
तारायाश्च जपेन्मन्त्री १०७
तारिणी ब्रह्मणः शक्ति- ९९
तिथिगोत्रञ्चामुकोऽहं ८५
तिथिनक्षत्रयोगेन ४०
तृतीये दिवसे शक्तिं ७६
तोडलोक्तेन विधिना ६७
तोढद्वयं बाहुयुग्मे ७१
तोये तोयं यथा लीनं १८
त्याज्यं द्रव्यं कथं देवि ८१
त्र्यम्बकेण स्थापयित्वा ६१
त्रिकोणं पादजातस्य १६
त्रिपुरा त्रिविधा देवि ५०
त्रिपुरापूजनं नाथ ३
त्रिमध्वक्तेन देवेशि ८५
त्रिमध्वक्तेन विधिना १११
त्रिसन्ध्यं यः पठेद् देवि ५६

द

दक्षिणाविहीना यज्ञाः ७३
दरिद्रः परमेशानि ११२
दिव्यवीरमते दृष्टि- ११५
दीर्घिकाञ्च पुष्करिणीं ८८
देयं शिष्याय शान्ताय ५७
देवतायाः शरीरञ्च ७७
देवतायै नमः पश्चाद् ८५
देवानाममृतं ब्रह्म २०
दृष्टिमात्रेण जप्तव्यं ४०
द्रवीभूते च ताम्रे च ३६
द्वात्रिंशदङ्गुलीमानं ७३
द्वादशं पार्थिवं लिङ्ग- ६६
द्वादशाहं यजेद् धीमान् ३१
द्विगुणं पूजनं तत्र ९४
द्विजातेर्दिव्यभावश्च ११५

ध

धननाशो भवेन्नित्यं ११९
धुस्तूरञ्च समानीय ३३
धेनुसन्तरणेनैव ८७
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि ४७
ध्यानमेतच्चण्डिकायाः ४७
ध्यायेच्च सुन्दरीं देवीं ५८

न

नमस्ते देवदेवेशि ५३
नमोऽन्तेन तु देवेशि ४५
नराकृतिं गुरुं नाथ ७७
नानाव्याधिगते वापि ३८
नाभिपद्मन्तु यद्रूपं ९
निजेष्टदेवतारूपा ११४
निर्माणयोग्यं तत्रैव ६९
निर्वाणविषये देवि २४
निवेदनान्महादेव्यै ११६
निशाकरे तथा नाथ ३९
नैव मुक्तिर्भवेत् तस्य ११६

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
नैवेद्यं विविधं रम्यं	१०५
नो यजेद् यदि मोहेन	१२१
प	
पञ्चवक्त्रेण देवेशि	४६
पञ्चाक्षरं पञ्चवक्त्रं	५९
पञ्चामृतेन देवेशं	३०
पतिपूजां विना पूजां	५९
पशुदानं विना देवि	७९
पशुप्रदाने वाक्यं तु	७८
पशुशब्दं योजयित्वा	७९
पादस्पर्शो न दोषाय	११८
पापयुक्तो हि चाण्डालो	२३
पारदं तोलकं मानं	७५
पारदं भस्मनिर्माणं	२९
पारदं शिवबीजं हि	६६
पारदस्य च माहात्म्यं	१६
पारदस्य शतांशैकं	६५,६४
पारदे भस्मनिर्माणे	२९
पारदे वाथ गङ्गायां	६०
पारदे शिवनिर्माणे	६६
पाषाणे शिवपूजायां	९५
पुनश्च लेपयेद् धीमान्	३३
पुनस्तोलकमानं हि	७४
पुरुषं सप्तमं कान्ते	८८
पुरुषस्य तु यच्छुक्रं	१०
पुरुषस्य यथायोग्यं	६७
पुष्पञ्च मेरुसदृशं	९८
पुष्पयन्त्रे महेशानि	९३
पुष्पं गन्धं जलं द्रव्यं	९८
पुस्तिकायां सहस्रन्तु	९२
पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां	९२
पूजनाद्धारणाद् देवि	६३
पूजयामि तथा चोर्ध्वं	५६

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
पूजयेच्चण्डिकां देवीं	४४
पूजयेत् पार्थिवे लिङ्गे	६०
पूजयेद् बहुयत्नेन	८५
पूजाकाले पठेद् यस्तु	५६
पूजान्ते प्रजपेत् पश्चात्	६७
पूर्णब्रह्ममयी देवि	२४
पूर्णलिङ्गं महेशान	६४
पूर्णलिङ्गं महेशानि	६४
पूर्णशस्येन देवेशि	८९
पूर्णाहुतिं ततो दत्त्वा	८५
प्रकुर्याद्बहुयत्नेन	१०३
प्रजपेत् परमेशानि	३५
प्रणवञ्च समुद्धृत्य	४५
प्रणवादि नमोऽन्तेन	४५
प्रणवेन महेशानि	४८
प्रतिग्रासे परेशानि	१४
प्रतिमायाश्च पुरतो	९३
प्रत्यहं परमेशानि	३२,३६,४३
प्रत्यहं प्रजपेन्मन्त्रं	११२
प्रत्येकं पूजयेन्मन्त्रं	१०५
प्रभाते शुक्लवर्णाभां	५९
प्रसादभोगी यो देवि	११६
प्राणायामं ततः कृत्वा	४५
प्रातःकाले पठेद् यस्तु	५४
प्रातरुत्थाय मन्त्रज्ञः	५०
प्रासादं मण्डपं वापि	८३
ब	
बलिदानं प्रकर्त्तव्यं	७९
बलिदानं महायज्ञं	८०
बहु किं कथ्यते देवि	२१,४९
बहुजापात् तथा होमात्	१०२
बाह्यकुण्डं बाह्यहोमे	१७
बाह्यदेशे चाष्टपत्रं	९
बाह्यहोमे काम्यसिद्धि-	१७

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
बिन्दुवेदान्तपर्यन्त-	५
बुद्बुदा यत्र तिष्ठन्ति	११
ब्रह्मग्रन्थियुतां मालां	१०९
ब्रह्मरूपमिदं तन्त्रं	८१
ब्रह्मविष्णुशिवत्वादि	५४
ब्रह्मविष्णुस्वरूपा च	५३
ब्रह्माणं न हि कर्त्तव्यं	८६
ब्रह्माण्डमध्ये ये देवा-	९८
ब्राह्मणस्य महामोक्षं	१८
भ	
भग्नैकविल्वपत्रस्य	९७
भद्राभद्रविचारञ्च	११९
भर्त्तरि विद्यमाने तु	३४
भवबन्धनपारस्य	५३
भस्मप्रकारं देवेशि	७१
भीतियुक्ता ह्यहं नाथ	८
भुज्यते कुण्डली देवी	१४
भूतबीजं समुच्चार्य	५२
भूरसीत्यादिमन्त्रेण	८७
भूर्जे विलिख्य गुटिकां	५६
भोगस्तु त्रिविधो देवि	११४
भोगेन लभते योगं	१३
भोग्यद्रव्यं जले दद्याद्	१०५
भोजनेच्छा भवेत्तस्मात्	१३
म	
मकार चाङ्गुलीः पातु	५५
मणिपूरं महापद्मं	८
मणिपूरस्य बाह्ये तु	१६
मणौ स्थिते महेशानि	९३
मद्यपाने महापुण्यं	१८
मध्यनालं सुषुम्णान्तं	८
मन्त्रच्छन्नं चाष्टविधं	१०२
मन्त्रच्छन्नाद् वातुलत्वं	१००
मन्त्रत्रयं सदा पाठ्यं	२०
मन्त्रधारणमात्रेण	१००, ११४
मन्त्रेण शोधितं द्रव्यं	१५
मया सार्द्धं महेशानि	११
मरणं नैव पश्यामि	३६
महापातकयुक्तोऽपि	२४
महाबलो महावीर्य्यो	३७
महामन्त्रं श्रुतं नाथ	५०
महामोक्षं ब्राह्मणस्य	१७
महारोगे महादुःखे	४८
महाशङ्खाख्यमालायां	२७
महाशङ्खे वसेन्नित्यं	२७
महिषादि प्रदातव्यं	७९
मायाबीजं समुच्चार्य	८६
मालायाश्चाधिका कान्ते	१०९
मालायां त्वधिका देवि	११०
माहात्म्यं तस्य पाठस्य	४६
मुक्तिधाराजलेनैव	३३
मुक्तिभागी भवेन्मर्त्यः	११७
मुक्तिमार्गमिदं देवि	२१
मूलमन्त्रं समुच्चार्य	१४
मूलाधाराच्च तां देवी-	१४
मूलाधारे तु या शक्ति-	१३
मृगे महिषे चोष्ट्रे च	७८
मृते भर्त्तरि देवेशि	३५
मृत्तिकातोलकं ग्राह्य-	६२
मेरुञ्च ग्रथनं कुर्यात्	११०
मेरुतुल्यं सुवर्णन्तु	८६
य	
यच्चाक्षुषं महादेव	७८
यजुशां सूत्रमाणं हि	९०
यज्ञसूत्रधारणेन	८९
यज्ञसूत्रस्य यन्मानं	८९

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
यज्ञावशेषभोगेन	८१
यथा ज्योतिर्मयं लिङ्गं	६४
यथैव मालिकामध्ये	२५
यदि भाग्यवशाद्देवि	१२१
यदि मूर्त्तिं प्रकुर्यात् तु	९४
यदि मृत्युर्भवेत् तस्य	१०४
यन्त्रनिर्माणयोग्यं हि	४२
यन्त्राधिष्ठातृदेवांश्च	९३
यन्त्रे लक्षगुणं पुण्यं	९२
यन्त्रोक्तं सर्वतन्त्रेषु	३
यस्य भक्तिर्महाशङ्के	२८
या चण्डी मधुकैटभादि-	४७
या चाद्या परमा विद्या	३८
यीः कारं पादयुगलं	५५
येन होमप्रसादेन	१६
यो यजेत् पारदं लिङ्गं	६५
र	
रकारं पृष्ठदेशञ्च	५५
राजदण्डे च देवेश	३८
राजपत्नी येन तुष्टा	१०५
रात्रौ तु पञ्चतत्त्वेन	४२
राहुः शिवः समाख्यात-	४९
राहुश्चाण्डालो विख्यातः	३८
रुद्रोपरि क्षिपेद् यत्तु	९८
रेफं शिवं दकारञ्च	६५
रोगेभ्यो घोररूपेभ्यः	४३
रौप्यञ्च स्वर्णलिङ्गञ्च	६१
ल	
ललाटे चुम्बने चाग्नि-	३९
लिङ्गप्रमाणं देवेश	६२
लुप्तवर्णे बुद्धिनाश-	१००
व	
वक्त्रयसमायुक्तं	८
वत्सरान्ते प्रदातव्यं	८०

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
वद ईशान सर्वज्ञ	८, ३८
वद मे परमेशान	११६
वरयेत् कर्मकर्त्तारं	२९
वरं जनमुखान्निन्दा	११९
वराहवत्समानीय	७४
वर्त्तुलं बाहुजातस्य	१६
वस्त्रयुक्तेन सूत्रेण	५
वस्त्रयुग्मं पट्टसूत्र-	७१
वह्निस्थिते महेशानि	७४
वाग्बीजञ्च महामायां	५१
वाग्भवेनेन्दुसदृशां	५८
वामनेत्रे चुम्बने तु	३९
वारत्रयं पठेद्देवि	४८
वाराणसी कामरूपं	२७
वालुकानिर्मिते लिङ्गे	६०
वालुकायां काम्यसिद्धि-	९६
विधानं देवदेवेश	३२
विपरीतं महामन्त्रं	४७
विप्ररूपेण देवेन	१०१
विवर्णं जायते द्रव्यं	३४
विवादे जयमाप्नोति	४३,५६
विवाहहिता कन्या	३४
विवाहितायाः कन्यायाः	३५
वीरं वा दिव्यमूर्त्ति वा	१२१
वेदमाताजपेनैव	१९
वेदोक्तञ्चैव स्मृत्युक्तं	८७
वैष्णवे तुलसीमाला	१०७
व्योमबीजं शिवान्तञ्च	६८
श	
शक्तेर्यथा विधेयं स्याद्	४२
शक्तेः ललाटके नेत्रे	३९
शङ्खनिधिं पद्मनिधिं	४५
शत्रुभिर्दीयते यत्तु	१५

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
शब्दब्रह्ममयं देवि ७८
शम्भुनाथेन देवेशि ३९
शर्करासंयुतं कृत्वा ३०
शिवं मत्वा स्वकान्तञ्च ११८
शिवं बह्निसमारूढं ७
शिलादौ परमेशानि ६३
शिलायन्त्रे तुलस्यादौ २७
शिवशक्तिसमायोगः ४०
शिवशक्तिसमायोगात् ४०
शिवस्य पूजनाद् देवि ९६
शुद्धाशुद्धविचारोऽपि ९७
शृणु चार्वङ्गि सुभगे ९,१०,३८,३९,४१
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि ३,२३,५२,८३,११८,१२०
शृणु नाथ परानन्द १५,६४,१०७
शृणुमन्त्रं प्रवक्ष्यामि ४७
श्रीगुरोरानन्दनाथान्ते ५१
श्रीगुरोस्तेजसं भक्त्या ११९
श्रीनाथवामभागस्था ५३
श्रीपादुकां समुच्चार्य्य ५२
श्रीं पातुं चाग्निकोणे च ५५
श्मशानसाधनं वक्ष्ये १०४
श्मशाने धुस्तुरैर्मालां १०८

ष

षडक्षरं महामन्त्रं ३१, ७२
षोडशेनोपचारेण २९,४७
षोडशैरुपचारैस्तु १०५

स

सत्यं सत्यं सर्वकुष्ठं ७५
सत्ये चैकन्तु त्रेतायां ५
सदक्षिणं व्रतं सर्वे ८९
सदा भयञ्च कापठ्यं ११९

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
सदा वातुलवत् सर्वं १०२
सन्ध्यायाः कीदृशं ध्यानं ५८
सपत्नीकं यजेद् देवं १२०
स पूतः सर्वपापेभ्यो ८१
सप्तक्रोशं वह्निमध्ये ३५
सप्तशतीमहास्तोत्रस्य ४६
सप्ताहं पूजयेद् देवि ४२
स ब्रह्मवेत्ता स धनी ६५
समस्तमङ्गलं नाम ५७
समाच्छाद्य प्रयत्नेन ७५
समाप्तं कवचं देवि ५७
समाप्ते तु विलोमेन ४६
सर्पाकारा कुण्डलिनी १५
सर्वजातिषु निर्वाणं २४
सर्वत्राहं श्रुता नाथ १३
सर्वदेवस्य मालायां १०९
सर्वप्रकाशकं मन्त्र- ७५
सर्वयज्ञाधिपो विप्रः १८
सर्वसिद्धीश्वरो रौप्ये ९६
सर्वाङ्गे वै भवेज्ज्वाला १०२
सहस्रसंख्या देवि ७२
सहस्रारे भावयंस्तान् ५७
सहस्रारे महापद्म ५३
सहस्रावृत्तिपाठेन ४७
सहस्रैकं हुनेत् पश्चात् ११३
संयुक्तं कुरुते यत्र १९
संस्कारेण विना देवि ६१
संस्थाप्य पारदं देवि ३३
साक्षाद्धोमो महेशानि ९८
साक्षाद् ब्रह्ममयी माला २६
साक्षात् ब्रह्ममयी देवी ११९
साङ्गे जाते तु माहात्म्ये ४६
सामगस्य यत्रसूत्रं ९०

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
सामान्यतोयमानीय ९९
सामिषान्नं प्रदातव्यं ४३
सायाह्ने शक्तिरूपाञ्च ५८
सायुज्यादि महामोक्षं १९, ११५
सावर्णिः सूर्यत्यादि ४८
साष्टसहस्रं देवेशि ३३
सार्द्धेन तोलकं ताम्रं ६
सुन्दरं यौवनोन्मत्तं १२०
सुप्रभां विजयां सर्व- ४५
सुरास्त्वादीन् समुच्चार्य ८५
सुवर्णं चम्पकाकारं ६८, ८५
सुवर्णमौक्तिकयुतं ७१
सूक्ष्मसूत्रे यथा वह्नि- १९
स्तुतिश्च कवचं नाथ ५२
स्तोत्रं समाप्तं देवेशि ५४
स्त्रियः स्वभावचपला ६५
स्त्रीगुरोः कवचस्यास्य ५४
स्थिरमायां महामायां ४८
स्नापयित्वा कुम्भतोयैः ८७
स्फाटिकी सर्वदेवस्य १०८

श्लोकाः पृष्ठाङ्काः
स्फाटिके सर्वसिद्धिः स्यात् ९६
स्वपुष्पसंयुते ६९
स्वर्गभोगो भवत्येव ११५
स्वर्णपीठं प्रदातव्यं १०५
स्वर्णपुष्पसहस्रेण ९७
स्वर्णासनेन संस्थाप्य ७२
स्वप्नेऽपि मन्त्रकथने १०४
स्वयं नारायणः प्रोक्तो ९७
स्वयम्भु कीदृशं नाथ ३४
स्वीयेन परिधानेन ८६

ह

हकारं मे दक्षभुजं ५५
हविरारोपमात्रेण २१
हस्तद्वये महेशानि ६९
होम कर्माद्यशक्तश्चेद् ३२
होमयेत् परमेशानि ६७
होमयेद्बिल्वपत्रेण ७३
होमस्य द्रव्यं देवेशि ७२

क्ष

क्षत्रियस्य त्रयं देवि १७

मातृकाभेदतन्त्रस्य विशेषशब्दानां सूची

शब्दाः पृष्ठाङ्काः
अणिमादिविभूति ६५
अश्वमेध ८८
अष्टसिद्धिः १४, २७
आनन्दभैरव ५१
आज्ञाचक्र ९०
आम्रपुष्प ६
करीषके ६९, ७४
कामबीजं ४७
कारणं ६, २२, २६
कालीतन्त्र ४
कालीबीजं ४१
कुण्डपुष्प ३४
कुण्डगोल ३४
कुण्डलिनी १४
कुण्डलीमुखे १४
कुवेर ३२
कुलाचारे १८
कूर्चबीजं ४१, ५७
कृष्णाख्यतुलसी ३३
गजान्तकसहस्रकम् ३६, १०५
गुञ्जा ६, ३६
गुप्तसाधनतन्त्र ५१
गुरुपंक्ति ४५
गोलपुष्पं ३५
ग्रहणं ३९
घृतकुमारिका ३३
घृतनारी ३३
चण्डी ४४, ४५
चतुःषष्ट्युपचार ८४
चामुण्डा ४१
चीनतन्त्र ४

शब्दाः पृष्ठाङ्काः
जयां ४५
जीवन्यास ४५
झिण्र्टापत्र ६९
टङ्कनं ६
तारिणी ९९
तुम्बुरुः ३६
तोडल २९, ६०, ६७
त्रिपुरा ३, ५०, ५९
धनदां ३१
धुस्तूर ३३
नन्दिनीं ४५
नाभिपद्मं ८, १६
नालं ८
नित्यातन्त्रं ५०
निर्ऋति ५६
पद्मनिधिं ४५
परिवारान् ४५
पशु ४१, ११२
पशुभाव ७९
पशुसङ्कटे १५
पुष्पं ९
पुस्तिका ९२
पञ्चतत्त्व ४२, ४४, ४५, ४८
पञ्चाशद्वर्ण २७
प्रभां ४५
प्राणमन्त्रं ५७
बाला ५०
बाह्यकुण्डं १७
बाह्यपूजा १३
बाह्यहोमे १७
बिन्दुवेदान्त ५

शब्दा: पृष्ठाङ्का:
बिन्दुस्थानं ९,११
बिन्दुरूपिणी ५८
बुद्बुदा ११
ब्रह्माकंदि ४५
भावसिद्धि: ७७
भूतबीजं ५२
भैरव ३
भैरवी ५०
मणिपूरं ८, १६
मदनात्मिका ५८
मन्त्रं ५१, ५
मन्त्रच्छत्र १००, १०२
मलयजं ३०
महाङ्कुशं १९
महातन्त्रं ८१
महापद्म ५३
महामायां ५१, ६
महामोक्षं १७
महाविद्या १००
महाशङ्ख २५, २६, २७
मायां ४५, ४७
मायाबीजं ४५
मुक्ति: १७
मूलाधार १३, १६
यज्ञसूत्र ८९
रुद्र ९८
वज्रं ३५
वज्र पुष्प ३४
वाग्बीजं ५१
वाग्भवबीजं ४७
वाग्भवा ५८
वामकेश्वरयामल ५०
वायुबीजं ६८
विजया ४५, ३०
शब्दानां पृष्ठाङ्का:
विशुद्धां ४५
विश्वेश्वर ७५
वृन्दा २६
वेदाद्यं ४७
वेदमाता १९
व्योमबीज ६८
शङ्खनिधिं ४५
शाकम्भरी ९९
शाम्भवीं ९९
शालग्राम ९२
शिवान्तं ६८
षडङ्ग ४५
षडङ्गधूपं ३०
षडङ्गन्यास ४८
सप्तक्रोश: ३५
सम्बल ४
सहस्रार ५७
सर्वकालोद्भवं ३४,३५
सर्वतन्त्र ३
सर्वप्रकाशकमन्त्र ७५
सर्ववन्द्यनवात्मकमन्त्र ५, ३२, ६८
सर्वसिद्धिदां ४५
सायुज्यं १७, १९
सारूप्यं १७
सालोक्यं १७
सुन्दरीं ५०
सुप्रभां ४५
सुषुम्णा ८
सौत्रामणी १८
स्वपुष्पं ३४
स्वयम्भु ३४
स्वयम्भुपुष्प ३३
हेलकीमन्त्र ७४
ज्ञानहोमे १७

मातृकाभेदतन्त्रस्य विशेषशब्दानां सूची

बसुराद्यं = क्लीं ह्रीं क्लीं

महामायां = ह्रीं

सुरादेवीब्रह्मशापविमोचन मन्त्र = ॐ वां वीं वूं वैं वौं वः ब्रह्मशापविमोचितायै सुरा देव्यै नमः ।

सुधादेवी शुक्रशापविमोचन मन्त्र = ॐ शां शीं शूं शैं शौं शः शुक्रशापविमोचितायै सुधादैव्यै नमः ।

अमृतदेवी कृष्ण शापविमोचिन मन्त्र = ॐ ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः कृष्णशापं विमोचयामृतं स्त्राव्य स्वाहा ।

षडक्षर मन्त्रम् = ॐ नमः शिवाय ।

नवाक्षर मन्त्रः = ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं क्लीं नमः ।

कालीबीजयुग्म मन्त्रः = क्रीं क्रीं हूं ।

अष्टाक्षर मन्त्रः = ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें ह्सौः ।

कूर्च्चबीजमन्त्रः = हूं ।

प्राणमन्त्रः = हंसः ।

पञ्चाक्षर मन्त्रः = नमः शिवाय ।

व्योमबीजमन्त्रः = हँ क्षँ कँ यँ यँ यँ हँ हँ हँ ।

त्र्यम्बकमन्त्रः = ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

प्रासादबीजमन्त्रः = हौं

कालीबीजमन्त्रः = क्रीं

भूरसीमन्त्रः = ॐ भूरसि भूमिरस्यादितिरसि· विश्वाधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳहः, पृथिवीं मां हिꣳसीः ।

❖

प्रमुख प्रकाशन

दुर्गासप्तशती। (प्रथम बार सात सौ श्लोकों के साथ)
सम्पादक—डॉ. ओमप्रकाशमिश्र, रघुनाथ दूबे

विलोमदुर्गासप्तशती। (प्रथम बार सात सौ [illegible] के साथ)
(इसमें माँ दुर्गा के विविध आयामों [illegible] संकलन हैं)
सम्पादक—डॉ. ओमप्रकाशमिश्र, [illegible]

मन्त्रप्रतिलोम-दुर्गासप्तशती। (पाठ [illegible] अर्गला-कीलक रात्रि[illegible] अपराजिता
विद्या प्रयोग परमदेवी सूक्तादि [illegible]पेता) आचार्य पं. शिव[illegible]मिश्र शास्त्री

दुर्गार्चनसृतिः अर्थात् दुर्गार्चनपद्धतिः [illegible]प्रकाशमिश्र शास्त्री

देवीनामविलासः। सम्पादक—आचार्य [illegible]न्द्रजी दूबे

बटुकभैरव उपासना। सम्पादक—डॉ. [illegible]काशमिश्र शास्त्री

ललिता सहस्रनाम। नामावली सहित। [illegible]क—डॉ. ओमप्रकाशमिश्र शास्त्री

वृहज्ज्योतिषसारः। हिन्दी टीका सहित। डॉ. दिनमणि पाण्डेय

सर्वानन्दकरणम्। हिन्दी टीका सहित। डॉ. कमलाकान्त शुक्ल

होरासारः। हिन्दी टीका सहित

कुण्डली-दर्पणः। (जन्मपत्री रचना की पहली पुस्तक)
हिन्दी-टीका सहित। अनूप मिश्र

अष्टाध्यायी सूत्रवृत्तिः। सम्पूर्णवार्तिक सहित। सम्पादक—डॉ. विष्णुदहाल 'विष्णुगुरु'

शाब्दिकप्रबन्धचन्द्रोदय। डॉ. रामचन्द्र द्विवेदी (उ.प्र. सरकार द्वारा पुरस्कृत)

शाब्दिकनये सम्बन्धस्वरूपम्। डॉ. श्रीकान्त पाण्डेय

वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी। बालमनोरमा संस्कृत टीका।
सम्पादक—डॉ. श्रीकान्ततिवारी 'सुशील'

वनस्पति सार संग्रह। (आयुर्विज्ञान की अनुठीकृति)। लेखक—श्री शिवनारायण पाठक

प्राप्ति-स्थान :

विश्वभारती संस्कृत संस्थान

(सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय पूर्वी गेट के सामने)
जगतगंज, वाराणसी – 221002
सम्पर्क सूत्र : 9450540135

designed by Shreyashi GRAPHICS, mo. 9839814784